राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

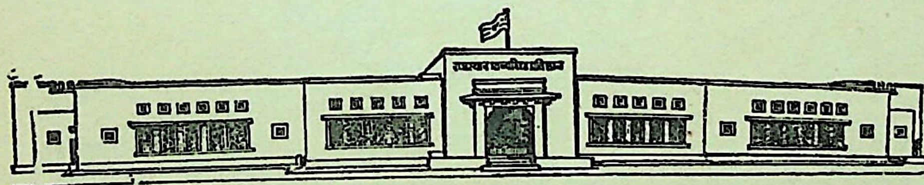
प्रधान सम्पादक – पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

[सम्मान्य सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

ग्रन्थाङ्क २८

महाकवि सुबन्धु विरचिता

वासवदत्ता कथा



प्र का श क

राजस्थान राज्य संस्थापित

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

RAJASTHAN ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE, JODHPUR

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान सम्पादक—पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

[सम्मान्य सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

ग्रन्थाङ्क २८

महाकवि सुबन्धु विरचिता

वासवदत्ता कथा

प्रकाशक

राजस्थान राज्य संस्थापित

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

RAJASTHAN ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE, JODHPUR.

जोधपुर (राजस्थान)

१९६६ ई०

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

राजस्थान राज्य द्वारा प्रकाशित

सामान्यतः अखिलभारतीय तथा विशेषतः राजस्थानदेशीय पुरातनकालीन
संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, राजस्थानी, हिन्दी आदि भाषानिबद्ध
विविधवाङ्मयप्रकाशिनी विशिष्ट-ग्रन्थावली

प्रधान सम्पादक

पद्मश्री मनीषी मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

सम्मान्य संचालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर;
ऑनरेरि मेम्बर ऑफ जर्मन ओरिएन्टल सोसाइटी, जर्मनी;
निवृत्त सम्मान्य नियामक (ऑनरेरि डायरेक्टर),
भारतीय विद्याभवन, बम्बई; प्रधान सम्पादक,
सिंघी जैन ग्रन्थमाला, इत्यादि

ग्रन्थाङ्क २८

महाकवि सुबन्धु विरचिता

वासवदत्ता कथा

प्रकाशक

राजस्थान राज्याज्ञानुसार

सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

१९६६ ई०

महाकवि सुबन्धु विरचिता

वासवदत्ता कथा

(पाठान्तर, परिशिष्ट एवं समीक्षात्मक भूमिका सहित)

सम्पादक

डॉ० जयदेव मोहनलाल शुक्ल

एम.ए., पी-एच् डी.

प्राध्यापक, संस्कृत एवं प्राचीन भारतीय संस्कृति

एल. डी. आर्ट्स् कॉलेज, अहमदाबाद

प्रकाशनकर्ता

राजस्थान राज्याज्ञानुसार

सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

विक्रमाब्द २०२३ | खिस्ताब्द १९६६ | भारतराष्ट्रीय शकाब्द १८८८ | प्रथमावृत्ति १००० | मूल्य– ४.५०

मुद्रक– वसन्त प्रिन्टिग, प्रेस अहमदाबाद; साधना प्रेस, जोधपुर

VASAVADATTA

of

SUBANDHU

Critically edited with

Introduction and Appendices

by

Dr. JAYDEV MOHANLAL SHUKLA,
M.A., Ph.D.
Professor of
Sanskrit & Ancient Indian Culture
L.D. Arts College, Ahmedabad

Published under the orders of the Government of Rajasthan

By

THE HONY. DIRECTOR,
THE RAJASTHAN ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE
JODHPUR (Rajasthan)

V.S. 2023] Rs. 4.50 [A D. 1966

(First Edition—1,000 Copies)

Printers — Vasant Printing Press, Ahmedabad.
Sadhana Press, Jodhpur.

संचालकीय वक्तव्य

वासवदत्ता संस्कृत साहित्य में एक सुप्रसिद्ध और विशिष्ट काव्यात्मक कथा है। इसका कर्ता सुबन्धु कवि है और उसने गद्य में इस कथा-काव्य की रचना की है। पद्य में तो सैंकड़ों ही छोटे-बड़े काव्य संस्कृत भाषा में लिखे गए हैं परंतु गद्य में लिखी गईं काव्यात्मक रचनाएं अत्यन्त अल्पसंख्यक हैं। महाकवि बाणभट्ट रचित हर्षचरित और कादम्बरी, कवि धनपाल ग्रथित तिलकमञ्जरी आदि ५–७ ही मुख्य गद्य-काव्यात्मक ग्रंथ उपलब्ध होते हैं। इन सब में सुबन्धु कवि कृत वासवदत्ता प्राचीनतम रचना है। यद्यपि यह कोई बड़ी रचना नहीं है परंतु भाषा, भाव और शैली की दृष्टि से यह रचना बहुत ही उत्तमकोटि की समझी जाती है। इसमें उपमा और अन्य अलंकारों की बड़ी अद्भुत उक्तियां हैं। शब्दों का प्रयोग इस प्रकार किया गया है कि जो प्रतिपद में श्लेषालंकार का आभास कराता है। इसलिए महाकवि बाण जैसे संस्कृत वाङ्मय के एक अत्यंत तेजस्वी साहित्यकार ने भी सुबन्धु कवि की इस वासवदत्ता को प्रशंसा करते हुए कह दिया कि 'कवीनामगलद्दर्पो नूनं वासवदत्तया' अर्थात् वासवदत्ता की रचना को देख कर कविजनों का अभिमान गल गया। वासवदत्ता के ऐसे रचना-वैशिष्टच को देख कर बाण की ही तरह अनेक अन्य कवियों ने भी इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

इस प्रकार बहुत प्राचीनकाल से वासदत्ता की ख्याति और प्रतिष्ठा बनी हुई है और इसके पठन-पाठन का भी यथेष्ट प्रचार होता रहा है। इस कथा पर अनेक विद्वानों ने अनेक टीकाएं लिखीं, जिनमें से कुछ लुप्त भी हो गई हैं और कुछ विद्यमान हैं। काश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक के अखंड भारत में प्राचीनकाल से ही संस्कृतज्ञ विद्वानों में इसके अध्ययन-अध्यापन का यथा-योग्य प्रचार रहा है, अतः देवनागरी के सिवाय दक्षिण देशों में प्रचलित तामिल, तेलुगु, कन्नड़ आदि लिपियों में भी इस ग्रन्थ की प्रतिलिपियां होती रहीं और इन विभिन्न देशीय प्रतिलिपियों में विभिन्न विद्वानों के द्वारा अनेक पाठभेद भी उत्पन्न हो गये। इस प्रकार इस ग्रन्थ की दो वाचनाएं बन गईं—एक उत्तर-भारतीय और दूसरी दक्षिण-भारतीय। इस पर टीकाएं लिखने वाले विद्वान् दक्षिण देशोत्पन्न भी हैं और उत्तर देशोत्पन्न भी। इन विद्वानों ने अपनी टीकाएं

उन मूलादर्शों के आधार पर लिखीं जो उनको अपने देश में प्राप्त और प्रचलित थे। इसलिए इन टीकाओं में भी उक्त प्रकार से कई पाठ-भेद और उसके कारण अर्थ-भेद भी उत्पन्न हो गये।

सब से पहले ई० स० १८५९ में फिट्ज़ वार्ड हॉल नामक संस्कृतज्ञ अंग्रेज विद्वान् ने कलकत्ता में इसका मुद्रण कराया। इस मुद्रण में उक्त विद्वान् ने ५-७ बंगला एवं देवनागरी लिपि में लिखित प्राचीन प्रतिलिपियों का उपयोग किया और उनके आधार पर मूल पाठ शुद्ध करने का यथेष्ट प्रयास भी किया। विद्वान् हॉल को जो प्राचीन प्रतियां मिलीं थीं उनमें सबसे पुरानी प्रति सं० १६९४ (१६३८ ई. स.) की लिखी हुई थी। इस मुद्रण में मुख्य रूप से शिवराम विद्वान् की लिखी हुई दर्पण नामक टीका के पाठ को आधारभूत माना गया है।

सुबन्धु कवि का समय निर्णय करने के लिए विद्वानों ने अन्यान्य बाह्य प्रमाणों के अतिरिक्त वासवदत्तागत कुछ विशिष्ट उल्लेखों का भी ऊहापोह किया है। इन उल्लेखों में भी कुछ पाठ-भेद दृष्टिगोचर होते हैं जिससे यह निर्णय करना भी विद्वानों को शंकास्पद लगता है कि कौन पाठ प्राचीन और वास्तविक है और कौन पाठ परिवर्तित या परवर्ती है। इस विषय को लेकर संस्कृत-साहित्य के कुछ मर्मज्ञ विद्वानों में विशेष विचार-विमर्श हुआ है। इन विद्वानों के लेखों को पढ़ कर हमें भी यह जिज्ञासा हुई कि वासवदत्ता की प्राचीन प्रतियां जो जैन-भंडारों में मिलती हैं उनका अवलोकन करना चाहिए और उनके पाठों का भी मुद्रित पुस्तकों के पाठों के साथ मिलान करना चाहिए। अनेकानेक जैन पुस्तक भंडारों के विशाल ग्रंथ-संग्रहों का अवलोकन करते समय हमें अनुभव हुआ है कि संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और देशभाषा के कई महत्त्व के अधिक प्राचीन ग्रंथ जितने जैन-भण्डारों में उपलब्ध होते हैं वैसे अन्यत्र नहीं। साथ में, कुछ जैन विद्वानों ने भी वासवदत्ता पर टीका-टिप्पण आदि भी लिखे हैं। अतः इनका भी अन्वेषण आदि करना हमें आवश्यक लगने लगा। प्रयत्न करने पर हमें कादम्बरी के सुप्रसिद्ध टीकाकार भानुचन्द्र गणि कृत वासवदत्ता की एक पुरानी हस्तलिखित प्रति प्राप्त हो गई। इन्हीं के प्रसिद्ध शिष्य सिद्धिचन्द्र गणि कृत एक टिप्पण भी लिखा हुआ मिल गया। इन टीका-टिप्पणों के साथ वासवदत्ता कथा का एक नूतन संस्करण प्रकाशित करने का हमारा विचार हुआ और तदनुसार कथा के मूल पाठ की कुछ प्रतियाँ प्राप्त करने का हमने प्रयत्न शुरू किया। ई. सन् १९४२ में प्राचीनतम जैन-ग्रंथों के विशाल संग्रह स्वरूप जैसलमेर के जैन पुस्तक-भंडारों का अवलोकन करते समय हमें वहां इस कथा

की एक प्राचीनतम ताड़पत्रीय पुस्तक की उपलब्धि हुई। इसको देख कर हमने तुरन्त इसकी शुद्ध प्रतिलिपि करवाली, क्योंकि उस समय इसकी माईक्रोफिल्म, फोटोकॉपी या फोटो-स्टाट-कॉपी करने-कराने का साधन उपलब्ध नहीं था। द्वितीय विश्व महायुद्ध का वह यौवनाकाल था और भारत में भी स्वतंत्रता प्राप्ति का महा संघर्ष छिड़ा हुआ था। जैसलमेर ही के एक अन्य पुस्तक भंडार में इसकी एक और कागज पर लिखी प्राचीन प्रति की उपलब्धि हुई। इसकी भी हमने प्रतिलिपि करवा ली। अनन्तर, भावनगर के भंडार में से भी हमें एक मूल कथा की प्रति मिल गई जो अपेक्षाकृत अर्वाचीन थी पर अच्छी लिखी हुई थी।

अभी तक वासवदत्ता की जितनी भी पुरानी हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त हुई हैं उनमें जैसलमेर वाली ताड़पत्रीय पुस्तिका सब से प्राचीन है। यह, जैसा कि इसके अन्त में उल्लेख किया हुआ है, वि० सं० १२०७ में लिखी गई थी अर्थात् आज से कोई ८१५ वर्ष पहले। सद्भाग्य से लिपिकर्ता ने उस समय के राज-कर्ता का भी निर्देश कर दिया है और स्थान का भी। इसका लिपिकर्ता कोई यशो-धर विद्वान् है जिसने रुद्रपल्लीय स्थान में, जब राजा गोविन्दचन्द्र का शिविर-निवेश हो रहा था, इसकी प्रतिलिपि किसी आचार्य के लिए तैयार की थी। यह गोविन्दचन्द्र राजा इतिहास-प्रसिद्ध गाहड़वाल वंशीय राजा है जिसकी राज-धानी कान्यकुब्ज थी। राजस्थान के इतिहास में यह संवत् एक विशिष्ट ऐति-हासिक घटना का सूचक है। इसी विक्रम संवत् १२०७ में गुजरात पाटण के राजा कुमारपाल चौलुक्य ने अजयमेरु के चाहमान राजा अर्णोराज पर चढ़ाई करके विजय प्राप्त की थी और उसके बाद वह चित्रकूट अर्थात् चित्तौड़ की तीर्थयात्रा करने गया था और उसने वहां समिधेश्वर महादेव के मन्दिर में पूजा-अर्चना की थी। इस विजय और यात्रा के निमित्त कुमारपाल ने एक शिलालेख भी उक्त मंदिर में लगवाया था जो अभी तक विद्यमान है।

जैसलमेर से ही हमें दूसरी प्राचीन प्रति उपलब्ध हुई, जो कागज पर लिखी हुई है, पर इसका आकार-प्रकार ठीक ताड़पत्रीय पुस्तकों के जैसा है, अर्थात् छोटे आकार के कागजों पर यह लिखी हुई है। इसका लेखन समय वि० सं० १४६८ है अर्थात् यह पुस्तिका उक्त ताड़पत्रीय पुस्तिका के लेखन-समय से २६१ वर्ष बाद और आज से कोई ५५६-५७ वर्ष पहले लिखी गई है। इसका लिपि-कार भी कोई यशोधर ही है, जो अपने को कायस्थ लिखता है। यह प्रति किस स्थान में लिखी गई थी इसका तो कोई निर्देश इसमें नहीं किया गया है, पर इतना सूचित किया गया है कि 'आलेखिता पूर्वदेशमध्ये' इससे यह निश्चय

होता है कि यह पुस्तिका भी उक्त ताड़पत्रीय पुस्तिका की तरह पूर्व भारत में लिखी गई थी। इस प्रति को लिखाने वाली अच्छर नामक श्राविका है जो जैन धर्मानुयायी ठक्कर धाउग की भार्या थी और उसने अपने पुत्र रामदास की पुण्य-स्मृति के निमित्त यह वासवदत्ता कथा की पुस्तिका लिखवाई थी।

इस पुस्तिका के अन्त में एक और पंक्ति पीछे से अन्य हस्ताक्षरों में लिखी हुई है जिसमें सूचित किया है कि सं. १५३६ के वर्ष में, सागरचन्द्रसूरि की शिष्य-सन्तति में वाचक महिमाराज गणि के शिष्य वाचक दयासागर गणि ने इस प्रति को लिया। वासवदत्ता कथा की इन दो प्राचीनतर एवं शुद्ध और सुन्दर लिपि में लिखी प्रतियों को आधारभूत रख कर तुलनात्मक पाठ-भदों के साथ, 'राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला' द्वारा इस का एक नूतन सुसंपादित संस्करण निकालने का हमने निश्चय किया।

प्रसंगवश जब हमारा अहमदाबाद जाना हुआ तो वहां के प्रो. श्री रसिकलाल परिख, पं. श्री केशवराम शास्त्री, डॉ श्री हरिप्रसाद शास्त्री, डॉ. प्रियबाला शाह, प्रो. श्री मधुसूदन मोदी आदि जिन विद्वान् मित्रवर्ग द्वारा इतः पूर्व ग्रन्थ-माला के अनेक ग्रन्थों का जो संपादन-संशोधन कार्य चल रहा था--उसी प्रसंग-में प्रस्तुत ग्रन्थ के संपादक विद्वान् डॉ. श्री जयदेव शुक्लजी से भी किसी ग्रन्थ के संपादन कार्य के विषय में बात निकली। मेरे मन में वासवदत्ता के संपादन का विचार बना हुआ था, अतः मैंने श्री शुक्लजी को इस कार्य को करने की प्रेरणा की। मेरे प्रति अत्यंत सद्भाव और स्नेह के कारण उन्होंने बड़े उत्साह और आह्लाद के साथ इसको स्वीकार किया। मैंने अपने पास जो उक्त प्रकार की इसकी विशिष्ट सामग्री थी वह इनको दे दी और ग्रन्थ के छपने आदि की प्रेस की व्यंवस्था कर दी।

डॉ. जयदेव शुक्ल संस्कृत के बड़े गंभीर एवं परिश्रमी विद्वान् हैं। दर्शन, साहित्य और शब्दशास्त्र इनके प्रिय और विशेष परिशीलन के विषय हैं। प्रस्तुत कथा के संपादन में इन्होंने बहुत परिश्रम पूर्वक कार्य किया है, अपनी विस्तृत अंग्रेजी प्रस्तावना में, संपादन, संशोधन आदि के बारे में यथा-योग्य सब बातों का स्पष्टीकरण किया है तथा कवि सुबन्धु के समय और कथागत वस्तु का भी यथेष्ट विवेचन किया है। डॉ. जयदेव शुक्ल हमारे प्रिय-मित्र और सुहृद्-शिष्य स्वरूप हैं। इनके विषय में कुछ विशेष उल्लेख करना अस्वाभाविक सा होगा। तथापि हम इनके इस प्रकार के, प्रस्तुत ग्रन्थमाला के कार्य में हार्दिक सहयोग देने के निमित्त इनके प्रति अपना हार्दिक आभार-भाव प्रकट करना कर्त्तव्य समझते हैं।

आशा है कि संस्कृत साहित्य और भाषा के विज्ञ-प्रेमी विद्वान्, संस्कृत वाङ्मय के एक विशिष्ट रत्न-स्वरूप इस कथा-काव्य का यह नूतन विशिष्ट संस्करण, विशेष आदर के साथ स्वीकृत करेंगे।

चैत्र शुक्ला द्वितीया, सं० २०२३
दिनांक २४-३-६६
राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान,
जोधपुर

मुनि जिनविजय

CONTENTS

वि० सं० १४६८ की लिखित प्रति का प्रथम पत्र

वि० सं० १४६८ की लिखित प्रति का अन्तिम-पत्र

INTRODUCTION

I

In October 1959 I was very kindly introduced to Munis'rī Jinavijayjī Mahārāja, the great savant of Sanskrit and Prakrit learning and research in India by my revered teacher Prof. Rasikbhai C. Parikh, Director of B.J. Institute of Learning and Research, Ahmedabad, under whose guidance research in Sanskrit and Ancient Indian Culture is making good progress in Gujarat and who is a great source of inspiration to young teachers like me. The revered Munis'rī was very kind in asking me to prepare an edition of Subandhu's Vāsavadattā and for this purpose he gave me three manuscripts of the work. The first was a copy of a palm-leaf manuscript from Jesalmer dated Samvat 1207, the second obtained from Bhāvanagara was an excellent paper manuscript with very good readings and dated Samvat 1468 and the third, also from Bhāvanagara, was dated Samvat 1734. He also kindly procured for me a copy of Hall's edtion of Vāsavadattā. A copy of Bhānuchandra's Tippaṇaka on Vāsavadattā dated Samvat 1690 was also made available to me.

The material for the present work could be classified as follows :—

A. Printed Works

1. *The Vāsavadattā* : A romance by Subandhu, accompanied by S'ivarāma Tripāṭhin's perpetual gloss, entitled Darpaṇa, edited by Fitzedward Hall, M.A., Calcuttā, 1859.

Hall has taken help of eight manuscripts A—H, out of which B, C, D and H are dated 1638, 1641, 1834 and 1758 A.D. respectively, the remaining four being undated. In the text-constitution of Vāsavadattā Hall has followed S'ivarāma's readings in his commentary called Darpaṇa and he is not willing to discard the readings of S'ivarāma against a united authority of his manuscripts.

Hall has also noted readings from Jagaddhara, a commentator who went before S'ivarāma and from Narasimha, who probably flourished after S'ivarāma. Hall's manuscript D represents perhaps an older tradition and is almost identical with Jagaddhara's text of Subandhu. It may be noted here that Hall's ms. D is nearer to the tradition of Southern Recension of Vāsavadattā.

2. *Vāsavadattā* : Edited by Pandit R.V. Krishnamāchārjar (Abhinava Bhaṭṭ Bāṇa), Shrīrangam, 1906.

The learned editor has appended to the work his own Sanskrit commentary which is very useful in understanding the intricacies of Vāsavadattā The text of the work belongs to the Southern Recension and although the learned editor proclaims that he has consulted many manuscripts he does not give the readings of these mss. The Sanskrit Introduction which has some very interesting and suggestive remarks discusses some aspects of Vāsavadattā although the sarcastic remarks about our author Subandhu do not arrive at fruitful conclusons. The work needs a careful reprint.

3. *Vāsavadattā* : A sanskrit romance by Subandhu: translated with an introduction and notes by Louis H. Gray. Ph. D., New york, 1924 (Columbia University Press). Gray has translated Vāsavadattā into English and has reprinted as an appendix to the Madras edition of Vāsavadattā, 1862. He has given in the foot-notes to his reprint of the Madras edition, variants from the Telgu text and the readings of Hall's manuscripts. It is out of context to enter into a discussion regarding the English rendering of Subandhu's work done by Gray. However, it should be said that Gray's text affords some help for a critical edition of Vāsavadattā.

It may be said that in the context of the difficulties in making available the ms. material from the South the texts of Kṛṣṇamāchāriar and Gray have roughly been taken to represent the Southern Recension of Vāsavadattā

B. Manuscripts

Besides the three manuscripts named above, I have examined the following mss. of the text and the commentary on Vāsavadattā. Unfortunately, I was not able to make use of these mss. earlier and therefore readings from them have not been incorporated in the foot-notes. This is not to be regretted, for the superior readings have been noted through the help of the codex P and A and these other mss, do not materially differ from P, A, B and T.

1. *Vāsavadattā of Subandhu* (No. $\frac{463}{1887\text{-}91}$ in B. O. R. I. Government Manuscript Library, Poona.)

Beginning :

श्रीनिर्विघ्नेश्वराय नमः ।। श्रीसरस्वत्यै नमः ।। श्रीगुरुभ्यो नमः ।। करवदरसदृशमखिलं भुवनतलं यत्प्रसादतः कवयः । पश्यंति सूक्ष्ममतयस्सा जयति सरस्वती देवी ।१।

End :

इतिमहाकविसुवंधुविरचिता वासवदत्ताख्यायिका समाप्ता ।। शुभं भूयात् ।। स्वयंभुववत्रांभोनिधिरसनिशानाथगणितेब्दे पौषे विमलनवमीवाक्पतिदिने । जगत्पूर्वोनाथो मधुरिपु-

च गोपालतनुजो लिलेखेदं पुस्तं निजपरजनार्थं तः ।१। नवनीतविलिप्तांगो यशोदानंदवर्धनः। नवनीरदसच्छायो गोविन्दस्तु मुदे मम ॥२॥

The scribe uses a single daṇḍa for a comma and double daṇḍa for a full-stop marking the end of a sentence. He indulges into occasional lapses in this. The handwriting is rather unsteady and hurried but legible. There are marginal notes and explanations which quote lexicons and authoritative works in Alaṁkāras'āstra. The number of lines varies from eight to fourteen in each folio. The lines in each folio measure 8.6" and the folios are 23.

2. *Vāsavadattā ṭippaṇasāra of Ranganātha* :

(No. $\frac{566}{1891\text{-}95}$ B.O.R.I, Government Manuscript Library.)

Beginning :

श्रीगणेशाय नमः ॥ चिंतामणिर्नाम राजाभूदिति संबंधः ॥ हिरण्यादीनां दानं वितरणं ॥ पक्षे हिरण्यकशिपुर्देत्यः आच्छादने भोजने च कशिपुः कथितो द्वयोः । तद् द्वयं मि लतं चापि कशिपुर्भाष्यते क्वचिदिति धरणिः ।

End :

यत्संदिग्धमतिश्लिष्टं क्लिष्टं चामूलभाषितं । तद्बोधार्थमसौ यत्नस्तेन प्रीणातु मे हरिः ॥६॥ इति रंगनाथोद्धृतो वासवदत्ताटिप्पनसारः ॥६॥

As the name explains the work is short but proposes to explain important sentences and words. The ms. is written in good uniform hand-writing. The folios are 12 in number and have 10-12 lines in each folio. The lines in each folio measure 10-3". About 1680 A.D. is the date of Ranganātha as proposed by Gode.

3. *Vāsavadattāpañjikā called Vidagdhavallabhā* :

(No. $\frac{464}{1887\text{-}91}$ B.O.R.I. Govt. Manuscript Library)

Beginning :

श्रीगणेशाय नमः ॥ सद्वंदे श्रीवाग्देवतयो गिरिः विश्वः ॥ अरं शीघ्रे रथांगे च शीघ्रगे पुनरनन्यवत् इति च प्रसादोनुग्रहस्वास्यक्रुपाकाव्यप्रसत्तिथिति च ॥

End :

...जनपदविशेषः सन् शक्ति मुमोच । राजासौ ततस्तस्य शक्त्यभावे रक्षणायोग्यत्वात् । अंगाव्याकुलत्वात् ।

The ms. has 59 folios. Folios 47 to 52 and 53 to 59 are numbered separately as 1 to 7. These are written in hurried and bold hand, the remaining portion of the ms. is written in small hand. The length of each line in a folio is 7-3". Gode proposes a date after 1350 A. D. for the author of this commentary Pañjikā.

4. A commentary on Vāsavadattā by Nārāyaṇa Dīxita :

(No. $\frac{567}{1891\text{-}95}$ B.O.R.I. Govt. Manuscript Library.)

Beginning :

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥
पायाद्वो गोसहस्रेण क्रीडन् गोपालको हरिः ।
प्रकाशदंतघातेन भिन्दानो ध्वांतकुंजरम् ॥

End :

श्रीनारायणदीक्षितं हरिपदद्वंद्वारविंदे रतं
सावित्री सुषुवे सुकर्म (निचयं) (श्री) विश्वरूपश्च यं ।
तेनौद्धत्यविवर्जितेन गुणिना संक्षिप्य नारायणी–
नाम्नीयं रचिता सदर्थविशदा व्युत्पत्तिवृद्धयै सताम् ।

According to Gode the ms. belongs to about 1650 A.D. and the date of the work, assigned by him is about 1300 A.D.

5. Vāsavadattāṭippaṇaka of Bhānuchandra (T) :

Beginning :

विश्वं विद्यात्रयी गङ्गा पुनाति यन्मुखोद्गता ।
बुधश्रीसुरचन्द्राणां तेषां शिष्येण सार्थका ।१।
पूर्वाम्नायात्स्वबुद्धेश्च भानुचन्द्रेण धीमता ।
व्याख्या वासवदत्तायाः कथायाः क्रियते स्फुटा ।२।
नव्यप्रबन्धनिर्माणं कवीनां सुकरं भवेत् ।
व्याख्या तु दुःकरा पूर्व्वकविभावार्थसूचनी ।३।
कृता तथापि व्याख्येयं बह्वर्था स्तोकविस्तरा ।
इति मत्सरमुत्सृज्य विज्ञातव्यं मनीषिभिः ।४।

End :

इति पातसाहश्रीअकबरसूर्यसहस्रनामाध्यापकश्रीशत्रुञ्जयतीर्थकरमोचनाद्यनेक-सुकृतविधायकमहोपाध्यायश्रीभानुचन्द्रगणिविरचितं वासवदत्ताटिप्पनकं समाप्तम् । संपूर्ण संवत १६६० वर्षे महोपाध्यायसिद्धिचन्द्रगणिना लिखापितम् ।

The work has 26 folios and tries to give other words for important and difficult words in Vāsavadattā. Unlike Ranganāth whose work is short but which does not miss an important and difficult passage in Vāsavadattā, Bhānuchandra's hurried notes are not very helpful in settling readings or interpreting difficult passages.

II

The text of Vāsavadattā as presented in the following pages is mainly based on P or the palm-leaf codex. The leaves measure $12 \times 2\frac{1}{2}$ inches, the no. of folios being forty-seven. The ms. is in a good condition with excellent readings.

1. Beginning :

॥ ॐनमो भारत्यै ॥

करवदरसदृशमखिलं भुवनतलं यत्प्रसादतः कवयः।
पश्यन्ति सूक्ष्ममतयः सा जयति सरस्वती देवी ॥१

End :

इति महाकविसुवन्धुविरचिता वासवदत्ता नाम कथा समर्थिता। संवत् १२०७ श्रावण वदि १४ सोमे। रुद्रपल्लीसमावासे राजश्री गोविन्दचन्द्रदेवविजयिराज्ये श्रीयशोधरेण आचार्याणां कृते लिखितेयं वासवदत्तेति।

शिवमस्तु सर्व्वजगतः परहितनिरता भवन्तु भूतगणाः।
दोषाः प्रयान्तु नाशं सर्वत्र सुखी भवतु लोकः॥

।६। मंगलम्। महाश्रीः।६।

[pege 211, क्रमाङ्क ३४८ श्रीजेसलमेरुदुर्गस्थ खरतरगच्छीययुगप्रधानाचार्यश्रीजिनभद्रसूरिसंस्थापितताडपत्रीयजैनज्ञानभंडारनुं सूचिपत्र : संपादक मुनिश्रीपुण्यविजयजी महाराज : जैनकोन्फरन्स-प्रकाशन]

2. A. *Vāsavadattā of Subandhu* : A paper ms. from Bhāvanagar, in good condition.

Beginning :

उँ नामा वीतरागाय। करवदरसदृशमखिलंभुवनतलंयत्प्रसादतः कवयः। पश्यंति सूक्ष्ममतयःसा जयति सरस्वती देवी।

The ms. has 41 folios, each having eight lines and the measurement of the written line in the folio is 6.6″.

End :

इति महाकविसुवन्धुविरचिता वासवदत्ताभिधाना आख्यायिका समाप्ता॥६॥६॥ संवत १४६८ समये मार्गसिरवदि ४ बुधवासरे॥ लिखितं कायस्थ यशोधरा......तया निजपुत्ररामदासस्य पुण्यार्थं वासवदत्ता नाम कथा लिखिता॥

The last sentence seems an adscript. The ms. has been used by more than one person, each adscript has been by way of explaining a word here and there or inserting a minor correction or adding a reading. In the manner of writing the ms. follows the older palm-leaf tradition with the use of पृष्ठमात्रा and a gap in the middle of the page, measuring about a square inch. The punctuation is uniform and the handwriting is steady and clear.

3. B. *A paper ms. from Bhāvanagara.*

Beginning :

॥ श्रीसरस्वत्यै नमः ॥ करबदरसदृशमखिलं भुवनतलं यत्प्रसादत : कवयः पश्यन्ति सूक्ष्ममतयः सा जयति सरस्वती देवी।

End :

इति श्री महाकविसुबन्धुविरचिता वासवदत्ताभिधानाख्यायिका समाप्ता ॥ संवत १७३४ प्रमिते माघशुक्लपक्षे अष्टम्यां तिथौ···॥ श्रीरस्तु ॥···कल्याणमस्तु ॥ शिवमस्तुपाठकवाचकयोः ॥

There are twelve folios with nineteen to twenty lines in each folio, the length of a line being about $8\frac{1}{2}''$. The manner of writing, punctuation and spacing is uniform, the size of letters occasionally varying with each page. There are only two marginal notes explaining a reading and a compound.

The above-noted mss. P., A., and B. form the basis of our text. They follow the tradition of the Northern Recension and may be said to represent three stages of the Northern Recension, A and B giving some idea of the additions made subsequently in the original composition of Subandhu.

As we have understood the Shrīrangam text (K) as representing roughly the Southern Recension, it will be interesting to compare a few samples in both the Northern and Southern Recensions of Subandhu's composition. We give below about half a dozen such samples which will give a fairly correct idea of the differences in the two recensions.

१. यस्य च निहितनाराचजर्जरितमत्तमातङ्गकुम्भस्थलविगलितमुक्ताफलदन्तुरितपरिसरे, तरत्पत्ररथे रक्तवारिसञ्चरत्करिकच्छपोत्फुल्लपुण्डरीकशतसमाकुले, नृत्यत्कबन्धे, सुरसुन्दरीसङ्गमोत्सुकचारभटाहङ्कारसम्भारभीषणे, समरसरसि, भिन्नपदातिकरितुरगरुधिरार्द्रो जयलक्ष्मीपादालक्तकरागरञ्जित इव खड्गो रराज ।

P. (Vā. p. 6. l. 20—p. 7.l. 4)

यस्य च निशितनाराचजर्जरितमत्तमातङ्गकुम्भस्थलविगलितनिस्तलमुक्ताफलदन्तुरितपरिसरे, पतत्पत्ररथे, रक्तवारिसमुड्डयमानद्विरपदकच्छपे, विलसदुत्पलपुण्डरीके, वाहिनीशतसमाकुले, नृत्यत्कबन्धबन्धुरे, सुरसुन्दरीसमागमोत्सुकभटाहङ्कारभीषणरवभीषणे, सागर इव समरशिरसि, भिन्नपदातिकरितुरगरुधिरार्द्रो जयलक्ष्मीपादालक्तकरागरञ्जित इव खङ्गो रराज । K. (p. 55, 56)

In the S.R. words like निस्तल, समुड्डयमान, बन्धुर, चार, सम्भार, चारभीषणे, are added. There is an attempt to break one sentence of the N.R. into two or three clauses and to change the metaphor.

२. अटवीमिवोत्तुंगश्यामलकुचां, वानरसेनामिव सुग्रीवाङ्गदशोभितां, शनैश्चरेण पादेन सौम्येन दर्शनेन, गुरुणा नितम्बेन, लोहितेनाधरेण, विकचेन विलोचनेन, भास्वतालङ्कारेण, ग्रहमयीमिव संसारभित्तिचित्रलेखामिव त्रैलोक्यसौन्दर्यसङ्केतभूमिमिव रसाञ्जनसिद्धिमिव यौवनस्य, संकल्पवृत्तिमिव शृङ्गारस्य, निधानमिव कौतुकस्य, विजय-

पताकामिव मकरध्वजस्य, अभिभूतिमिव मदनकान्तायाः, संकेतभूमिमिव लावण्यस्य...कन्यकामष्टादशवर्षदेशीयामपश्यत्स्वप्ने ।

P. (Vās. p. 11, l. 3 ff.)

विन्ध्याटवीमिव उत्तुङ्गश्यामलकुचां, वानरसेनामिव सुग्रीवाङ्गदशोभितां, भास्वतालङ्कारेण,श्वेतरोचिषा स्मितेन, लोहितेनाधरेण, सौम्येन दर्शनेन, गुरुणा नितम्बेन, सितेन हारेण, शनैश्चरेण पादेन, तमसा केशपाशेन, विकचेन लोचनोत्पलेन ग्रहमयीमिव, संसारभित्तिचित्रलेखामिव त्रैलोक्यचित्तरङ्गस्य, रसायनसमृद्धिमिव यौवनमहायोगिनः, संकल्पसिद्धिमिव शृङ्गारस्य, निधानमिव कौतुकस्य, विजयपताकामिव मकरध्वजस्य, आजिभूमिमिव मदनस्य......कन्यकामपश्यत्स्वप्ने ।

K. (p. 77-79)

भास्वतालङ्कारेण चन्द्रेण वदनमण्डलेन लोहितेनाधरपल्लवेन सौम्येन दर्शनेन गुरुणा नितम्बबिम्बेन विकचेन नेत्रकमलेन शनैश्चरेण पादेन तमसा केशपाशेन ग्रहमयीमिव... ।

H. (p. 64)

Under foot-note 1 on p. 64 Hall notes—'भास्वतेत्यादिकेशपाशेनेत्यन्तस्य स्थाने सर्वेषु मूलपुस्तकेषु जगद्धरनरसिंहटीकयोश्चान्यक्रमावलम्बी पाठोऽस्ति' ।

In the above samples the differences in readings and also those noted by Hall are due to the anxiety of the learned scribes to improve upon and bring an order into the original statement of Subandhu which may not have been complete. The confusion is very well cleared once for all by the S. R. when it meticulously adds words in the original sentence of Subandhu, so as to bring in all the nine planets. Such descriptions of a maiden were rather an order of the day and a literary convention can be seen from the description of a young man in Harṣa-Charita and verses like the one found in Bhartṛhari (Kosambi : verse no. 132).

गुरुणा स्तनभारेण मुखचन्द्रेण भास्वता ।
शनैश्चराभ्यां पादाभ्यां रेजे ग्रहमयीव सा ॥

३. तयोश्च मध्य मध्यमोपान्तवयसि वर्तमानयोः कथमपि दैववशात् त्रिभुवनविलोभनीयाकृतिः पुलोमतनयेवानन्दितसहस्रनेत्रा वासवदत्ता नाम [तनया] बभूव ।

P. (Vās. p. 21)

तयोश्च मध्यमोपान्ते वयसि वर्तमानयोः कथमपि दैववशात् त्रिभुवनविलोभनीयाकृतिः पुलोमतनयेवानन्दितसहस्रनेत्रा मेरुगिरिमेखलेव सुजातरूपा शरन्निशेव उल्लसत्तारका सत्परिषदिव अच्छिद्रद्विजपङ्क्तिभूषिता राक्षसकुललक्ष्मीरिव माल्यवत्सुकेशशोभिता तनयाभूद्वासवदत्ता नाम ।

K. (p. 151-159)

The abruptness and brevity with which the N. R. closes the

sentence in describing Vāsavadattā makes us doubt whether the additional phrases in S. R. were part of the original composition of Subandhu.

४. अतिदूरप्रवृद्धेन मधुना जगति को वा न विक्रियते यदतिमुक्तोऽपि मुनिरपि विचकास। कुसुमशरस्य नवचूतशरमूलनिलीनमधुकरावलिपत्रेणेव रेजे। वृन्तनिर्गतविचकिलविवरे गुञ्जन्मधुकरो मकरकेतोस्त्रिभुवनविजयशङ्खध्वनिमिव चकार। नवयावकपङ्कपल्लवितसनूपुरतरुणीचरणप्रहारानुरागवशान्नवकिसलयच्छलेन तमेव रागमुदवहदशोकपादपः।

अतिदूरप्रवृद्धेन मधुना जगति को वा न विक्रियते, यदतिमुक्तको मुनिरपि विचकास। कुसुमशरस्य नवचूतप्रसवशरमूले निलीयमाना मधुकरावलिर्नामाक्षरपंक्तिरिव रेजे। वृन्तविनिर्गतविकचविचिकिलकलिकाविवरे मञ्जु गुञ्जन्मधुकरो मकरकेतोस्त्रिभुवनविजयप्रयाणशङ्खध्वनिमिव चकार। नवयावकपङ्कपल्लवित सनूपुरतरुणीचरणप्रहारानुरागवशान्नवकिसलयच्छलेन तमिव रागमुदवहदशोकः।

(K. P. 163-165)

Here S.R. tries to improve upon N.R. by breaking a compound to make an independent phrase and by adding words like— नामाक्षरपंक्ति, विकच, कलिका, मञ्जु, प्रयाण, which pretend to add poetic beauty to the readings in N.R.

५. अथ सा तस्यामेव रात्रौ स्वप्ने वालिनमिवाङ्गदोपशोभितं........महामेघमिव विलसत्करकं, [समुद्रमिव] महासत्त्वं, मालिन्या कवरिकया, तुङ्गभद्रया नासिकया, शोणेनाधरेण, नर्मदया वाचा, गोदया भुजया, स्ववर्हिन्या कीर्त्या च पुण्यमयमिव, आदिकन्दं शृङ्गारपादपस्य, रोहणगिरिं सकलगुणरत्नसमूहस्य........त्रिभुवनविलोभनीयाकृतिं युवानं ददर्श।

P. (Vās. p. 24. l. 18 ff.)

महामेघमिव विलसत्करकं, समुद्रमिव महासत्त्वं, मालिन्या कबरिकया तुङ्गभद्रया नासिकया शोणेनाधरेण नर्मदया वाचा गोदया भुजया स्ववर्हिन्या कीर्त्या च पुण्यसरिन्मयमिव......युवानं ददर्श। K (p. 185)

A, B, Hall and the ms. of Hall do not give these words. Bhānucandra also does not notice these words (folio 14,b.)

६. विश्रान्तकथानुवन्धतया प्रवर्तमानकथकजनगृहगमनत्वरेषु चत्वरेषु, समावासितकुक्कुटेषु, निष्कुटेषु, कृतयष्टिसमारोहणेषु बर्हिणेषु, विहितसन्ध्यासमयव्यवस्थितेषु गृहस्थेषु, सङ्कोचोदञ्चदुच्चकेसरकोटिसङ्कटकुशेशयकोशकोटरकुटीरशायिनि षट्चरणचक्रे, अथानेन प्रवर्तता [वर्त्मना] भगवता भानुना [आ] गन्तव्यमिति सर्व्वपट्टमयैर्वसनैरिव मणिकुट्टिमाभिर्विरचितवरुणेन, भगवता कालेन कृत्तस्य दिवसमहिषस्य रुधिरधारेव, विद्रुमलतेवाम्बरमहार्णवस्य रक्तकमलिनीव गगनतडाकस्य, काञ्चनसेतुरिव कन्दर्पस्य, मञ्जिष्ठारागारुणपताकेव गगनहर्म्यतलस्य, लक्ष्मीरिव स्वयंवरगृहीतपीताम्बरस्य,

भिक्षुकीव तारानुरागरक्ताम्बरधारिणी, वारमुख्येव पल्लवानुरक्ता, कामिनीव कालेयाताम्रपयोधरा, बभ्रुरिव कपिलतारका, भगवती सन्ध्या समदृश्यत ।

K.P. 219 ff.

Here the two recensions are following different traditions, it can be seen from the added phrases at the end of the paragraph. The additions which reflect the spirit of Subandhu's composition, may be said to belong to early times, for not only the Madras Text of Gray but also Hall's ms. D. gives the added readings.

7. There are some sentences and passages which are found in the Southern Recension but not in our codex in the same order of words. Such sentences appear in the mss. of the Northern Recension which thus have influenced the N. R. e.g. Vās. p. 35 Para 40—Instead of अनन्तरं कटकैकदेशविरचितैकान्तनिहितमुक्तामकरन्दपद्मरागशकलेन वासवदत्तादर्शनार्थमास्थितेन देवतागणेनेव जातवलयेन परिगतम्………… we have अथ स प्रविश्य कटकैकदेशे विनिर्मितम्, अभ्रङ्कषशिखरेण सुधाधवलेनैकान्तरनिविष्टकनकमुक्तामरकतपद्मरागच्छलेन वासवदत्तादर्शनार्थमवस्थितदेवतागणेनेव सालवलयेन परिगतम् । in K—page 282 and अभ्रंलिहशिखरेण सुधाधवलेनैकान्तरनिविष्टकनकमुक्तामरकतपद्मरागशकलेन वासवदत्तादर्शनार्थमुच्छ्रितदेवतागणेनेव शालवलयेन विरचितम् । according to B. and Hall and also according to A in adscript.

These few samples may, it is hoped, be helpful in giving some idea about how the original text of Subandhu developed in the two recensions. The N. R. is shorter while the S. R. attempts to fill the blanks and adds further to complete a figure of speech or to balance a construction or improve the syntax. Such improvements have a tendency to alter the original composition to such an extent that the stamp of individuality of the author is blurred. Bāṇa's compositions were no less responsible in altering the text of Subandhu, for it is very likely that some of the enthusiastic improvements that Bāṇa worked out in his desire to surpass Subandhu, might have been added in Subandhu's text by learned scribes. The parallels can be decided upon by a comparison of contemporary ms. of the works of Subandhu and Bāṇa.

In preparing this edition important variants only have been reported in the foot-notes at the bottom of the page. In some cases clear mistakes on the part of the scribes e.g. those found in B have been ignored noting those few which reveal a real variant reading or which make a material distinction between a reading of the Southern and the Northern Recension. As has been said above the excellent readings of the palm-leaf codex have made my work smooth. Some of these readings which could not be decided on their own merit have been

established with the help of A. Clear omissions on the part of the scribe have been put in square brackets only after a consideration of grammatical points. Here and there a verbal form inadvertantly omitted by the scribe has been supplied. In such cases help from A and Hall has been accepted.

In one case I have ventured to alter a reading. I do not know how far such a change is justified. The passage is न्यायस्थितिमिवोद्योतकरस्वरूपां, बौद्धसङ्गीतिमिवालङ्कारप्रसाधिताम् । (p. 38-l-13.)

1. P न्यायस्थितिमिव उद्योतकरस्वरूपां, बौद्धस्थितिमिवालङ्कारप्रसाधिताम् ।
2. A न्यायविद्यामिवोद्योतकरसुरूपां बौद्धसङ्गतिमिवालङ्कारप्रसाधिताम् ।
3. K and G न्यायविद्यामिव उद्योतकरस्वरूपाम् सत्कविकाव्यरचनामिव अलङ्कार-प्रसाधिताम् ।
4. Hall न्यायस्थितिमिवोद्योतकरस्वरूपां बौद्धसङ्गतिमिवालङ्कारभूषिताम् ।
5. HC बौद्धसंहतिमिवालङ्कारभूषिताम् ।
6. Bhānuchandra does not refer to the point.
7. न्यायस्थितिमिव उद्यतकरस्वरूपां बौद्धसंगतिमिवालंकारप्रासाधिताम् ।
Vāsavdattā, folio 18 b. l. 10 (B.O.R.I. Govt. Ms. Library ms. no. 463/1887-91 Samvat 1644.)
8. पक्षे उद्योतकरो वार्तिककृत् । संगतिः सिद्धान्तः पक्षेलंकारस्त ..... ।
Folio 12 a l. 1. Vāsavadattā-ṭippaṇasāra of Ranganāth (B.O.R.I. no. 566/1891-95.)
9. प्रसाध्यते काचित् संहतिरिति पाठः तत्रापि संहतिशब्देन ग्रंथ एव ॥
Folio 54 b, l. 2 Vāsavadattāpañjikā called Vidagdhavallabhā (B. O. R. I. No. 464/1887-91.)
10. अलंकारप्रसाधितां मंडनभूषितां पक्षे अलंकारो बौद्धाचार्यः ।
Folio 74 b l. 5, Nārāyaṇa's com. (B.O.R.I. No. 567/1891-95.)

From these references it may be inferred that the reading सत्कवि-काव्यरचना of the S. R. is clearly against the spirit of the N. R. which has बौद्धस्थिति, बौद्धसंगति and बौद्धसंहति (B. and Vidagdhavallabhā) as the readings. The reading बौद्धस्थिति is clearly a later improvement on the part of the scribe following the words न्यायस्थिति. The word सङ्गीति primarily means a 'council', hence a Buddhist Council. Such 'Councils' were three in number (सङ्गीतितयम्–Mahāvastu, P. 251) It also means, according to Childers' Pāli Dictionary 'chanting together, celestial choir and the Nikāyas of Suttapiṭaka which are called, according to Sinhalese tradition, मज्झिमसङ्गीति'. The word संङ्गीति

is found used with पर्याय as in सङ्गीतिपर्याय where "More important Dharmas are taught by the Master because Dharmas held by Vajjian Bhikkhus of Pāvā were not the true ones" (J.P.T.S. 1905 P. 99). Here the words mean a book by शारीपुत्र (acc. to Chinese tradition) or महाकौष्ठिल (acc. to Bu-ston). That the word means doctrine and particularly 'Buddhist doctrine' can be seen from the names of works like महायानाभिधर्मसंगीतिशास्त्र of Āsaṁga and its commentary महायानाभि-धर्मसंयुक्तसंगीतिशास्त्र of Sthiramati (J.R.A.S. 1929 p. 451. Buddhist Logic before Dignāga). Sylvain Levi (Mahāyānasūtrālaṅkāra. Paris 1911. P. 15 and 16) following a similar meaning of the word संगीति reads the Vāsavadattā passage as बौद्धसंगीतिमिवालङ्कारभूषिताम् and suggests that the passage refers to the Buddhist doctrine as propounded by works like महायानाभिधर्मसंगीतिशास्त्र of Āsaṁga which was translated into Chinese by Hiuan-tsang.

All this has impelled me to adopt the reading सङ्गीति suggested by the more or less corrupt reading सङ्गति.

III

Subandhu's date, home, personality etc.

Subandhu's date and the place where he lived and wrote are yet unsolved problems in Sanskrit literary chronology. Tradition proclaims him as a nephew of Vararuchi and a poet in the court of Vikramāditya (नरसिंह वैद्य circa. 1500 A. D., a commentator of Vāsavadattā, कविरयं विक्रमादित्यसभ्यः। तस्मिंश्च राजनि लोकान्तरं प्राप्ते एतन्निबन्धं कृतवान्। Hall, intro. p. 6) and therefore living in the later part of the sixth century after Christ. We give below a few references from Sanskrit and Prakrit writers and inscriptions which directly or indirectly refer to Subandhu.

1. श्रीकण्ठचरित of Maṅkha (12th century) has the following verse—

मेण्ठे स्वर्द्विरदाधिरोहिणि वशं याते सुबन्धौ विधेः
शान्ते हन्त च भारवौ विघटिते बाणे विषादस्पृशः।
वाग्देव्या विरमन्तु मन्तुविधुरा द्राग्दृष्टयश्चेष्टते
शिष्टः कश्चन स प्रसादयति तां यद्वाणी सद्वाणिनी। II. 53

That Maṅkha intended chronological order in the references to मेण्ठ, सुबन्धु, भारवि and बाण may be accepted.

2. राघवपाण्डवीय of Kavirāja (about 1200 A. D.) has the following

verse in which the poet mentions सुबन्धु, बाण and himself (कविराज) in a chronological order

सुबन्धुर्बाणभट्टश्च कविराज इति त्रयः ।
वक्रोक्तिमार्गनिपुणाश्चतुर्थो विद्यते न वा ।। I. 41

3. A Canarese record of 1168 A.D. found at Balagāmi (Rice Lewis : Mysore inscriptions p. 111, Bangalore 1879; also Epigraphia Carnatica Vol. vii, 92-96) describes the attainments of Vāmas'akti, the learned head of the Koḍiya Maṭha "In S'abda Pāṇini, in Nīti Bhūṣaṇāchārya, in Nāṭya and other Bharatas'āstras Bharatamuni, in Kāvya Subandhu, in Siddhānta Lakulis'vara, at the feet of S'iva a Skanda adorning the world, thus is Vāmas'akti truly described."

4. Two verses found in anthologies which are attributed to Rāja-s'ekhara (900 A. D.) give a list of poets. Subandhu is one of them.

(a) भासो रामिलसौमिलौ वररुचिः श्रीसाहसाङ्कः कवि-
मेंण्ठो भारविकालिदासतरलाः स्कन्धः सुबन्धुश्च यः ।
दण्डी बाणदिवाकरौ गणपतिः कान्तश्च रत्नाकरः
सिद्धा यस्य सरस्वती भगवती के तस्य सर्वेऽपि ते ।।
Quoted by S'ārngadhara (शार्ङ्गधरपद्धति, Peterson I. 188)

(b) सुबन्धौ भक्तिर्नः क इह रघुकारे न रमते
धृतिर्दाक्षीपुत्रे हरति हरिचन्द्रोऽपि हृदयम् ।
विशुद्धोक्तिः शूरः प्रकृतिमधुरा भारविगिर-
स्तथाप्यन्तर्मोदं कमपि भवभूतिर्वितनुते ।।

It may be supposed that (*a*) has observed chronological order in the enumeration of poets while (*b*) has not.

5. काव्यालङ्कारसूत्रवृत्ति of Vāmana has a passage—कुलिशशिखरखरनखरप्रचयप्रचण्डचपेटापाटितमत्तमातङ्गकुम्भस्थलगलन्मदच्छटाच्छुरितचारुकेसरभारभासुरमुखे केसरिणि (I. 3. 25.) which is similar with one from Vāsavadattā (p. 45. l. 3) कुलिशशिखरखरनखरप्रचयप्रचण्डचपेटपाटितमत्तमातङ्गरक्तच्छटाच्छुरितचारुकेसरभासुरकेसरिकदम्बकेन ।

A similar sentence is also found in Harṣacharita (cp. Appendix I. no. 37). As will be shown in the course of our discussion Bāṇa has accepted a number of passages from Subandhu who is quoted by Vāmana who flourished in the later half of the 8th century.

6. The inscription in the Rādhanpur plates of Govinda III (Keilhorn : Epigraphia Indica Vol. vi. p. 239 ff.) takes a number of alliterations and puns from Subandhu and Bāṇa as has been very ably proved by Keilhorn in his notes. The inscription which is dated 808 A. D. (शक संवत् ७३०) is an ample testimony of Subandhu's influence on later writers.

7. Gauḍavaho of Vākpatirāja mentions Subandhu,

भासम्मि जलणमित्ते कन्तिदेवे अ जस्स रहुआरे ।
सोबन्धेन अ बन्धम्मि हारिचन्दे अ आणन्दो ।। V. 800

It is rather strange that Vākpatirāja does not mention Bāṇa whose fame must have spread by the time this protege of Yashovarman of Kānyakubja living about 725 A. D. flourished.

8. Danḍin discusses श्लेष in the second chapter of his Kāvyādars'a while illustrating the नियमवान् variety he says—

निस्त्रिंशत्वमसावेव धनुष्येवास्य वक्रता ।
शरेष्वेव नरेन्द्रस्य मार्गणत्वञ्च वर्तते ।। II. 319

and while illustrating विरोधवान् he says—

अच्युतोऽप्यवृषच्छेदी राजाप्यविदितक्षयः ।
देवोऽप्यविबुधो जज्ञे शङ्करोप्यभुजङ्गवान् ।। II. 322

Subandhu has similar phrases in Vāsavdattā, e.g. यत्र च राजनीतिचतुरे··· भुवो नायके शासति वसुमतीं······निस्त्रिंशत्वमसीनाम् (Vāsavdattā p. 21. l. 7) and शङ्करोऽपि न विषादी (Vās. p. 5. l. 5). Some of the illustrations given by Danḍin while discussing आदिमध्यान्तगोचरं यमकं have resemblance with those found in Vāsavadattā e. g. मधुरं मधुरम्भोजवदने वद नेत्रयोः। (Kāvyā. III. 8 a) and वदने वदनेत्रपेयकान्तौ। (Vāsa. p. 37. l. 2), कमलं कमलं कुर्वदलिमद्दलमत्प्रिये (Kāvyā. III. 17 a) and कमला कमलालया जिता (Vāsa. 34. l. 9). It should be said that the resemblances may be accidental or merely verbal or both might have taken them from a common source.

9. Māgha who flourished after 700 A. D.—as his reference to Jinendrabuddhi's Nyāsa on Kās'ikā, found in S'is'upālavadha II. 112 proves—borrows ideas from Subandhu's Vāsavadattā :

1. (a) मत्सङ्गतिप्रसिद्धो वारुणीसमागमाद् द्विजपतिरेष पतिष्यतीति हसन्त्यामिवाखण्डलककुभि······ भगवति भास्करे समुदयमारोहति···· ।
Vāsa. p. 41. l. 16

(b) S'is'upālavadha xi. 12

उदयमुदितदीप्तिर्याति यः संगतौ मे
पतति न वरमिन्दुः सोपरामेष गत्वा ।
स्मितरुचिरिव सद्यः साभ्यसूयं प्रभेति
स्फुरति विशदमेषा पूर्वकाष्ठाङ्गनायाः ।।

2. (a) [नव] नखपददष्टकेशनिर्मोकवेदनाकृतसीत्कारविनिर्गतदुग्धमुग्धदशनकिरणच्छटाधवलितभोगवासासु । Vāsa. p. 8. l. 9

(b) S'is'upālavadha xi. 54

सरसनखपदान्तर्दष्टकेशप्रमोकं
प्रणयिनि विदधाने योषितामुल्लसन्त्यः
विदधति दशनानां सीत्कृताविष्कृतानां
अभिनवरविभासः पद्मरागानुकारम् ॥

10. There is a striking resemblance between some of the verses of Bhartṛhari and some statements in Vāsavadattā

(a) गुरुणा स्तनभारेण मुखचन्द्रेण भास्वता ।
शनैश्चराभ्यां पादाभ्यां रेजे ग्रहमयीव सा ।
भर्तृहरिसुभाषितसङ्ग्रह (Kosambi) V. 132 and

शनैश्चरेण पादेन सौम्येन दर्शनेन गुरुणा नितम्बेन, लोहितेनाधरेण, विकचेन विलोचनेन, भास्वतालङ्कारेण, ग्रहमयीमिव, संसारभित्तिचित्रलेखामिव...कन्यकामष्टाद-शवर्षदेशीयामपश्यत्स्वप्ने । Vāsa. p. 11. l. 4

(b) क्षीरेणात्मगतोदकाय हि गुणा दत्ताः पुरा तेऽखिला :
क्षीरे तापमवेक्ष्य तेन पयसा स्वात्मा कृशानौ हुत : ।
गन्तुं पावकमुन्मनस्तदभवद् दृष्ट्वा तु मित्रापदं
युक्तं तेन जलेन शाम्यति सतां मैत्री पुनस्त्वीदृशी ॥
भर्तृहरिसुभाषितसङ्ग्रह (Kosambi) V. 28 and

[तथाहि] माधुर्यशैत्यशुचित्वतापशान्तिभिः पयः पयः इति निमित्ततामुपगतस्य दुग्धस्य मत्समागमाद्वर्धितस्य क्वाथे पुरो ममैव क्षयो युक्त इति विचिन्त्येव वारिणापि क्षीयते । Vāsa. p. 1 l. 37

(c) वह्निस्तस्य जलायते जलनिधिः कुल्यायते तत्क्षणान्
मेरुः स्वल्पशिलायते मृगपतिः सद्यः कुरङ्गायते ।
व्यालो माल्यगुणायते विषरसः पीयूषवर्षायते
यस्याङ्गेऽखिललोकवल्लभतमं शीलं समुन्मीलति ॥
भर्तृहरिसुभाषितसङ्ग्रह (Kosambi) V. 324 and

त्वत्कृते यानया वेदनानुभूता सा यदि नभः पत्रायते सागरो लोलायते ब्रह्मा लिपिकरायते भुजगपतिर्वाक्कथकः तदा किमपि कथमपि एकैकैर्युगसहस्रै रभिलिख्यते कथ्यते वा । Vāsa. p. 39. l. 5

As regards the times and personality of Bhartṛhari we are not on a sure ground. At least four Bhartṛharis are known to the literary tradition : The grammarian Bhartṛhari among these, is the earliest. This great grammarian referred to, quoted and refuted with reverence by almost all the great minds in Brahmanic, Buddhist, and Jain philosophy is the famous writer of Vākyapadīya in three (Āgama, Vākya and Pada) Kāṇḍas, discussing the philosophy of Word-Essence, Sentence and grammatical categories and Mahābhāṣya Dīpikā or

Pradipikā, a voluminous commentary on Mahābhāṣya, which unfortunately does not go beyond the bhāṣya on स्थानेऽन्तरतमः, (cp. Adyar transcript no. 39G.17/V. I-II) which has laid under debt all the commentaries on Mahābhāṣya, beginning with Pradipa of Kaiyaṭa. This grammarian cannot be the poet Bhartṛhari as can be easily seen from a comparison of the works of both, from the solecisms found in शतकत्रय, from the number of Gods refered to as against the Advaita of the grammarian and also because no poetical activity of such an early writer as grammarian Bhartṛhari has ever been recorded. The other personality known as Bhartṛhari is the famous poet Bhaṭṭi who composed Bhaṭṭikāvya and who flourished during the reign of the Maitraka king Dharasena II about 600 A. D. The other Bhartṛhari was a famous chief of the Kanfaṭṭā Yogins in Eastern India. It is likely that I Ching has confused the poet Bhartṛhari with the grammarian Bhartṛhari and in his enthusiasm to see everything Buddhist in India has feathered on him the worship of 'Three Jewels'.

Subandhu uses almost the same words of Bhartṛhari, adds a few of his own and instead of compressing the meaning in fewer words expresses it elaborately. In Subandhu the echoes of the rhythm of the original phrases of Bhartṛhari can be found. Thus either Subandhu imitates Bhartṛhari or both are following a common source. As for the latter possibility we have no evidence and considering the fact that Bhartṛhari lived sometime in the later half of the sixth century Subandhu may safely be assigned to a period later than sixth century A.D.

11. While Subandhu may be said to follow Varāhamihira in his descriptions of Vindhya [V.p. 13-14, Revā V.p. 15-16 and the ocean V.p. 45; Bṛhatsamhitā Vol. I p. 267-270] there are verbal resemblances like रहसि मदनसिक्तया रेवया कान्तयेवोपगूढं (बृ. सं. p. 270) विन्ध्यमस्तम्भयद्यशश्च तस्योदयः श्रूयताम् । and रेवया प्रियतमयेव प्रसारितवीचिहस्तोपगूढः । (Vāsavadattā p. 16. l. 8). Subandhu imitates Varāhamihira who flourished around 550 A.D.

12. Subandhu in his enthusiasm to weave into his composition ideas from earlier authors has unconsciously imitated poets like Amaru

दम्पत्योर्निशि जल्पितं गृहशुकेनाकर्णितं यद्वचः
प्रातस्तद्गुरुसंनिधौ निगदतस्तस्यैव तारं वधूः ।
हारार्कापितपद्मरागशकलं विन्यस्य चञ्चोः पुरो
व्रीडार्ता प्रकरोति दाडिमफलव्याजेन वाग्बन्धनम् ॥

Subhāsitaratnakosa (Kosambi) V. 621

and Vāsavadattā p. 8. l. 11 क्षणदागतसुरतवैयात्यवचनशतसंस्मारकगृहशुकचाटुव्याहृतिक्षणजनितमन्दाक्षासु । While it is difficult to determine the date of Amaru, he may be said to have flourished after Kālidāsa and the later half of the sixth century may be assigned to him as his date. Subandhu may have been a younger contemporay of Amaru.

13. A terminus a quo to the composition of Subandhu's Vāsavadattā is the reference to Udyotakara, न्यायस्थितिमिवोद्योतकरस्वरूपां बौद्धसङ्गीतिमिवालङ्कारप्रसाधिताम् । (p. 38. l. 13). It is clear that Subandhu here refers to Udyotakara the famous writer of Nyāyavārtika on the Nyāyasūtra of Akshapāda Gautma. The philosophical activity of the five centuries after christian era was one of refutation of other's points of view and establishing one's own. The Nyāya doctrine had been severly criticised by Dignāga and it was the express purpose of Udyotakar to dispel the shadow of 'the arguments of bad logicians' like Dignāga (कुतार्किकाज्ञाननिवृत्तिहेतुः करिष्यते तस्य मया निबन्धः । Nyāyavārtika-mangala verse.) The famous Buddhist logician Dharmakīrti tried to refute Udyotakara, while his other rival was the mīmānsaka Kumārila and the grammarian Bhartṛhari. It may be assumed that while Dignāga and Bhartṛhari were contemporaries refering to and refuting the views of each other, Kumārila, Udyotakara and Dharmakīrti were also contemporaries not very far removed in time from one another. Thanks to Rāhulji's researches, we now are pretty certain about Dharmakīrti's date which is about 600 A.D. As against the above order in chronology of these famous philosophers it is very plausible that दिग्नाग flourished about 475 A.D., Udyotakara about 500 A.D. and Kumārila and Bhartṛhari about 525 A.D. and Dharmakīrti about 600 A.D. In any case Subanhdu's reference to Udyotakara and his mighty contribution in Nyāya determines for him the earlier date viz : that he could not have lived before 500 A.D. in any case. The other reference has raised many arguments. In the manner of Subandhu's reference to an author in the earlier sentence the word अलङ्कार should definitely be construed to refer to a work and nothing else. Nārāyaṇa Dixita, (about 1500 A.D.) one of the earliest commentators of Vāsavadattā reads the name of a Buddhist logician (पक्षे अलङ्कारो बौद्धाचार्यः) while Vidagdhavallabā (a commentary on Vāsavadattā), Bhānuchandra (1600A.D.) and Ranganātha (1685A.D.) are silent on the point. S'ivarāma (1700 A.D.) explains, अलङ्कारो धर्मकीर्तिकृतो ग्रन्थविशेषस्तेन भूषिताम् (Hall p. 235). According to Jagaddhara (1400 A.D.) another commentator on Vāsavadattā, Dharmakīrti was the author of the work. Narasimha Vaidya (1500 A.D.) another commentator of Vāsavada also suggests that Alaṁkāra was a "cāstra bouddhique."

From these references one thing is certain and it is that the term Alaṁkāra should be understood in the sense of a work discussing 'buddhist philosophy' (Sylvain Levi : Mahāyānasūtrālaṅkāra of Asang, Paris 1911, Intro p. 15 'En fait de shastras l'Alaṅkāra par excellence ne peut eitre que le shastra issu du ciel Tuṣit et revele par maitreya.")

Now Dharmakīrti is not reputed to have written any work of the name Alaṁkāra, nor has he written any work the ending word of which is अलङ्कार. Pt. Rāhulji's researches have thrown considerable light on the works of the famous logician. It cannot also be said that the word अलङ्कार refers to some work on अलङ्कारशास्त्र. Although as a poet Dharmakīrti is known to have composed some stanzas now found in anthologies of Sanskrit verses, and such stanzas have the grace, sparkle and clarity of their own, there is no tradition connecting Dharmakīrti with the composition of any poetical work or a work on poetics. Ānandavardhana only refers to an uncertain opinion when he quotes (Dhvanyāloka with Lochana, Benares 1940. p. 487) the verse लावण्यद्रविणव्ययो न गणित: etc. as composed by Dharmakīrti.

He remarks (p. 489) न चायं श्लोक: क्वचित्प्रबन्ध इति श्रूयते येन तत्प्रकरणानुगतार्थतास्य परिकल्प्यते । although he is quite certain about Dharmakīrti's authorship of another verse,

अनध्यवसितावगाहनमनल्पधीशक्तिना–
प्यदृष्टपरमार्थतत्त्वमधिकाभियोगैरपि
मतं मम जगत्यलब्धसदृशप्रतिग्राहकं
प्रयास्यति पयोनिधे: पय इव स्वदेहे जराम् ।

which is Pramāṇavārtika iv. 288. It is very likely that by अलङ्कार Subandhu referred to either महायानसूत्रालङ्कार of Maitreya and commented upon by Vasubandhu or सूत्रालङ्कार of As'vaghoṣa or अभिसमयालङ्कार of Asanga. The word सङ्गति or सङ्गीति meant a doctrine or a deliberation arrived at in a Buddhist council, hence ultimately the Buddhist doctrine.

Subandhu refers to older doctrines, authors and works. His reference to Mīmānsā (मीमांसान्याय इव पिहितदिगम्बरदर्शन: Vāsa. p. 15. l. 2; केचिज्जैमिनिमतश्राविण इव तथागतमतध्वंसिन: । Vāsa. p. 24. l. 7; श्रुतिवचनमिव क्षतदिगम्बरदर्शनम् । Vāsa. p. 52. l. 11; and मीमांसकदर्शनेनेव तिरस्कृतदिगम्बरदर्शनेन । Vāsa. p. 52. l. 11) refer in general terms to Kumārila and his views in works like S'lokavārtika and Tantravārtika while refuting the Jain doctrine. He refers to बृहत्कथा, कामसूत्र of Mallanāga, हरिवंश

and the छन्दोवीचिति as the science of metrics (and not the work of the same name attributed to Daṇḍin : (See Kane : I. A. 1911 p. 177).

The terminus ad quem to the work of Subandhu is the reference to Vāsavadattā by Bāṇabhaṭṭa in Harṣacharita. Bāṇa in the introduction, after paying his homage to शम्भु, उमा and व्यास criticises bad poets and plagiarists. He then refers to peculiarities of style with the northern, western, southern and eastern writers and in the same context declares that the idea with a novel turn (नवोऽर्थः) uncommon and attractive description (अग्राम्या जातिः) words with unforced double meaning (अक्लिष्टः श्लेषः), transparent rasa (स्फुटो रसः) and a compactness in diction (विकटाक्षरबन्धः),—all these are difficult to combine in one composition. He then refers to the writers of Ākhyāyikās or Narratives. With this mental background he immediately writes the following verse.

कवीनामगलद्दर्पो नूनं वासवदत्तया ।
शक्त्येव पाण्डुपुत्राणां गतया कर्णगोचरम् ॥

The Vāsavadattā praised in this verse is the present work of Subandhu. The word Vāsavadattā is known to us from Mahābhāṣya. Commenting on the Vārtika लुबाख्यायिकाभ्यो बहुलम् on Pāṇini's sūtra अधिकृत्य कृते ग्रन्थे (iv. 3. 87) Patañjali mentions as illustrations वासवदत्ता, सुमनोत्तरा and भैमरथी. Sumanottarā as story book was known to Buddhist literature and the story of Vāsavadattā referred to the famous Vāsavadattā-Udayana episode. Another work known as a Vāsavadattānāṭyadhārā was a drama by Subandhu, a poet and minister at the court of Bindusāra, son of Chandragupta Maurya. Several extracts have been traced from the work in the अभिनवभारती on नाट्यशास्त्र. In भावप्रकाश he is referred to as a writer on dramaturgy (cp. I. H. Q. I. p. 261.)

The manner and context in which Bāṇa writes the verse makes it quite clear that he refers to a work and not to a mere story. The story-works known to Bāṇa could be Bṛhatkathā and Subandhu's Vāsavadattā for no early story-works except that of Subandhu and Daṇḍin are known to us. The Vāsavadattā Ākhyāyikā known to Patañjali has not come down to us nor any of its adaptations or abridgements. The name of the author viz. Subandhu is not mentioned because it was very well-known to others and to Bāṇa. At the end of the introductory verses to Kādambarī Bāṇa says that he wrote the work 'to surpass the two' (धिया निबद्धेयमतिद्वयी कथा) which may be said to refer to Bṛhatkathā of Guṇāḍhya and Vāsavadattā of Subandhu. The internal similarities between Vāsavadattā on the

one hand and Harṣacharita and Kādambarī on the other prove, as we are going to show, the indebtedness of Bāṇa to Subandhu in matters of diction, style, use of figures of speech like Virodha, Parisaṁkhyā, S'leṣa and Mālādīpaka and with regard to some of the motiffs common to both Vāsavadattā and Kādambarī. It is almost certain that the superior composition Kādambarī of the master narrator Bāṇa whose genius as a great poet is evident at each sentence of Kādambari threw away Vāsavadattā into the limbo of disrespect and criticism. The importance that Harshavardhana, the patron of Bāṇa swayed over many regions of northern India was also responsible for spreading the fame of his protege far and wide.

Social and political conditions of the later half of the sixth century and the early decades of the seventh century also prove the above contention. A general social and political degeneration had set in after the fall of the Guptas. More than once Hiuen Tsang himself was robbed by brigands. Mutilation of the nose, ears, hands or feet was penalty for serious offences as is shown by Yajñavalkya Smṛti and Subandhu when the latter says यत्र च शासति धरणिमण्डलं···कण्टकयोगो नियोगेषु, परीवादो वीणासु, खलसंयोगः शालिषु, द्विजिह्वसङ्गृहीतिराहितुण्डिकेषु, करच्छेदः क्लृप्तकरग्रहणेषु, नेत्रोत्पाटनं मुनीनां···(Vāsa. p. 3. l. 13)

Weber declared (Indische Streifen I. 372) that on a comparison of the style in the writings of Daṇḍin, Subandhu and Bāṇa, he felt compelled to assign to Subandhu a middle place between Daṇḍin and Bāṇa. According to Keith "Subandhu must be placed in the second quarter of the 7th century" (History of Sanskrit Literature p. 308) and that he "was only a slightly older contemporary of Bāṇa" (J.R A.S. 1914 pp. 1100)

It would be too much to read some historical reference in the name Dāmodara in the introductory verse no. 3 of Vāsavadattā or to Kṛṣṇagupta and Mahāsenagupta in the phrases like कृष्ण इव कृतवसुदेवतर्पणः। (Vāsa p. 3. l. 3) and हर इव महासेनानुयातो निर्जिततारश्च । (Vāsa. p. 3. l. 7). However, it is very likely that Subandhu lived at the court of either Dāmodaragupta or Mahāsenagupta of Malwa who belonged to the family of the later Guptas of Magadha. According to an inscription found at Aphsad, near Gayā (C. I I. III. 200) Dāmodaragupta defeated the Maukharis though he was either killed or fatally wounded in the battle. His son Mahāsenagupta, carried his armies as far as western banks of Brahmaputrā and defeated Susthitavarmā, the king of Assam. As Kumāragupta and Mādhavagupta, the two sons of Mahāsenagupta are referred to as attendants of Rājyavardhana and Harṣavardhan by

Bāṇa and as they are referred to as sons of the king of Mālavā, Mālavā is generally established as the seat of Mahāsenagupta. By 595 A. D. Mahāsenagupta, pressed by two powerful enemies viz. S'īlāditya I of Valabhi and the Kalchuri S'ankargaṇa, lost control over Mālavā and had probably a tragic end. It is very likely that Subandhu's fame also sufferred with the fate of his patron Mahāsenagupta. It is possible that Bāṇa does not mention Subandhu as some of the later Mālava kings helped S'as'ānka against Harṣavardhana. From all these evidences we may be tempted to opine that Subandhu probably lived at the court of the Mālava king who was either Dāmodargupta or Mahāsenagupta during a period between 550 A. D. and 600 A. D.

That Subandhu hailed from the capital of Mālavā or some place in Mālavā may be proved from a number of evidences. Although it is difficult to determine anything from the geographical references in Subandhu which are too conventional, it should be noted that he refers to Lāṭa, Kuntala, Kerala, Mālavā, Āndhra, Vindhya, Revā, Marudes'a, theVindhya-forest, the hinterland near the ocean and the ocean most of which are places not far removed from Mālavā. Scholarly opinion tried to establish Subandhu as living in Bengal or Eastern India (I. H. Q. 1939, p. 472 fn.) from the simple reason that verbal conceits are a peculiarity of the easterners (गौडेष्वक्षरडम्बर:), from the fact that Subandhu shows familiarity with fish and catching of fish (पथिकहृदयमत्स्यं ग्रहीतुं मकरकेतोः पलाव इव पाटलिपुष्पमदृश्यत । (Vāsa. p. 23. l. 5) a daily act of the Bengalis in general and a reference to Sundari trees (सोत्कण्ठभृङ्ग-राजरसितसुन्दरसुन्दरीवनेन ।) which are found in abundance in the Sundaraban area of Southern Bengal. But against this opinion another view has been advanced viz. that he belonged to Malavā (A volume of Studies in Indology presented to Prof. Kāne : p. 220) from his reference to Mālavā women (Vāsa. p. 23. l. 11; 37-13; 38-8) and from Subandhu's knowledge of local regions and their traditions viz. the sight of कणाटीन birds in union impelling kirātas to search for gold (खञ्जरीटकणाटीनमिथुन-मैथुनोपजातनिधिग्रहणकौतुककिरातशतखन्यमानतीरया । (Vāsa. p. 16. l. 4). It is difficult to decide anything on the point but the very realistic descriptions of Vindhya, Narmadā, the forests in the hinterland of the Bay of Bengal, near Madhyapradesha and Orissa, the forests overgrown with different varieties of trees and the emphasis on Viṣṇu and Vaiṣṇavism may be useful to prove the opinion that he belonged to Mālavā or was at least familiar, either directly or indirectly, with Mālavā.

About the personality of Subandhu we know only next to nothing. He was a devotee of Viṣṇu for he pays his homage to Viṣṇu in the

mangala verse no. 2 of Vāsavadattā and remembers Viṣṇu again almost at the end of the work (सत्पुरुषेणेव विष्णुपदावलम्बिना । Vāsa. p. 52. l. 12). The great personalities of Brahmanic mythology, both Vedic and epic, were at the tips of his fingers and Viṣṇu and his various forms and aspects enjoy a detailed mention in the very first paragraph of Vāsavadattā (cp. the names नृसिंह, कृष्ण, नारायण, कंसाराति, यशोदानन्द, सागरशायी and so on). However, he had respect for S'iva and other gods and goddesses.

Subandhu calls himself a friend of the righteous (सुजनैकबन्धुः) and living up to that ideal in life he praises the good and chastises the wicked. This traditional praictice of praising the good and criticising the bad was known from the time of Kālidāsa (cp. Raghuvams'a I. 10). Later writers like Bāṇa, Dhanapāla and Somadeva and prākrit and Apabhrams'a writers follow the practice detailed by Subandhu. But with Subandhu this is not merely a traditional hang-over, for it is likely that he had some personal experience of the good and the bad in his own life-time. People attended the Kings and courts for money धनकामयेव कृतभूभृत्सेवया । Vāsa. p. 16. l. 7). The service of the good and the righteous bore late but certain fruits (सदीश्वरसेवयेव दूरोद्गतबहुफलया । Vāsa. p. 17. l. 3; सत्पुरुषसेवामिव श्रीफलाढ्याम् । Vāsa. p. 40. l. 9) The gossip-mongers and those who took delight in others' miseries had already left him (कर्णाभ्यां परपरीवादश्रवणकुतूहलिभ्यां नेत्राभ्यामालोकितसाधुविपत्तिभ्यां मूर्ध्ना च अस्थाने प्रणमता । त्यक्तोऽहम् । Vāsa. p. 52. l. 5). Perhaps these were the sentiments of a writer who felt uncomfortable amidst unhealthy political and social conditions which may be said to have been reflected in an early remark of Subandhu,

सा रसवत्ता निहता नवका विलसन्ति चरति नो कङ्कः ।
सरसीव कीर्तिशेषं गतवति भुवि विक्रमादित्ये ॥

Gone are those days when poets and poetry were appreciated. The new wretches adorned with importance both in the political and the literary fields enjoy the benefits. The wise move only guardedly, for Vikramāditya the very fountain of poetry lived only in memory. A good composition like Vāsavadattā sprinkles with delight the ears vexed with noisy nothings as a garland of Mālatī flowers attracts the sight though the fragrance is not determined. For sometime his work may not have attracted wide reputation as he says,

अविदितगुणापि सत्कविभणितिः कर्णेषु वमति मधुधाराम् ।
अनधिगतपरिमलापि हि हरति दृशं मालतीमाला ॥ Intro. v. no. 11

Although self-confident (गुणिन्—स्वमहिम), objective valuation of his composition by others is his aim

गुणिनामपि निजरूपप्रतिपत्तिः परत एव संभवति ।
स्वमहिमदर्शनमक्ष्णोर्मुकुरतले जायते यस्मात् ।। Intro. v. no. 12

He is humbly conscious of his achievements in literature, for, blessed by Saraswatī he can have an all comprehensive vision of the world. He is the very abode of that intelligence which revels in dextrously interweaving words and in a composition full of words with double meaning in each letter.

सरस्वतीदत्तवरप्रसादश्चक्रे सुबन्धुः सुजनैकबन्धुः ।
प्रत्यक्षरश्लेषमयप्रबन्धं विन्यासवैदग्ध्यनिधिर्निबन्धम् ।।

Vāsa. Introduction v. no. 13.

The main currents of the story of Vāsavadattā are given below.

Once there was a King called Chintāmaṇi. He was the one lord of all kings of the earth, generous, a friend of poets, protector of all four quarters and a lord of a hundred armies. Like S'iva he had conquered Kāmadeva, like Meru he was the resort of the wise, like the Sun he removed the torment of people, like the god of Love he gave pleasures, like the moon he was a friend of all kalās and like the ocean he was the abode of friends. While he was the one lord of the Earth, righteousness prevailed; there was equality before taxation and absence of severe punishments and bad administration.

He had a son Kandarpaketu. Like Pārijāta, the Tree of Paradise, he was the delight of those who sought his protection. Like Arjuna he was adventurous in battle, strong-handed and delightful in love. On seeing him the hearts of damsels bubbling with youth rejoiced and yearned for him, for pleasant like a flower, he was an elixir to the ears and a feast for the eyes. His sword coloured as it were by the red dye of the feet of the Goddess of Conquest, was dazzling while it was steeped in the blood of the elephants and horses of the foe in battle.

Once while the night was leaving the moon and the stars, while the hermitages were humming with the recitations of the early-rising teachers, while the roads echoed the songs of the kārpatika bards, while the cuckoos awakened the ladies from the arms of their lords and while the unconcerned wind blew away the complaint of the female chakravāka, Kandarpaketu had a morning dream. He beheld in the dream a virgin who had hardly completed eighteen years. Her eye-lashes were like the banks of the river of desire. The glances of her large

eyes were impeded by the ears. Her nose was like the needle of the scales of the pearl-like teeth. Her breasts were the undisturbed pleasure-resorts of the God of Love in need of rest after the world-conquest. Her waist was slender in grief at not being able to have a good view of her face on account of the intervening fullness of her bust. The girdle around the waist which showed a golden hairy nothingness was like the shining rampart of the temple of Love. She was a beautiful painting on the wall of life, an elixir of youth and an abode of astonishment.

While Kandarpaketu drank this vision with eyes wide awake with longing, sleep forsook him. When he came to his wisdom he could not control himself. 'Darling, do not depart', were the words that rested on his lips when he requested her to return. Shutting out his kinsmen he passed the day in bed refusing food and toilet. The same night he vainly tried to console himself with dreams of union with her. His friend Makaranda learning about the condition of Kandarpaketu somehow obtained access to him and lectured to him on his behaviour that his enemies were glad to see him perturbed by grief because the heart of the vicious always rejoiced at the pain of others. Like a disease he gains strength gradually. The heart of the wicked sprouts into a plant of venom; he, therefore, should leave the slippery path and return to tread on the road of the righteous. This homily had little effect and Makaranda had to leave the city to follow Kandarpa-ketu when he set off in search of the beloved vision he had seen in dream because his senses had been rendered ineffective, his discerning powers had gone away, his memory had proved faithless and his soul was ready to depart.

When they had travelled some hundreds of furlongs the Vindhya mountain appeared in view. In the mountain lived the wild tribes who were ready to pierce the musk-deer when they were attentively listening to the tunes sang by the Vidyādharas. Its stony surface was scented with sandalwood. It was difficult to pass in the interior on account of the creepers encircling full-grown trees. It was wide and calm with the stillness of the bamboos. The damsels of heaven honoured their rendezvous in the captivating quietude of the mountain. It seemed that even now the reverberating echoes of the palm-leaves in the mountain loudly implored Agastya to return.

With her encircling breezes like the arms of a beloved flowed Revā by the side of the mountain. Her sandy islands were the resorts of the heavenly couples. Hundreds of Kirātas thronged the place nearby

when they learnt about hidden treasures suggested by the perching of Khanjarīṭa birds in union.

The friends rested under a Jambu tree when it was slowly getting dark. Makaranda brought some fruits and roots and after pursuading Kandarpaketu to eat he also partook of the remaining fruits.

While Kandarpaketu with the thoughts of the damsel of the dream, slumbered in the bed prepared by Makaranda, he heard at midnight the conversation of a S'uka and a Sārikā. Lending their ears to the dialogue between the couple they heard the male bird saying, 'My dear, I have returned late not because I have been dangling with another of the fair sex but I heard an unprecedented story which I am going to tell you at your request.

"There was a city of Kusumpura full of beautiful buildings wherein lived citizens who were wise, strong, truthful, loving. Here the public women were a great attraction. The presiding deity of the city was Goddess Chaṇḍā whose sacred feet were adored by Gods and demons, who was a flame of destruction for the whole tribe of demons captained by S'umbha and Nis'umbha. Nearby flowed the Ganges like a stream of righteousness. The seven sages descended here to take their holy bath. Here swans and lotuses presented a pleasant sight. In the city lived its ruler S'ṛngāras'ekhara. He was strong and generous. His chief queen was Anangavatī who was fair and graceful like Pārvati. They had in their late age an only child named Vāsavadattā. Her youth gradually unfolded with the passing of the years, yet she was averse to any talk of marriage.

But who can withstand charms of spring when it has already come ! The travellers felt a longing for their beloveds when they heard the hum of the bees around the mango-blossoms. The cuckoo's notes filled the air. The young and the dandish murmured sweet nothings in the ears of their fair companions. The Bakula tree, the Ashoka and the Nāgakesara flower experienced new life.

The friends of the maiden conveyed her new emotion to her father who invited to his capital kings and princes from all quarters and proposed that his daughter should choose a husband from among them. At the proper time Vāsavadattā ascended a dais to survey the kings who had assembled there. Some of them were hopeful, others were doubtful, some invited the aid of astrologers while others were confident of their valour. She surveyed them, one and all and without hoosing any one from among them descended the dais and went away.

That same night she saw in a dream a young man, attractive and noble, valorous and virtuous, the very resort of the learned and the wise, a mirror to goodness, the origin of sciences and the treasure of beauty. She came to know in the very dream that he was Kandarpaketu, the son of King Chintāmaṇi. On seeing him she proclaimed as wasteful the efforts of Damayantī for Nala, of Indumatī for Aja, of S'akuntalā for Dushyanta, of Rambhā for Nalakūbara and of Dhumorṇā for Dharmarāja. The Creator desired to see his own competence in beautiful creation. Hence was created this Kandarpaketu with the aid of the most beautiful objects collected from the three worlds. With the day-break her torment increased. The efforts of her friends and maid-servants to calm her mind and body burning with desire and love proved fruitless. Her complaint was why her limbs, one and all were not made eyes. She only hoped that the guest of her eyes might experience as poignant a torment as was her own lot.

When consciousness was restored with the efforts of the friends, she wandered about the river-banks, the forests, the gardens and under the tree-shades. She spent her time tossing about in a flower-bed and on marble-slabs dripping with coolness and meditated on that charming full mouth, those warm lips rippling the smiles and that snow-white row of teeth. She blessed the places graced by his presence. Seeing her heading towards madness her 'confidante' Tamālikā, after consultation with the friends set out to find Kandarpaketu and know how he responded to the maiden's love. She came with me and at the moment stood under the tree."

Here ended the parrot's tale.

When Makaranda narrated the condition of Kandarpaketu and his wanderings in search of Vāsavadattā, Tamālikā was grateful and presented to Kanarpaketu a love-letter from Vāsavadattā. Delighted to hear the contents of the letter he was greatly happy and passed a day and a night in her company repeatedly asking Tamālikā about Vāsavadattā and her condition. The company started for the city of the father of Vāsavadattā.

By now the sun descended the horizon and it was evening. The crows flew into their nests. The apartments of beautiful damsels wafted scented breezes. The infants were lulled to sleep by the elderly women. Murmurs of love began on the lips of ladies. The peacocks returned to their resting rods. Darkness, the child of night and a friend of the wicked, gathered around. The shrill notes of the Kurara bird pierced the dome of silence. Stars began to twinkle. They

looked like white grains scattered around by the beatiful hands of Rati in company of Kāmadeva when he began his world-coquest. The Chakravāka pair was desolate. The heart of the lotus plant was broken into pieces. The row of bees moving around the lily assumed the role of a 'confidante' of the moon in love. The quarters were calm with grief at the passing away of their Lord, the Sun.

In a few moments the moon appeared looking like a breast of a female, like an ear-ornament of the sky, like a silver pot. The maid-servants on an errand from their love-tormented friends were eloquent with a thousand requests before the lovers. They implored them to return to the arms of their beloveds. The gentle evening breezes, the sighs of the night-damsel, carrying away the broken love-talk of the Shabara women united with their lords, welcomed the party when they reached the city.

Kandarpaketu saw the apartment of Vāsavadattā. It was like the sacrificial ground of Janaka, attractive to Rāma. It was an abode of astonishment, resort of love-play and a meeting place of beauty. Kandarpaketu was extremely joyful to find a bevy of beautiful damsels engaged in a number of pleasant activities. At last his eyes obtained the fruit of their struggle. He saw Vāsavadattā with a pair of full, reddish and well-built thighs, a slender waist, a resplendent form, adorned with ornaments and a pair of beautiful legs.

While Kandarpaketu was feeding his gaze in astonishment and love at the sight of Vāsavadattā he swooned with joy. So did Vāsavadattā at his sight. When they were brought back to consciousness they, sitting on the same seat exchanged sweet nothings. Kalāvatī, a friend of Vāsavadattā, explained to Kandarpaketu how Vāsavadattā had endured innumerable torments which could not be written by Brahmā or narrated by the Lord of Serpents. This was not the proper time for love-talk, for Vāsavadattā's father, vexed at her indecision in choosing a husband had decided to give her away to Puṣpaketu, the son of a Vidyādhara Chief. Kandarpaketu, fearing the situation asked Makaranda to remain behind to know what happened after they had gone, took a celestial steed Manojava and a twinkle was more than enough before they crossed a thousand miles to reach the Vindhya forest. Tired of the day-long journey they slept in a creeper bower.

While it was noon he got up and not finding Vāsavadattā either in the bower or under the trees or on their tops began to weep in helplessness. He lamented his ill-luck and could not decide what wrong he had done in his previous births that suddenly came to fruition in

this manner. Had he not studied the sciences humbly ? Had he not served the elders and the teachers ? Had he not offered oblations in the sacred fire ? Had he not provided shelter to the needy ? Verily the stars, ill-luck and Time were responsible, not he, for this. Getting out of the forest from its southern side he saw the surging ocean.

Suicide was his next thought. Although a person free from disease had no right to leave off life, the soul should depart, for there are a number of illustrations of persons crossing the boundaries of enjoined action. Chandra, Purūravas, Nahuṣa, Yayāti, Sudyumna, Soma, Purukutsa, Kuvalayās'va, Nṛga, Nala, Saṁvaraṇa, Das'aratha, Kārtavīrya, Manu, S'antanu and Yu hiṣṭhira are prominent examples of such persons. Hence shall I leave my life which no longer can bear separation from the beloved.

With solemn deliberation he prepared to abandon the body. When he completed his bath a voice from the sky promised him the union with his beloved within a short time and bade him desist from the action. Hope for the union rising anew in his mind, Kandarpaketu began to wander here and there waiting for the realisation of his desire.

Once while the rainy season gradually began to appear the dust-clouds descended, the lightning began to glow, the frogs began croaking and the travellers hastily planned homeward a return, Kandarpaketu inadvertently touched a stone-image which to his love-torn mind appeared resembing with his beloved and ah, heavens be praised, the stone-image turned into a real Vāsavadattā.

When they were free from a long and close embrace Vāsavadattā began, at Kandarpaketu's bidding, to relate the events after she had gone in search for some fruits for both of them in the Vindhya-forest. She narrated how she perceived an army-camp where the grass-huts were being hidden in trees, where the quarters for the courtesans were being set up and where flags were displayed. Having seen the camp she could not decide whether it was the army of her father come to search for her or the army of her lord. In an instant the general of the army, who ran towards her was attacked by another general, a Kirāta. Both the generals and their armies engaged themselves in a fierce battle. In the end they were destroyed.

The ascetic of the hermitage near the borders of which the fierce battle took place learnt about the destruction and suspecting Vāsavadattā as responsible for the destruction wrought to the Āshrama, he cursed her to get turned into stone but on further imploring took pity and made the 'termination of the curse concurrent with the touch of her lord.

Then Kandarpaketu in company of Vāsavadattā and Makaranda who had come up suddenly, went to his city and enjoyed to his heart's desire all those enchanting delights of union.

These outlines of the story of Vāsavadattā prove the utter disregard of the author for a consistent narrative. While we do not mourn the absence of any biographical detail on the part of our author who has given nothing except his name—this feature being one of the accepted peculiarities of Sanskrit literary chronology—we have absolutely no clue in understanding the exact location of places where the events of the narrative choose to take place. We do not know the state or the country where Chintāmaṇi ruled nor the city where his prince Kandarpaketu had a dream nor do we gather anything about the place that Kandarpaketu arrived at in company of his friend Makaranda, in search of the damsel of the dream. We cannot make out which direction of the vindhya or the adjoining forest they came to and rested. The motiffs of a parrot telling a tale of love and adventure to his female only to help the hero in finding the whereabouts of his beloved, of the curse of a sage who turns Vāsavadattā into a stone image, of the dreams of the hero and the heroine who fall in love with each other fondly hoping to get united for a life-time with the objects of their love visible only in a dream, and a love-letter are only conventional.

It is very likely that the poet is only selecting a few such motiffs to embellish his tale the incidents in which are loosely connected with one another. Such narratives seem to have been very current in Subandhu's days and he has tried to weave the incidents of different narratives into one single story which according to him should supply him with a good opportunity in describing a king, a prince, a princess, an ocean, a river, Vindhya mountain and the forest regions near by, cremation ground and a scuffle between two armies. In Bāṇa and in later writers like Somadeva, and Dhanapāla, the narratives are not much different.

The poets of the post-Gupta age had consciously developed stylistic embellishments at the cost of consistent delineation of the incidents of an interesting narrative. Subandhu is perhaps a brilliant exponent of this tendency which revels in descriptions of young men and their beloveds and some of the majestic aspects of nature like sunrise and sunset and the mountains and rivers, descriptions which were considered inevitable in a Mahākāvya and a Gadyakāvya from the time of Vālmīki, As'vaghoṣa and Kālidāsa.

There is very little of characterisation in Vāsavadattā. There are not more than four characters in the story and they are Kandarpaketu,

Vāsavadattā, Makaranda and Tamālikā. These persons speak and talk, move and act in a stereotyped manner. The heroism of Kandarpaketu is known to the author only for there is no occasion afforded to this poor lover to show his valour. Vāsavadattā is only a moving doll who swoons and is turned inadvertently into a stone image by an ascetic. We have some idea of her love-torments which she began to experience when she had seen Kandarpaketu in a dream and of her feelings which are set to a verse in Āryā. More realistic are the characters of the friend of Kandarpaketu and the 'confidante' of Vāsavadattā. Makaranda performs a timely duty of disuading Kandarpaketu from inactivity and infatuation, but he is not successful and has to help the hero in his important venture. Tamālikā has crossed those long and weary distances to arrange a meeting between Vāsavadattā and Kandarpaketu and to apprise him of the love-lorn condition of Vāsavadattā. We hear very little about these two helpful persons afterwards except that Makaranda gave company when the happy pair was repairing to the city of Kandarpaketu.

The emphasis on the part of Subandhu for form at the cost of matter is a conspicuous characteristic of Sanskrit literature of the Gupta and the post-Gupta age. During periods of civilisation when the atmosphere of the land is luxuriant, the aim of the writers is always to appeal to the scholar and to the elite without craving for appreciation from the less enlightened mass. Sanskrit poets and their compositions were appreciated by the kings and the chiefs of the land, who encouraged advance in learning and literary creation. A sanskrit poet always composed with one eye on the king or his patron and the other on the enlightened elite. While the patron made the poet free from economic worries the real judge of the poet was the scholar, the master in different arts and sciences. He had to be pleased. Thus a tendency among the poets developed to parade their knowledge of metrics, of rhetoric, of the dictionaries, of the science of erotics and of different systems of philosophy. Once such a tendency had struck its roots it was difficult for a writer to desist from that competition of showing off his skill in the form rather than in the ingenuity of the narration. Bhāravi emphasied Sphuṭatā, Arthagaurava, Girām pṛthagarthatā and Sāmarthya. Māgha emphasised the independent importance of both the word and the meaning. Subandhu demonstrated the conscious interweaving of words and letters in such a way that each word had a *double* or sometimes *treble entendre*. S'riharṣa boasted of his skill in stringing difficult words and expressions together with the poetic ones so that the ignorant wretch could never rush to understand them.

Almost similar conditions prevailed in cotemporary arts and sciences. The Sūtra and the Vārtika were now elaborately explained in the Bhāṣyas which were veritable mines of scholarship. The age of scholarly commentaries on the early-laid-out fundamentals of the sciences had already begun. Even the Purāṇas and the works on medicine and astrology thought themselves insufficient if they could not demonsrate their knowledge of the sciences which could hardly find a place in them. The poet could not be expected to remain ignorant of these developments when sometimes the king or the minister or the royal preceptor was an expert in one or many of them. This atmosphere had a direct influence on the form of the composition and generally on the style of the poet. Simplicity was discarded. Superflous words or words having little direct relation with the meaning intended to be conveyed were piled up for attaining a grandiose style and were mostly adopted to cover one's poverty of idea and imagination. Such अप्रयोजक epithets were अवकर and अप्रतिभोद्भव. Prolixity, vagueness and word-pomp (अत्युक्ति, प्रहेलिकाप्रायत्व, शब्दालङ्कारबाहुल्य and अर्थालङ्कारडम्बर) at the cost of simplicity, clarity, precision, plainness, elegance, sweetness and delicacy were developed. Such a development influencing the poets not gifted with Pratibhā was responsible for the criticism of this kind of style in a poetic composition When a poet like Bhāravi, Subandhu, Bāṇa or Māgha chose to accept this style the excesses of form were kept in control and were in proportion to individual enthusiasm and appreciative patronage.

These excesses were criticised by rhetoricians who went before Bhāmaha. They called such a style as Gauḍī and the simple and the elegant one as Vaidarbhī. These two 'Rītis' or concepts of literary style had three stages of developments. At first रीति developed as a 'geographical mode of literary criticism'. In the second stage it came to be 'stereotyped' wih reference to stylistic mode of composition and in the third stage रीति was related to the character of the poet. The earliest reference to different modes of literary criticism in context of their geographic association is found in Bāṇa who says.

श्लेषप्रायमुदीच्येषु प्रतीच्येष्वर्थमात्रकम् ।
उत्प्रेक्षा दाक्षिणात्येषु गौडेष्वक्षरडम्बरः ॥ Harṣacharita. v.7

The northerners employ श्लेष in their composition, the westerners are satisfied with 'bare idea', the southerners employ उत्प्रेक्षाs and the easterners employ pompous words. Bāṇa here gives expression to the popular characteristics of syle in different regions. Bāṇa is however not very dogmatic about it as he further says

नवोऽर्थो जातिरग्राम्या श्लेषोऽक्लिष्टः स्फुटो रसः ।
विकटाक्षरबन्धश्च कृत्स्नमेकत्र दुर्लभम् ।। Harṣacharita. v.8

From this verse it is quite clear that Bāṇa has not in mind the two specific modes of style viz. Vaidarbhī and Gauḍī.

It has been argned that the earliest mode that developed was Vaidarbhī, and that Danḍī had in mind the word डम्बर of Bāṇa when he wrote इत्यनालोच्य वैषम्यमर्थालङ्कारडम्बरौ। अवेक्षमाणा ववृधे पौरस्त्या काव्यपद्धतिः। काव्यादर्श. I-50

He employs the word मार्ग, पद्धति and वर्त्म but not रीति. Neither Bharata nor Bhāmaha accepts two separate modes of diction viz. वैदर्भी and गौडी. Dandī speaks of ten गुणs in poetic compositions as the very essentials of good poetry. It is pointed out that the sentence स्फुटलघुमधुरचित्रकान्त-शब्दसमयोदारालङ्कृतगद्यपद्यस्य··· in the Girnār Inscription of Rudradāman emphasises the ten guṇas which have been systematically enumerated by Dandin

श्लेषः प्रसादः समता माधुर्यं सुकुमारता
अर्थव्यक्तिरुदारत्वमोजःकान्तिसमाधयः I. 41.

Ānandavardhana does not give prominence to रीतिs but discusses वृत्ति and सङ्घटना. Dandī it seems, is prejudiced against Gaudī for although अर्थव्यक्ति, उदारत्व and समाधि are common essentials to both the Gaudī and Vaidarbhī he in a sweeping statement says एषां विपर्ययः प्रायो दृश्यते गौडवर्त्मनि । का द. I. 42. Bhāmaha is against condemning Gauḍī or praising Vaidarbhī. Both the styles should be accepted if they present the general features of good poetry. He emphasies that in all good poetry there should be अलङ्कारवत्व; अग्राम्यत्व, अर्थ्यत्व, न्यायत्व, अनाकुलत्व. Vaidarbhī, it is very likely, may degenerate into overdone simplicity resulting in baldness whereas in the same way Gaudī might develop the excesses of समास-भूयस्त्व and अलङ्कारडम्बर

गौडीयमिदमेतत्तु वैदर्भमिति किं पृथक् ।
गतानुगतिकन्यायात् नानाख्येयममेधसाम् ।। काव्यालङ्कार I. 32.

The nature of Subandhu's narrative should invite dicussion. *Bhāmaha*, probably the earliest known rhetorician clearly distinguishes between a *Kathā* and an *Ākhyayikā*. In the first chapter of his work *Kāvyālankāra* (Verses 25-29) *Bhāmaha* says that an *Ākhyayikā* is written in prose and is agreeable to the matter at hand, should contain verses in वक्त्र and अपरवक्त्र metres, the theme may be कन्याहरण, संङ्ग्राम, विप्रलम्भ, and नायकाभ्युदय, is divided into उच्छ्वासs and is narrated by the

hero. In a *Kathā* there are no such वक्त्र and अपरवक्त्र verses and no division into उच्छ्वासs., the story is narrated by some one other than the hero.

Dandin does not accept such divisions and regards them as mere formalities—

तत् कथाख्यायिकेत्येका जातिः संज्ञाद्वयाङ्किता । Kāvyādars'a I. 28 a

Our codex of Vāsavadattā emphasises that *Vāsavadattā* is a *Kathā*. The same thing is suggested by *Bāṇa* when he says धिया निबद्धेयमतिद्वयी कथा in the intro. verse no. 20 to *Kādambarī*.

Vāsavadattā begins with thirteen introductory stanzas in *Āryā*. The, narrative continues uninterrupted and without running into any divisions like उच्छ्वास. The other verses in the story are in शिखरिणी, शार्दूल and स्रग्धरा. Although there is सङ्ग्राम it is certainly not between a friend of the hero and his enemy. Although नायकोदय may be generally said to have occured there is no कन्याहरण. In this way Subandhu has a very novel way in his narrative. It is not yet understood as to who supplied Subandhu with the outlines of the plot. From the existing mass of narratives current in his days and found in collections like Bṛhatkathā Subandhu has selected not a highly effective and attractive narrative.

That Subandhu had before him a great mass of poetic compositions from which he could draw very freely can be proved from a number of parallel passages and verses which are common to Subandhu and other poets. In each case Subandhu is not the borrower. We shall perhaps never know who has been benefitted from whom by accepting a phrase or a group of alamkāras, ideas and turns of expression. The only conclusion that emerges is about the perrenial stream of thoughts and turns of expression common to these poets and authors among whom comparisons are noted.

1 (a) क्षणदागतसुरतवैयात्यवचनशतसंस्मारकगृहशुकचाटुव्याहृतिक्षणजनित-
मन्दाक्षासु । Vāsa. P. 8.l. 11

(b) प्रत्यूषे गुरुसंनिधौ गृहशुके तत्तद्रहो जल्पितं
प्रस्तोतुं परिहासकारिणि पदैरर्धोदितैरुद्यते ।
क्रीडाशारिकया निलीय निभृतं त्रातुं त्रपार्तां वधूं
प्रारब्धः सहसैव संभ्रमकरो मार्जारगर्जारवः ॥

Subhāṣitaratnakoṣa (Kosambi) v. 631

(c) Bāṇa has also a similar sentence

शुकसारिकाप्रकाशितसुरतविश्रम्भालापलज्जितावरोधजनेन ।
Kādambari P. 89. l. 21

2 (a) उद्वेल्लद्भुजवल्लीझणत्कारसुभगासु । Vāsa. P. 8. l. 8.

(b) The last line of the verse which begins with प्रारम्भे हसितं is,
गोपिभिर्भुजवल्लिकङ्कणझणत्कारोत्करास्तालिकाः ।

Kāvyakalpalatāvṛttiparimala as quoted by Zachariae: 'Bruchstrücke alter verse in der Vāsavadattā' P. 32 in Gurupūjā Kaumudi and his remarks "*So erscheint denn Subandhu als Nachahmer oder, wenn man will, geradezu als Kāvyachaura*".

3 (a) यस्य [च] समरभुवि भुजदण्डेन कोदण्डं, कोदण्डेन बाणाः, बाणैरिपुशिरः, तेनापि भूमण्डलं, तेन चाननुभूतपूर्वो नायकः, नायकेन कीर्तिः, कीर्त्या च सप्तसागराः, सागरैः कृतयुगादिराजचरितस्मरणं, अनेन च स्थैर्यं, अमुना च प्रतिक्षणमाश्चर्यमासादितम् । Vāsa. p. 6. l. 14.

(b) सङ्ग्रामाङ्गणमागतेन भवता चापे समारोपिते
देवाकर्णय येन येन महसा यद्यत्समासादितम् ।
कोदण्डेन शराः शरै रिपुशिरस्तेनापि भूमण्डलं
तेन त्वं भवता च कीर्तिरनघा कीर्त्या च लोकत्रयम् ।।

Subhāṣitaratnakoṣa (Kosambi) v. no. 1407 attributed to Karkarāja, a Kashmere Shivite. The verse is also quoted by Mammaṭa in his Kāvyaprakās'a VII. 229. X. 459.

4 (a) त्रिभुवनविजयप्रशस्तिरोमावलीकनकपत्रेण । Vāsa; p. 9. l. 5

(b) रोमावली कनकचम्पकदामगौर्या लक्ष्मीं तनोति नवयौवनसंभृतश्रीः ।
त्रैलोक्यलब्धविजयस्य मनोभवस्य सौवर्णपट्टलिखितेव जयप्रशस्तिः ।।

Subhāṣitaratnakoṣa (Kosambi) v. no. 394.

5 (a) अनिष्टोद्भावनरसान्तरं खलहृदयं भवति ।···आश्रयाशोऽपि मातरिश्वा,··· न काटवं जहाति । तालफलरस इवापातमधुरः परिणामविरसस्तिक्तश्च ।

Vāsa. p. 12. l. 5. ff.

(b) आश्रयाशः कृष्णवर्त्मा दहनश्चष दुर्जनः ।
अग्निरेव तथाप्यस्मिन्स्याद्भस्मनि हुतं हुतम् ।।

Subhāṣitaratnakoṣa (Kosambi) v. no. 1284

आरम्भरमणीयानि विमर्दे विरसानि च ।
and प्रायो वैरावसानानि संगतानि खलैः सह ।।

Subhāṣitaratnakoṣa (Kosambi) v. no. 1287.

6 (a) शनैश्चरेण पादेन, सौम्येन दर्शनेन, गुरुणा नितम्बेन, लोहितेनाधरेण, विकचेन विलोचनेन, ग्रहमयीमिव संसारभित्तिचित्रलेखामिव त्रैलोक्यसौन्दर्यसङ्केतभूमिमिव······कन्यकामपश्यत्स्वप्ने । Vāsa. p. 11. l. 4 ff.

(b) मुखेन चन्द्रकान्तेन महानीलैः शिरोरुहैः
पाणिभ्यां पद्मरागाभ्यां रेजे रत्नमयीव सा ॥
गुरुणा स्तनभारेण मुखचन्द्रेण भास्वता ।
शनैश्चराभ्यां पादाभ्यां रेजे ग्रहमयीव सा ॥
S'atakatrayādisubhāṣitasamgraha (Kosambi) v. no. 131, 132

7 (a) भवति सुभगत्वमधिकं विस्तारितपरगुणस्य सुजनस्य ।
वहति विकासितकुमुदो द्विगुणरुचिं हिमकरोद्योतः ॥ Vāsa. v. no. 5.

(b) मनसि वचसि काये पुण्यपीयूषपूर्णा—
स्त्रिभुवनमुपकारश्रेणिभिः प्रीणयन्तः ।
परगुणपरमाणून्पर्वतीकृत्य नित्यं
निजहृदि विकसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः ॥
S'atakatrayādisubhāṣitasamgraha (Kosambi) v. no. 19.

8 (a) त्वत्कृते यानया वेदनानुभूता सा यदि नभः पत्रायते सागरो लोलायते ब्रह्मा लिपिकरायते भुजगपतिर्वाक्कथकः तदा किमपि कथमपि एकैकैर्युगसहस्रैरभिलिख्यते कथ्यते वा । Vāsa. p. 39. l. 5

(b) वह्निस्तस्य जलायते जलनिधिः कुल्यायते तत्क्षणात्
मेरुः स्वल्पशिलायते मृगपतिः सद्यः कुरङ्गायते ।
व्यालो माल्यगुणायते विषरसः पीयूषवर्षायते
यस्याङ्गेऽखिललोकवल्लभतमं शील समुन्मीलति ॥
S'atakatrayādi Subhāṣitasamgraha Kosambi v. no. 324

(c) यदि पत्रायते व्योम मेलानन्दायतेऽर्णवः ।
ब्रह्मायते लिपिकरस्तथाप्यन्तः कुतो गिराम् ॥

Anekarthasamgraha v. no. 27 as referred by Zachariae : *Bruchstücke alter verse in der Vāsavadattā*; Gurupujākaumudī p. 39

Subandhu has taken note of some of the current poetic mannerisms which came down to him through poetic compositions in inscriptions.

1. In the description of King Chintāmaṇi and S'ṛngāras'ekhara he has followed the practice of comparing the king with famous mythological personalities.

(a) पृथिव्यामप्रतिरथस्य··· धनदवरुणेन्द्रान्तकसमस्य स्वभुजवलविजितानेकनरपति-विभवप्रत्यर्पणानित्यव्यापृतायुक्तपुरुषस्य··· 1 24-26
Allāhābad Pillar Inscription of Samudragupta (330-370 A.D.)

(b) वुध्या बृहस्पतिसमस्य कलेन्दुवक्त्रः ।
औपम्यभूत इव रामभगीरथाभ्याम् । v. no. 6.
Gangadhār stone inscription of Vis'vavarman (423 A.D.)

(c) धनदवरुणेन्द्रान्तकसमस्य कृतान्तपरशोः न्यायागतानेकगोहिरण्यकोटिप्रदस्य चिरोत्सन्नाश्वमेधाहर्तुः । 2

Bilsād Stone Pillar Inscription of Kumaragupta I (414-455 A.D.)

One can easily trace an influence of these comparisons in Vāsavadattā p. 20. l. 4—यो बलभिद् पावको धर्मराण् निर्ऋतिः प्रचेताः सदागतिर्धनदः शङ्कर इत्यष्टमूर्तिरप्यनष्टमूर्तिः ।

and Vāsavadattā p. 5. l. 12 राम इव जनितकुशलवयोरूपोच्छ्रायः ।

2 (a) यस्मै चानुगतदक्षिणसदागतये ·····प्रवालहारिण्यः विलसद्वयसस्तरुण्यः स्पृहयाञ्चक्रुः Vās. p. 6 l. 14. The sentence tells us of the yearning for marriage with Kandarpaketu on the part of young maidens.

(b) स्वयमधिगतमहाक्षत्रपनाम्ना नरेन्द्रकन्यास्वयंवरानेकमाल्यप्राप्तदाम्ना महाक्षत्रपेण रुद्रदाम्ना ।

Junāgaḍha Rock Inscription of Rudradāman (A.D. 150)

3 The description of Revā in Vāsavadattā (P. 15. Para 9) has some resemblance with similar descriptions in Vatsabhatti's Mandasor Stone Inscription of Kumaragupta (436 A.D.)

तटोत्थवृक्षच्युतनैकपुष्पविचित्रतीरान्तजलानि भान्ति ।
प्रफुल्लपद्माभरणानि यत्र सरांसि कारण्डवसङ्कुलानि ।। 7

and विलोलवीचीचलितारविन्दपतद्रजःपिञ्जरितैश्च हंसैः ।

The Nāsik Cave Inscription of Shri Pulumāyi bears a close relationship with the Gadya Kāvyas and that it especially contains many comparisons current in the latter. Sanskrit inscriptions of the eighth and ninth centuries consciously imitate Subandhu and Bāṇa. The Radhanpur plates of Govind III (of 808 A.D.) provide us with good examples of puns accepted from Subandhu, on मण्डल, कर्ण, दान, द्वादशरवि, सन्नक्षत्र, मुक्ताफल.

Subandhu's dependence on the Mahābhārata and the Rāmāyana is abundantly clear when we note that for each श्लेष, परिसङ्ख्या or विरोधाभास he comfortably falls back upon the stories, the incidents and the personalities and places famous in the epics.

दुःशासनदर्शनं भारते (4-2), भरतोऽपि रामदर्शितभक्तिरपि राज्ये विराममकरोत् (4-5), धृतराष्ट्रोऽपि गुणप्रियः (3-10), सदा पार्थोऽपि न महाभारतरणयोग्यः (5-3), राम इव जनितकुशलवयोरूपोच्छ्रायः (5-12), सुयोधनधृतिमिव कर्णविश्रान्तलोचनां (10 21), विराटलक्ष्म्येव आनन्दितकीचकशतया (17-3), भरतेनापि शत्रुघ्नेन (18-3), अर्जुनसमरमिव नन्दिघोषमुखरितदिगन्तं (24-2), केचिद्धार्तराष्ट्रा इव विश्वरूपावलोकनजनितेन्द्रजालोद्भुतप्रत्ययाः (24-10), भारतसमरमिव वर्धमानोलूककलकलं (30.10)

भारतेन सुपर्वणा (38-11), रामायणेनेव सुन्दरकाण्डचारुणा (38-11), भारतसमरभूमिमिव दूरप्ररूढार्जुनां, (40-9), पुलोमकुलस्थितिमिव सहस्रनेत्रोचिते-न्द्राणिकां (40-9), क्वचिद्राघव चित्तवृत्तिमिव वैदेहीमयीं (40-22), क्वचिद्वाल्मीकिसरस्वतीमिव दर्शितेक्ष्वाकुवंशां (40-14), लङ्कामिव बहुपलाशसेविता धार्तराष्ट्रसेनामिवार्जुनशरनिकरपरिवारितां, नारायण-मूर्तिमिव बहुरूपां, सुग्रीवसेनामिव पनसचन्दननलकुमुदसेवितां······क्वचित्कुरुसेनामिवोलूक-द्रोणशकुनिसनाथां धार्तराष्ट्रान्वितां च (40.15) and so on. It is clear from these references that Rāmāyaṇa and Mahābhārata (or Bhārata) had attained their final shape and the classification into काण्ड and पर्व had already been made and praised and that Sundarakāṇḍa had attained a place of special honour among the other kāṇḍas.

Subandhu's references to works and their authors are preferrably to older and less known works many of which could not be identified. He refers to persons like Sūrapāla and works like Gaṇikārikā (40-10), to kings like Brahmadatta and his Queen Somaprabhā (38-17), to Nāgarājya and Sudharmā, names which could not be easily explained except by recourse to useless conjectures. Among known works he refers to Mallanāga and his Kāmas'ātra (14-13), to Harivaṁsa (15-3), to Bṛhatkathā and its divisions into lambhakas (17-20) and important personalities in Bṛhatkāthā like Naravāhanadatta (14.9) and Priyangu-s'yāmā. In his references to music is reflected the development of different Rāgas. He refers to Rāgas like Bhāsa (7-12) which were popular among common masses and ascetics, for the roads were resonant with narrative songs entuned in Bhāsarāga by Kārpaṭikas. He refers to गान्धारविच्छेद (20-20) and मूर्छाविगम and चलरांगता in songs (21-1; 21-2). He knows the light musical compositions like चर्चरी which were highly popular (22-8) (charchari is a 'tāla' rather than a rāga. It can be compared with 'dhumali' in the Indian classical music). In his reference to literature there are a few very interesting statements which help us in understanding his ideas about poetic compositions. To him Puṣpitāgrā, S'ikhariṇī and Praharṣiṇī are some of the 'sukumāra lalita' types among Sanskrit metres (15.6) Acording to him poets should be endowed with deep insight (verse no. 1) who, blessed with the favour of Saraswati, are able to have an all-comprehensive vision of this universe (verse no. 1). Their compositions are charming with beautiful interweaving of s'leṣa and extensive sections called Ucchvāsas (32.4). In them the poet is able to demonstrate his skill in adoring each word with a double-meaning (2-16). These compositions are full of Utprekṣās (20-17) and stylistic devices like S'ṛnkhalābandha (20-17) A good poet is careful in seeing that useless expletives like 'tu', 'hi', 'ṇa' and so on are avoided.

His references to philosophical tenets are limited to older doctrines. He refers to early systems like मीमांसा (15-16), मीमांसकदर्शन (52-11), जैमिनिमत (24-7), श्रुतिवचन (32-4) and the non-brahmanical systems like दिगम्बरदर्शन (15-16); 32-11; 52-11), तथागतमत (24-7) and बौद्धसिद्धान्त (30-20).

The architectural references are numerous and varied and give us an idea of a full-scale building and its ancilliary structures. These are सुतलसन्निवेश (18-1), तोरण (9-3), कनकप्राकार (9-4), आलवालवलय (9-4), मण्डल-परिवेश (9-5), कनकपत्र (9-5); परिखावलय (9-6), शलाकागुण (9-6), गवाक्ष (18-1), कपाट (11-20), एकायतनशाला (11-10), भित्तिचित्रलेखा (11-6), मणिकुट्टिम (29-10), पट्टाङ्कण (35-15), करिणी (36-2) and so on.

That he follows the Kāmas'āstra tradition in describing the various actions pertaining to ladies and love is clear from his descriptions of भोगावास, (8-10) नखपद (8-9), नखालङ्कृतपयोधर (8-12), सीत्कार (8-9), सुरतवैयात्य-वचन (8-11), विदग्धमधुगोष्ठ्येव नानाविटपीतासवया (17-1), रणरणक (23-9), and so on.

Subandhu and Bāṇa

One of the most important aspects of the discussion concerning Subandhu is whether Subandhu preceded Bāṇa. We have already referred to this point earlier. Early scholarly opinion was divided on this crucial problem.

a Pandit Krishnamāchāriar : Vāsavadattā, Shrirangam 1906, intro. P. xlviii एतावता च पूर्वोक्तेषु सर्वेष्वपिहेतुपु निपुणमालोड्यमानेषु, क्रिस्ताब्दीय सप्तमशतकादिमभागोत्पन्नबाणभट्टादर्वाचीनः, अष्टमशतकमध्यमभागोत्पन्नालङ्कारि-कवामनात्प्राचीनश्च वासवदत्ताकर्ता सुबन्धुरिति सिद्धम् ।

b Peterson : Kādambari, intro. p. 72 opines as above but later (Intro. to Subhāṣitāvali p. 133) has 'seen reason to change' his opinion that 'Subandhu's Vāsavadāttā is doubtless the same as the work of that name referred to by Bāṇa'.

c Keith : History of Sanskrit literature, Oxford 1928, p. 307 says 'that Subandhu's work is meant is not now very seriously questioned'

d Kāṇe : Harṣacharita, Bombay 1918, intro. p. xii, it seems very propable that Subandhu the author of the present 'Vāsava-dattā preceded Bāṇa'.

We discuss below a few passages and sentences running almost iden-tical in Subandhu and Bāṇa and try to arrive at some conclusions. These parallel passages which are fairly numerous help us in arriving

at the correct text of the works of these two ancient writers and go a long way in assisting their interpretation A detailed list of such parallel passages appears as appendix I.

(a) 1 पृथुरपि गोत्रसमुत्सारणाद्विस्तारितभूमण्डलः ।
Vāsavadattā p. 6, l. 19.

1 पृथुरिव पृथिवीपरिशोधनावधानसङ्कलितसकलमहीभृत्समुत्सारणः ।
Harṣacharita p. 208, l. 15. (Nirṇayasāgar, Bombay 1946)

2 यस्य च···करतलताडनभीतैरिव मुक्ताहारैः पयोधरपरिसरो मुक्तः । V. p. 6. l. 19.

2 निर्दयकरतलताडनभियेव क्वापि गते हृदये । H. p. 182 l. 13.

3 विधातुरतिपीडयतः हस्तपरामर्शजनितपरिक्लेशेनेव क्षीणतरतामुपगतेन मध्यभागेनालङ्कृताम् । V. p 9 l. 10.

3 मन्ये च मातङ्गजातिस्पर्शदोषभयादस्पृशतेयमुत्पादिता प्रजापतिना अन्यथा कथमियमक्लिष्टता लावण्यस्य । न हि करतलस्पर्शक्लेशितानामवयवानामीदृशी भवति कान्तिः । Kādambarī, p. 11 l. 22. (Peterson, Bombay, 1885)

4 दशनरत्नतुलादण्डेन नयनसेतुसमुद्धतबन्धेन यौवनमन्मथवारणवरण्डकेनेव नासावंशेन परिष्कृताम् । V.p. 10 l. 16.

4 आयतननदीसीमान्तसेतुबन्धेन ललाटतटशशिमणिशिलातलगलितेन कान्तिसलिलस्रोतसेव द्राघीयसा नासावंशेन शोभमानम् । H.p. 22, l. 6.

5 स्तम्भनचूर्णमिवेन्द्रियाणां ··· कन्यकामपश्यत्स्वप्ने । V.p. 11, l. 9.

5 वशीकरणमन्त्रमिव मनसः, स्वस्थावेशचूर्णमिवेन्द्रियाणाम् । H.p. 23, l. 18.

6 अथ तां प्रीतिविस्फारितेन पिबन्निव चक्षुषा ·· । V.p. 11, l. 14

6 अथ सरस्वतीप्रीतिविस्फारितेन चक्षुषा प्रत्यवादीत् । H.p. 36, l. 11

7 अत्रान्तरे भगवानपि मरीचिमाली एनं वृत्तान्तमिव कथयितुं मध्यमं लोकमवातरत् । V.p. 28 l. 7.

7 अत्रान्तरे सरस्वत्यवतरणवार्तामिव कथयितुं मध्यमं लोकं अवततारांशुमालिः । H.p. 14 l. 3.

8 नायमुपदेशकालः । पच्यन्त इवाङ्गानि क्वथ्यन्त इवेन्द्रियाणि । V.p. 13, l. 14.

8 दूरातीतः खलूपदेशकालः······पच्यन्त इव मेऽङ्गानि । उत्क्वथ्यत इव हृदयम् । K.p. 156, l. 6.

9 विराटलक्ष्म्येवानन्दितकीचकशतया । V.p. 17, l. 3.

9 क्वचिद्विराटनगरीव कीचकशतावृता । K p. 20, l. 11.

10 तयोश्च मध्यमोपान्तवयसि वर्त-मानयोः कथमपि दैववशात् त्रिभु-वनविलोभनीयाकृतिः··· वासव-दत्ता नाम (तनया) बभूव।
V. p. 21, l. 12

10 पश्चिमे वयसि वर्त्तमानस्य कथमपि पितुरहमेवैको विधिवशात्सूनुरभवम्।
K. p. 25, l. 4

11 अत्रान्तरेऽभिसारिकासार्थप्रेषितानां प्रियतमान्प्रति दूतीनां द्वयर्थाः सप्रपञ्चाः विकारभङ्गुराः प्रवादा बभूवुः। V. p. 33, l. 16

11 आविर्भूतमदनरसानां चान्योन्यतः सपरिहासाः सविश्रम्भाः सेर्ष्याः सोत्प्रासाः साभ्यसूयाः सविलासाः समन्मथाः सस्पृहाश्च तत्क्षणं रमणीयाः प्रसस्रुरालापाः। K. p. 84, l. 12

12 नरवाहनदत्त इव प्रियङ्गुश्यामा सनाथः। V. p. 14, l. 9

12 नरवाहनदत्तचरितमिवान्तःसंवर्धित-प्रियदर्शनराजदारिकागन्धर्वदत्तोत्कण्ठम्। K. p. 91, l. 1

13 त्रिभुवनविजयप्रशस्तिरोमावली-कनकपत्रेण···मेखलादाम्ना परि-कलितजघनस्थलां, उन्नतपयोधर-भारान्तरित मुखदर्शनाप्राप्तिखेदे-नेव गुरुनितम्बपयोधरकुम्भपीडाज-नितायासेनेव पयोधरकलशयोः कथं मय्येव पातो भविष्यतीति चिन्त-येव···विधातुरतिपीडयतो हस्त-परामर्शजनितपरिक्लेशेनेव क्षीण-तरतामुपगतेन मध्यभागेनालङ्कृ-ताम्। V. p. 9, l. 5

13 प्रजापतिकरदृढनिष्पीडितमध्यभाग-गलितजघनशिलातलप्रतिघाताल्लावण्य-जलस्रोत इव द्विधागतमूरुद्वयं दधानां···, उन्नतकुचान्तरितमुखदर्शनदुःखेनेव क्षीय-माणमध्यभागां, त्रिभुवनविजयप्रश-स्तिवर्णावलीमिव लिखितां मन्मथेन रोमराजिमञ्जरीं बिभ्राणाम्।
K. p. 187, l. 3

14 रागसागरविद्रुमशकलेनेवाधरपल्ल-वेनोपशोभमानां···गतिप्रसररोधक-श्रवणकृतकोपेनेवोपान्तलोहितेन धवलतयेव जगदशेषम्।
V. p. 10, l. 9

14 रागसागरस्य तरंगाभ्यामिवोद्गताभ्यां विद्रुमलतालोहिताभ्यामधराभ्यां······ गतिप्रसरनिरोधीश्रवणकोपादिव-किञ्चिदारक्तापाङ्गेन निजमुखलक्ष्मी-निवासदुग्धोदधिना लोचनयुगलेन लोचनमयमिव जीवलोकं कर्तुमुद्यताम्।
K. p. 187 l. 18

In the above passages Bāṇa paraphrases Subandhu's words over and above accepting most of them. The general idea, the comparison, the restricting adjective and the verbal form are all followed after the pattern that Subandhu has presented. Bāṇa has a growing desire to

surpass Subandhu and therefore we find a compound of Subandhu elaborated and sometimes changed to form a separate clause.

Bāṇa's enthusiasm to improve upon Subandhu is so acute and impatient that it lends him into using unwanted words like आविर्भूतमदनरसानां instead of अभिसारिकासार्थप्रेषितानां of Subandhu and ignoring repetitions in सेर्ष्याः and साभ्यसूयाः, सविश्रम्भाः and सविलासाः and rests content only after using nine adjectives as against three of Subandhu (cp. no. 11)

From paras 13 and 14 it is clear that Bāṇa's description of Kādambarī is modelled on that of Vāsavadattā of Subandhu. Subandhu and Bāṇa describe their heroines from the lower limbs of the body. While Subandhu is content with describing in great detail the more prominent and better known limbs of a feminine form often ignoring consistency and repetition, Bāṇa is definitely superior in meticulously noting each limb of his heroine starting with चरणद्वय and ending with the description of दीर्घकेशकलाप. Bāṇa is clear, consistent, logical and restrained while Subandhu is at times unnecessarily elaborate and allows himself the tempation of describing the beauty of Vāsavadattā's breasts.

(b) क्रमेण च रजोलुठितोत्थितकुलायार्थि-कलहविकलकलविङ्ककुलकलकल-वाचालितशिखरेषु शिखरिषु, वसति-साकाङ्क्षेषु ध्वाङ्क्षेषु, अनवरतदह्य-मानकालागुरुधूपपरिमलोद्गारेषु वासा-गारेषु, दूर्वान्विततटिनीबद्धगोष्ठीक-विदग्धजनप्रस्तूयमानकथाश्रवणोत्सुक-शिशुजनकलकलनिवारणकुपितश्रद्धेषु वृद्धेषु, [1][आलोलिकातरलरस-नाभिः कथितकथाभिर्जरतीभिरति लघुकरताडनजनितसुखे, शिशयिषमाणशिशुजने], विरचितकन्दर्पमुद्रासु, क्षुद्रासु, कामुकजनानुबध्यमानदासीजन-विविधाश्लीलवचनश्रुतिविरसीकृत-सन्ध्यावन्दनोपविष्टेषु शिष्टेषु, [2][रोमन्थमन्थरकुरङ्गकुटुम्बकाध्या-स्यमानअदिष्ठगोष्ठीनपृष्ठाध्वरण्य-स्थलीषु], [3] निद्राविनिद्राणद्रोण-कुलकलितकुलायेष्वारामतरुषु],

बाणोऽपि निर्गत्य धौतारकूटकोमलातपत्विषि निर्वाति वासरे, अस्ताचलकूटकिरीटे निचुलमञ्जरीभासि तेजांसि मुञ्चति वियन्मुचि मरीचिमालिनि, [2][अतिरोमन्थमन्थरकुरङ्गकुटुम्बकाध्यास्यमान-अदिष्ठगोष्ठीनपृष्ठास्वरण्यस्थलीषु], शोकाकुलकोककामिनीकूजितकरुणासु तरङ्गिणीतटिषु, वासविटपोपविष्टवाचाट-चटकचक्र [7][वालेष्वालवालावर्जित-सेकजलकुटेषु निष्कुटेषु] दिवसहृतिप्रत्यागतं प्रसृतस्तनं स्तनन्धये धयति धेनुवर्गमुद्गत-क्षीरंक्षुधिततर्णकव्राते, क्रमेण चास्तधराधर-धातुधुनीपूरप्लावित इव लोहितायमानम-हसि मज्जति सन्ध्यासिन्धुपानपात्रे पातङ्गे मण्डले, कमण्डलुजलशुचिशयचरणेषु चैत्य-प्रणतिपरेषु पाराशरिषु, यज्ञपात्रपवित्रपाणौ प्रकीर्णबर्हिष्युत्तेजसि जातवेदसि, हवींषि वषट्कुर्वति यायजूकजने, [3][निद्राविद्राण-द्रोणकुलकलिलकुलायेषु कापेयविकलकपि-

[4][निर्जिगमिषति जरत्तरुकोटरकुटीरकुटुम्बिनि कौशिककुले] [5][तिमिरतर्जननिर्गतासु दहनप्रविष्टदिनकरकिरणास्विव स्फुरन्तीषु दीपलेखासु], [6][मुखरितधनुषि वर्षति शरनिकरमनवरतमशेषसंसार-शेमुषीमुषि मकरध्वजे सुरतारम्भाकल्पशोभिनि, शम्भलीभाषितभाजि भजति भूषां भुजिष्यजने, सैरन्ध्रीबध्यमान-रशनाजाल-जलपाकजघनासु जनीषु ,] वि-श्रान्तकथानुबन्धतया प्रवर्तमानकथकजनगमनत्वरेषु चत्वरेषु, [7][समावासितकुक्कुटेषु निष्कुटेषु], कृतयष्टिसमारोहणेषु बर्हिणेषु, विहितसन्ध्यावन्दनव्यवस्थितेषु गृहस्थेषु, [8] [सङ्कोचोदञ्चदुच्च-केसरकोटिसङ्कटकुशेशयकोशकोटरकुटीरशायिनि षट्चरणचक्रे] अथानेन प्रवर्तता [वर्त्मना] भगवता भानुनागन्तव्यमितिसर्वपट्टमयैर्वसनैरिव मणिकुट्टिमाभिर्विरचितवरुणेन, भगवता कालेन कृत्तस्य दिवसमहिषस्य रुधिरधारेव, विद्रुमलतेवाम्बरमहार्णवस्य, रक्तकमलिनीव गगनतटाकस्य, काञ्चनसेतुरिव कन्दर्पस्य, मञ्जिष्ठारागारुणपताकेव गगनहर्म्यतलस्य, लक्ष्मीरिव स्वयंवरगृहीतपीताम्बरस्य, भिक्षुकीव तारानुरागरक्ता, रक्ताम्बरधारिणीव भगवती सन्ध्या समदृश्यत ।

V. p. 28, l. 20—V. p. 30, l. 2

कुलेष्वारामतरुषु], [4][निर्जिगमिषति जरत्तरुकोटरकुटीरकुटुम्बिनि कौशिककुले] मुनिकरसहस्रप्रकीर्णसन्ध्यावन्दनोदबिन्दुनिकर इव दन्तुरयति तारापथस्थलीं स्थवीयसि तारकानिकुरम्बे अम्बराश्रयिणि शर्वरीशबरीशिखण्डे, खण्डपरशुकण्ठकाले कवलयति बाले ज्योतिःशेषं सान्ध्यमन्धकारावतारे, [5][तिमिरतर्जननिर्गतासु दहनप्रविष्टदिनकरकरशाखास्विव स्फुरतीषु दीपलेखासु], अररसम्पुटसङ्पीडनकथितावृत्तिष्विव गोपुरेषु; [1] [शयनोपजोपजुषि जरतीकथितकथे शिशयिषमाणे शिशुजने] जरन्महिषमषीमलीमसतमसि जनितपुण्यजनप्रजागरे विजृम्भमाणे भीषणतमे तमीमुखे [6][मुखरितविततज्यधनुषि वर्षति शरनिकरमशेषसंसारशेमुषीमुषि मकरध्वजे रताकल्पारम्भशोभिनि शम्भलीसुभाषितभाजि भजति भूषां भुजिष्यजने, सैरन्ध्रीबध्यमानरशनाजालजलपाकजघनासु जनीषु……।]

H. p. 80., l. 8—H.p. 81 l. 11

क्रमेण च···[10] [सुरतभरखिन्नपुलिन्दसुन्दरीस्वेदकणिकापहारिणि] प्रतिवाति [9] [सायन्तने तनीयसि निशानिःश्वासनिभे नभस्वति] कन्दर्पकेतुस्तमालिकासहायो वासवदत्ताजनकनगरीमयासीत् ।

V. p. 35, l. 6 ff.

अत्रान्तरे सरस्वत्यवतरणवार्तामिव कथयितुं मध्यमं लोकमवततारांशुमाली । क्रमेण च मन्दायमाने···वासरे···[9][सायन्तने तनीयसि निशानिःश्वसनिभे नभस्वति], [8] [सङ्कोचोदञ्चदुच्चकेसरकोटीसंकटकुशेशयकोशकोटरकुटीशायिनि षट्चरणचक्रे] ·· सावित्री···सरस्वतीमवादीत् ।

H. p. 14, l. 3—H. p. 16 l. 10

[10][रतिखिन्नशबरसीमन्तिनीस्वेदजल-
कणिकापहारिणी] ··· मन्दमन्दसञ्चारिणी
प्रवाति प्राभातिके मातरिश्वनि··· ।

K. p. 26 l. 8

In the above passage ten groups of exactly similar sentences are found. Bāṇa, it can be very easily seen has bodily taken them from Subandhu without the change even of a letter. In group no. 2 he adds अति before रोमन्थ, in group 6 he puts the word रत instead of सुरत of Subandhu and in group no. 1 it is Bāṇa who is guilty of clumsily wording the beautiful and realistic picture that Subandhu offers.*

(c) प्रियसखि अनङ्गलेखे वितर [मे] हृदये पाणिपाददुःसहो विरहसन्तापः, मुग्धे मदनमञ्जरि सिञ्च चन्दनोदकेन [1][सरले वसन्तसेने संवृणु केशकलापपाशं,] तरले लवङ्गवति विकिर केतकधूलिं, मालिनि अलं शैवलदलेन, चपले चित्रलेखे लिख चित्रे चित्तचोरजनं, भामिनि विलासवति विक्षिप मुक्ताचूर्णनिकरं, [2][रागिणि रागलेखे स्थगय नलिनीदलसमूहेन पयोधरभरम्] सुकान्ते कान्तिमति मन्दं मन्दमपनय वाष्पविन्दून्, यूथिकालङ्कृते यूथिके सञ्चारय नलिनीदलार्द्रवातान्·······।

V. p. 26, l. 8 ff.

द्रवसि द्रवसिन्धुतो निगलिते चपला चपलायते किमेषा। स्तबकस्तव कर्णतः पतितोऽयम् । सुरेखे सुरया सुरयाचनोचितश्रीस्त्वमसि । मत्ता कलहे कलहेमदामकाञ्चीदामक्वणितैः स्मरमिवाह्वयसि । मलये मलयेप्सितं आविर्भूतमदनरसानां चान्योन्यतः सपरिहासाः ससंभ्रमाः सेर्ष्याः सोत्प्रासाः साभ्यसूयाः सविलासाः समन्मथाः तत्क्षणं रमणीयाः प्रसस्रुरालापाः । तथा हि त्वरितगमने मामपि प्रतिपालय । दर्शनोन्मत्ते गृहाणोत्तरीयम् । उल्लासयालकलतामाननावलम्बिनीं मूढे । चन्द्रलेखामुपहारोपहारकुसुमस्खलितचरणा पतसि मदनान्धे । [1][संयमय मदनिश्चेतने केशपाशम्], उत्क्षिप चन्द्रापीडदर्शनव्यसनिनि काञ्चीदामकम् । उत्सर्पय पापे कपोलदोलायितं कर्णपल्लवम् । अहृदये गृहाण निपतितं दन्तपत्रम् ।[2] [यौवनोन्मत्ते विलोक्यसे जनेन स्थगय पयोधरभारम्] अपगतलज्जे शिथिलीभूतमाकलय दुकूलम् । अलीकमुग्धे द्रुततरमागम्यताम् । कुतूहलिनि देहि दर्शनान्तरम् । असंतुष्टे कियदालोकयसे । तरलहृदये परिजनमपेक्षस्व । पिशाचि गलितोत्तरीया हस्यसे जनेन । रागावृतनयने पश्यसि न सखीजनम् । अनेकभङ्गिविकारपूर्णे दुःखमकारणमायासित-

*In these passages it can be easily perceived that the text of Harṣcharita awaits amendation at the hands of a careful editor. रत can be changed into सुरत and the addition of अति and the attempt at simplicity resulting in a jumble of phrases may be the work of an irresponsible scribe.

दृशैवाधिगतासि । कलिके कलिकेतुमिमां मुखरां मुञ्च मेखलां शृगुवः कलवल्लकीविरुतम्। मेखला मे खला न भवति, त्वमेव त्वमेव मुखरतया मुखरतया च। अपतेऽत्र पतेदियमवन्तिसेनाकुसुमोपहारे मुग्धा तव कैतवकैरलं, लवङ्गिके वेपथुरेवाशयं व्यनक्ति। वहतीव हृतिरनङ्गलेखे स्मरसायकानां तव वपुरलसम्। पिहितापि हितायते। उत्कलिके तवोत्कलिकामहोर्मिः। वदने वद नेत्रपेयकान्तौ किमुपमानमिन्दुरप्युपयाति। वसतीव सतीव्रते तव हृदये कोऽपि। शतधा शतधारसारावाचस्तवानुभूताः। केरलि करकाकरकालमेघखण्डतुलामयमुल्लसितोत्फुल्लमल्लिकामालभारी [तव याति] कुन्तलकलापः। कुन्तलिके पुरगोपुरगोचराः श्रूयन्ते गीतध्वनयः। किमत्र कल्पयसि क्षणमीक्षणभीलनात्। अपि चटुलं चटुलम्पटं सखीजनमायासयसि। मुरले स्तनता स्तनाडनेषु यत्सौख्यं लब्धं स्मरता स्मरतापनोदनं तदियं तेन वियुक्ता किं मुह्यसि। हतमोहतमो दयितः स्मरति स्म रतिप्रियं तवकौशलम्। नखराणां व्रणः स्मरजन्यां स्म रजन्यां कुरुते रुजं न ते। किं लोचनाभ्यां लोचनाभ्यां प्रीणिताखिलजनेक्षणदेशः क्षणदेशः किं न पीयते। प्रियसखि मदनमालिनि मालिनि बिम्बाधरसङ्गत्यागेच्छया विरामं कुरु। मधुमदारुणमाल्वीकपोलतलसमानोऽभ्रान्तसमानो रक्तमण्डलतया त्वया को विशेषः। कुरङ्गिके कल्पय कुरङ्गशावकेभ्यः शष्पाङ्कुरम् किशोरिके कारय किशोरकप्रत्यवेक्षाम् तरलिके तरलय गुरुहृदया जीवसि। मिथ्याविनीते किं व्यपदेशवीक्षितैर्विश्रब्धमालोकय। यौवनशालिनि किं पीडयसि पयोधरभारेण। अतिकोपने पुरतो भव। मत्सरिणि किमेकाकिनी रुणत्सि वातायनम्। अनङ्गपरवशे मदीयमुत्तरीयांशुकमुत्तरीयतां नयसि। रागासवमत्ते निवारयात्मानम्। उज्भितधैर्ये किं धावसि गुरुजनसमक्षम्। उल्लसत्स्वभावे किमेवमाकुलीभवसि। मुग्धे निगूहस्व मदनज्वरजनितपुलकजालकम्। असाध्वाचरणे किमेवमुत्ताम्यसि। बहुविकारे विविधाङ्गभङ्गवलनायासितमध्यभागा वृथा खिद्यसे। शून्यहृदये स्वभवनान्निर्गतमपि नात्मानमवगच्छसि। कौतुकाविष्टे विस्मृतासि निःश्वसितुम्। अन्तःसंकल्परचितरतसमागमसुखरसनिमीलितलोचने समुन्मीलय लोचनयुगलमतिक्रामत्ययम्। अनङ्गशरप्रहारमूर्छिते रविकिरणनिवारणाय कुरु शिरस्युत्तरीयांशुकपल्लवम्। अयि सतीव्रतग्रहगृहीते द्रष्टव्यमपश्यन्ती वञ्चयसि लोचनयुगलम्। अधन्ये हतासि परपुरुषदर्शनपरिहारव्रतेन। प्रसीदोत्तिष्ठ सखि पश्य रतिविरहितं साक्षादिव भगवन्तमगृहीतमकरध्वज मकरध्वजम्।

K. p. 84, l. 12 ff.

तस्य चैवंविधस्य किञ्चिदभ्यन्तरमतिक्रम्येतश्चेतश्च परिभ्रमतः कादम्बरीप्रत्यासन्नस्य परिजनस्य शुश्राव तांस्तानतिमनोहरानालापान्। तथा हि। लवलिके कल्पय केतकधूलिभिर्लवलीलतालवालमण्डलानि। सागरिके गन्धोदककनकदीर्घिकासु विकिर रत्नवालुकाम्। मृणालिके कृत्रिमकमलिनीषु कुङ्कुमरेणुमुष्टिभिश्छुरय यन्त्रचक्रवाकमिथुनानि। मकरिके कर्पूरपल्लवरसेनाधिवासय गन्धपात्राणि। रजनिके तमालवीथिकान्धकारेषु निधेहि मणिप्रदीपान्। कुमुदिके स्थगय शकुनिकुलरक्षणाय मुक्ताजालैर्दाडिमी-

सान्द्रधूपपटलम् । कर्पूरिके पाण्डुरय कर्पूरधूलिभिः पयोधरभारम्। मातङ्गिके मानय मातङ्गशिशुयाचनाम्। शशिलेखे लिख ललाटपट्टे शशिलेखाम् । केतकिके सङ्केतय केतकीमण्डपस्य दोहदम् । शकुनिके देहि क्रीडाशकुनिभ्य आहारम् । मदनमञ्जरि मञ्जरय सभामण्डपकदलीगृहम् । शृङ्गारमञ्जरि सङ्कल्पय शृङ्गाररचनाम्, [3][सञ्जीवनिके वितर जीवज्जीवकमिथुनाय मरिचपल्लवम् ।] पल्लविके पल्लवय कर्पूरधूलिभिः कृत्रिमकेतकाननम् । सहकारमञ्जरि सञ्जनय सहकारसौरभं व्यजनवातेषु । मदनलेखे लेखय मदनलेखं मलयानिलस्य । मकरिके देहि मृणालाङ्कुरं राजहंसशावकेभ्यः । विलासवति विलासय मयूरकिशोरकं। तमालिके परिमलय मलयजरसेन भवनवाटम् । काञ्चनिके विकिर कस्तूरिद्रवं काञ्चनमण्डपिकायाम् । प्रवालिके सेचय घुसृणरसेन बालप्रवालकाननम् ।

V. p. 36, l.10—V. p. 38, l. 5

फलानि । निपुणिके लिख मणिशालभञ्जिकास्तनेषु कुङ्कुमरसपत्रभङ्गान् । उत्पलिके परामृश कनकसंमार्जनीभिः कदलीगृहमरकतवेदिकाम् । केसरिके सिञ्च मदिरारसेन बकुलकुसुममालागृहाणि । मालतिके पाटलय सिन्दुररेणुना कामदेवगृहदन्तवलभिकाम् । नलिनिके पायय कमलमधुरसं भवनकलहंसान्। कदलिके नय धारागृहगृहमयूरान् । कमलिनिके प्रयच्छ चक्रवाकशावकेभ्यो मृणालक्षीररसम् । चूतलतिके देहि पञ्जरपुंस्कोकिलेभ्यश्चूतकलिकाङ्कुराहारं [3][पल्लविके भोजय मरिचाग्रपल्लवदलानि भवनहारीतान् ।] लवङ्गिके विक्षिप चकोरपञ्जरेषु पिप्पलीतण्डुलशकलानि । मधुकरिके विरचय कुसुमाभरणकानि । मयूरिके सङ्गीतशालायां विसर्जय किंन्नरमिथुनानि । कदलिके समारोहय क्रीडापर्वतशिखरं जीवंजीवमिथुनानि । हरिणिके देहि पञ्जरशुकसारिकाणामुपदेशम् ।

K.p. 184, l. 7—K. p. 185 l. 3

The paras quoted above will leave little doubt that the description of प्रमदालापा : in Bāṇa is fashioned on that found in Subandhu. In the first paragraph in Bāṇa we can see sentences like संयमय मदनिश्चेतने केशपाशम् and यौवनोन्मत्तो विलोकयसे जनेन स्थगय पयोधरभारम् echoing similar words and sentences in Subandhu. In the second para quoted above, Bāṇa has decided to surpass Subandhu so that whereas Subandhu is gracefully expressing some of the finer emotions of the damsels at play without loosing an opportunity to show his skill in श्लेष and अनुप्रास, Bāṇa accepts a wider range and shows skill in and fondness for describing the activities of royal ladies and their kind. Here also sentences like पल्लविके भोजय मरिचाग्रपल्लवदलानि भवनहारीतान् have their basis in Subandhu's words like सञ्जीवनिके वितर जीवज्जीवकमिथुनाय मरिचपल्लवम् ।

(d) Another important parallel is Vāsavadattā page 43 l. 20 to Vāsavạdattā page 45. l. 5 and Harshacharita page 234 l. 1 to Harshacharita p. 235 l. 13 where in describing and enumerating the trees Bāṇa has literally copied from Subandhu (cp. Appendix I no. 37) and has not cared to change even a word. His only contribution in this paragraph of Harshacharita is the addition of a few more sentences between those which he has bodily taken from Subandhu; the conclusion therefore is that so far as Harshacharita is concerned Bāṇa was not able to show himself completely independent of the literary tradition and Subandhu. Small phrases, compounds, expressions of comparision and modes of alliteration like आश्रितनन्दन (H. p. 40 l. 2), महोभृत्समुत्सारण (H. p. 208. l. 15), महाभारतरणयोग्य (H. p. 76. l. 4) उत्कलिकाबहुल (H. p. 37. l. 12), प्रीतिविस्फारितेन चक्षुषा (H. p. 36. l. 11), जघन्यकर्मलग्न (H. p. 222. l. 14), सहपांसुक्रीडापरिचय (H. p. 17. l. 10), षट्चरणचक्र (H. p. 15. l. 9), नानारामाभिराम (H. p. 97. l. 1) scattered in Harshacharita are also found in Vāsavadattā.

(e) The list of Kings who came to trouble on account of some flaw in their character (cp. Appendix I no. 38 Vāsavadattā p. 46. l. 14 to Vāsavadattā p. 47. l. 4 and Harṣacharita p. 87. l. 9 to Harṣacharita p. 90. l. 5) is another example of Bāṇa's dependence on Subandhu. As will be pointed out the list is traditional, having its origin in the epics, found with changes in Kauṭalya, Vātsyāyana and Varāhamihira and later on introduced with some changes by prose-writers like Somadeva and Dhanapāla. We have sixteen short sentences in Subandhu which give the account of sixteen ancient personalities and their moral lapses. With similar puns we have twenty short sentences in Bāṇa which give twenty names, the order of the sixteen in Subandhu being the same as the order of the first sixteen in Bāṇa except that the names of मांधाता, पृथु, सौदास, and पाण्डु are added, the additions can be accounted for by the enthusiasm of scribes.

Some other parallels in thought, arrangement and general treatment may he pointed out. The description of Vindyāṭavī (Kādambarī p. 19 l. 1 to Kādambarī p. 20 l. 15), that of Ujjayinī (Kādambarī p. 50 ff.) that of the first interview between Kādambarī and Chandrāpīda (Kādambarī p. 182 ff.) follow similar descriptions of विन्ध्यो नाम महागिरिः (Vāsavadattā p. 13. l. 18 to Vāsavadattā p. 14. l. 21) and विन्ध्याटवी (Vāsavadattā p. 39. l. 17 to Vāsavadattā p. 41-l. 2), of Kusumapura (Vāsavadattā p. 17) and कन्दर्पकेतु's entry into Vāsavadattā's palace and meeting her (Vāsavadttā p. 36 ff. and p. 39). In Vāsavadattā and

Kādambarī we have similar plans of describing palaces, seasons, cities, kings, heroes, speeches and forests. The motif of a parrot reciting the story or giving expression to the clues to further events, the faithful following of the tradition of the science of rhetorics and the Kāmasūtra in describing anything pertaining to love and lovers and the orderly treatment of these following a definite plan go a long way in proving Bāṇa's dependence on Subandhu. Bāṇa increases the number of alliterations and mythological allusions over Subandhu. Many times he introduces words to obtain longer and more fully sounding compounds. In describing kings, heroes and heroines the same method of introducing परिसंख्या and विरोध is followed by Bāṇa (cp. the description of चिन्तामणि in Vasavadattā p. 3 and S'ūdraka and Tārāpīḍa in Kādambarī p. 5, 53, 54)

From the above discussion it can be proved that in Bāṇa and particularly in his Kādambarī there is a definite and growing desire to surpass Subandhu's work, which we find fulfilled. The great french novelist Balzac had an ambition to surpass in literature the glory of earlier writers and his model of fame was Napolean. In the same way Bāṇa desired to surpass the fame of Guṇāḍhya and Subandhu by writing an अतिद्वयीकथा and be an equal in everlasting glory with his patron Harshavardhana whose ambition as the strongest king in Northern India was achieved at least for some years. In spite of Bāṇa's remarks against plagiarists (कुकवयः, कोकिला इव वाचालाः, श्वान इव, कवयः शरभा इव, कविश्चोरः Harṣacharita Intro. verses 4, 5 and 6) it is not something strange that he should imitate Subandhu, for, the literary tradition in India anticipates a detailed study of the earlier writers and sciences on the part of a young aspirant in literature. It was a regular practice of Indian poets to lift an idea or an expression from an earlier writer, dress it in a different garb and try to demonstrate his superiority in skill. It was perhaps this in Rājas'ekhara's mind when he declared in a lighter vein नास्त्यचौरः कविजनः Moreover, imitation may not always be conscious, the impression or echo of an earlier thought or reading suddenly rushing in the mind without the knowledge of the imitator. Scholar scribes would also contribute not a little to this for, to suit their fancy they altered the text of the one with the borrowings from the other. Another instance of Bāṇa's indebtedness to Subandhu is the list of kings who came to trouble on account of some flaw in their character. Such a list which accepts the names of kings found in a similar enumeration in Subandhu is the one found in Harṣacharita. In this case Bāṇa as well as Subandhu are following the traditional literary conventions, for such lists are found in Kauṭilya, Vātsyāyana and Dandin also.

(a) यथा दाण्डक्यो नाम भोजः कामाद्ब्राह्मणकन्यामभिमन्यमानः सबन्धुराष्ट्रो विननाश । करालश्च वैदेहः । कोपाज्जनमेजयो ब्राह्मणेषु विक्रान्तः । तालजङ्घश्च भृगुषु । लोभादैलश्चातुर्वर्ण्यमत्याहारयमाणः सौवीरश्चाजबिन्दुः । मानाद्रावणः परदारानप्रयच्छन् दुर्योधनो राज्यभ्रंशंच । मदाद्दम्भोद्भवो भूतावमानी हैहयश्चार्जुनः । हर्षाद् वातापिरगस्त्यामत्यासादयन् वृष्णिसङ्घश्च द्वैपायनमिति ।

अधिकरण, १-अध्याय ६ (p. 7 Shāmashāstri's edition)

(b) Vatṣyāyana also refers to some kings who came to trouble on account of their unhealthy attachment to sensual pleasures (Kāmasūtra II. i.)

बहवश्च कामवशगाः सगणा एव विनष्टाः श्रूयन्ते । यथा दाण्डक्यो नाम भोजः कामाद् ब्राह्मणकन्यामभिमन्यमानः सबन्धुराष्ट्रो विननाश । देवराजश्चाहल्यामतिबलश्च कीचको द्रौपदीं रावणश्च सीतामपरे चान्ये च बहवो दृश्यन्ते कामवशगा विनष्टा इत्यनर्थचिन्तकाः ।

(c) Dandin has also a list of the great personalties of the past who indulged in some immoral act but with remorse and better action later on were able to cast away the sin (Dashakumāracharita: Bombay 1936 p. 84. l 11)

तत्त्वदर्शनोपबृंहितश्च यथाकथंचिदप्यनुष्ठीयमानाभ्यां नार्थकामाभ्यां बाध्यते । बाधितोऽपि चाल्पायासप्रतिसमाहितस्तमपि दोषं निर्हृत्य श्रेयसेऽनल्पाय कल्पते । तथाहि पितामहस्य तिलोत्तमाभिलाषः, भवानीपतेर्मुनिपत्नीसहस्रसंदूषणम्, पद्मनाभस्य षोडशसहस्रान्तःपुरविहारः, प्रजापतेः स्वदुहितर्यपि प्रणयप्रवृत्तिः, शचीपतेरहल्याजारता, शशाङ्कस्य गुरुतल्पगमनम्, अंशुमालिनो वडवालङ्घनम्, अनिलस्य केसरिकलभसमागमः, बृहस्पतेरुतथ्यभार्याभिसरणम्, पराशरस्य दाशकन्यादूषणम्, पाराशर्यस्य भ्रातृदारसंगतिः, अत्रेर्मृगीसमागम इति ।

While Kauṭilya and Vātsyāyana list some of the historical personalities, Dandin's list enumerates persons known to mythology only.

(d) Subandhu's list contains names of historical, mythological and legendary personalities.

तथाहि । गुरुदाहरणं द्विजराजोऽकरोत् । पुरूरवा ब्राह्मणधनतृष्णया विननाश नहुषः परकलत्रदोहदी महाभुजग आसीत् । ययातिराहितपाणिग्रहणः पपात । सुधुम्नः स्त्रीमय इवाभवत् । सोमस्य प्रख्याता जन्तुवधनिर्घृणता । पुरुकुत्सः कुत्सित इवासीत् । कुवलयाश्वो नाश्वतरकन्यामपि परिजहार । नृगः कृकलासतामगमत् । नलं कलिरभिभूतवान् । संवरणो मित्रदुहितरि विक्लवतामगात् । दशरथ इष्टरामोन्मादेन मृत्युमवाप । कार्तवीर्यो गोब्राह्मणपीडया पञ्चत्वमयासीत् । मनुः सुवर्णव्यसनी ननाश । शन्तनुरतिव्यसनाद्विपने विललाप । युधिष्ठिरः समरशिरसि सत्यमुत्ससर्ज । नास्त्यकलङ्कः कोऽपि प्रायः ।

Vāsavadattā p. 46. l. 14—Vāsavadattā page 47. l. 4.

(e) तात बाण द्विजानां राजा गुरुदारग्रहणमकार्षीत् । पुरूरवा ब्राह्मणधनतृष्णया दयितेनायुषा व्ययुज्यत । नहुषः परकलत्राभिलाषी महाभुजङ्ग आसीत् । ययातिराहितब्राह्मणीपाणिग्रहणः पपात । सुद्युम्नः स्त्रीमय एवाभवत् । सोमकस्य प्रख्याता जगति जन्तुवधनिर्घृणता । मांधाता मार्गणव्यसनेन सपुत्रपौत्रो रसातलमगात् । पुरुकुत्सः कुत्सितं कर्म तपस्यन्नपि मेकलकन्यकायामकरोत् । कुवलयाश्वो भुजङ्गलोकपरिग्रहादश्वतरकन्यामपि न परिजहार । पृथुः प्रथमपुरुषकः परिभूतवान्पृथिवीम् । नृगस्य कृकलासभावेऽपि वर्णसङ्करः समदृश्यत । सौदासेन नरक्षिता पर्याकुलीकृता क्षितिः । नलमवशाक्षहृदयं कलिरभिभूतवान् । संवरणो मित्रदुहितरि विक्लवतामगात् । दशरथ इष्टरामोन्मादेन मृत्युमवाप । कार्तवीर्यो गोब्राह्मणपीडनेन निधनमयासीत् । मरुत्तः इष्टवहुसुवर्णकोऽपि देवद्विजबहुमतो न बभूव । शन्तनुरतिव्यसनादेकाकी वियुक्तो वाहिन्या विपिने विललाप । पाण्डुर्वनमध्यगतो मत्स्य इव मदनरसाविष्टः प्राणान्मुमोच । युधिष्ठिरो गुरुभयविषण्णहृदयः समरशिरसि सत्यमुत्सृष्टवान् । इत्थं नास्ति राजत्वमपकलङ्कमृते देवदेवादमुतः सर्वद्वीपभुजो हर्षात् । Harṣacharita p. 87. l. 9—Harṣacharita p. 90. l. 5.

Bāṇa's emphasis, like that of Dandin and Subandhu is on the enumeration of persons known to legend and mythology rather than on the enumeration of historical persons.

One can easily conclude that Bāṇa has added to the list given by Subandhu, retaining all that has been given by Subandhu.

Subandhu's style : Subandhu's style gives evidence of some of the major characteristics of Gauḍī There are bombast and prolixity (अक्षरडम्बर) reflecting the mental bombast in the artist. Some of his ornamentations are cumbrous. There are a few occasions only when the majestic in Subandhu degenerates into the cumbrous. In many cases his style is forceful, majestic with compounds which are claimed by Gray as possesing "melody, alliterations having a lulling music and a compact brevity in S'leṣas which are gems of terseness and two-fold appropriateness."

Subandhu's aim is to show his cleverness in interweaving words and sentences in such a way that they give rise to double or sometimes treble meaning. Such examples of Arthas'leṣa and Sabhangas'leṣa are numerous, cp. Vās. p. 3. para 1 where the king Chintāmani is described in context of different names of Kṛṣṇa with the help of double-meaning words and phrases.

नृसिंह इव दर्शितकशिपुक्षेत्रदानविस्मयः...कंसारातिरिव जनितयशोदानंदसमृद्धिः आनकदुन्दुभिरिव कृतकाव्यादरः...विद्याधरोऽपि सुमनाः धृतराष्ट्रोऽपि गुणप्रियः, बृहन्नलानुभावोऽप्यन्तःसरलः, महिर्षिसंभवोऽपि वृषोत्पादी अतरलोऽपि महानायकः राजा चिन्तामणिर्नाम ।

Similar epithets are found in the description of Kandarpaketu. (p. 5 l. 9)

जरासन्ध इव घटितसन्धिविग्रहः, भार्गव इव सदानभोगः, दशरथ इव सुमित्रोपेतः सुमंत्राधिष्ठितश्च, दिलीप इव सुदक्षिणानुगतो रक्षितगुश्च, राम इव जनितकुशलवयोरूपोच्छ्रायः। and so on.

In the same way such s'leṣas are found in the whole body of the work e.g. in the दुर्जननिन्दा so eloquently put forward by Makaranda (p. 12. l. 5 ff.), in the description of Vindhya (p. 14, l. 5ff.), Kasumapura (p. 24 l. 4 fl). of Spring Season (p. 22, l.5 ff.), of the princes who had gathered for the hand of Vāsavadattā (p. 24, l. 4 ff.) and in the enumeration of the kings who suffered on account of some flaw in their character (p. 46, para 46). Subandhu's self-conscious assertion (प्रत्यक्षरश्लेषमयप्रबन्धं विन्यासवैदग्ध्यनिधिनिर्वन्धम । Intro. v. no. 13) may not be taken literally for in the small work that is Vāsavadattā the paragraphs which can be brought to evidence as examples of the poet's capacity at s'leṣa are not many. We know that some of the Utpraekṣās, Upamās and Rūpakas as well as Virodhas of the poet are dependent upon double-meaning words; however at many places pointed out above the s'leṣa has added to the beauty of composition, compactness and well-knit brevity which anticipates great scholarship and mastery over telling words and phrases.

Examples of Parisamkhyā is another evidence of the poet's mastery over the style he has chosen. Once in the description of king Chintāmaṇi (para 2) and again in the description of king S'ṛngāras'ekhara (para 17) we have beautiful instances of *Parisamkhyā* :—

यत्र च राजनीतिचतुरे चतुरम्बुधिमेखलाया भुवो नायके शासति वसुमतीं पितृकार्ये वृषोंत्सर्गः शशिनः कन्यातुलारोहः योगेषु शूलघातादिचिन्ता, दक्षिणवामकरणं दिग्विनिश्चयेषु शरभेदो दधिषु, शृङ्खलाबन्धो वर्णग्रथनासु, उत्प्रक्षाक्षेपः काव्यालङ्कारेषु लक्षदानच्युतिः सायकानां, क्विपां सर्वविनाशः, कोशसङ्कोचः कमलाकरेषु. जातिहीनता दूष्कुलेषु न पुष्पमालासु, ... दुर्वर्णयोगः कम्बिकादिषु न कामिनीकान्तिषु, गान्धारविच्छेदो रागेषु न पौरवनितासु, मूर्च्छाधिगमो गानेषु, खर्मभावो नीचसेवकेषु न परिधानेषु...... कर्तनमलकभ्रूषु न पुरन्ध्रीषु, निस्त्रिंशत्वमसीनां, करवालनाशों योधानां परं व्यवस्थितः।

Virodha is another figure of speech that Subandhu employs very successfully. (cp. Vās p. 5, l. 3)

यस्य च रिपुवर्गः सदापार्थोऽपि न महाभारतरणयोग्यः, भीष्मोऽप्यशान्तनवे हितः, सानुचरोऽपि न योगभूषितः। अपि च स त्रिशङ्कुरिव नक्षत्रपथस्खलितः. । शङ्करोऽपि न विषादी, पावकोऽपि न कृष्णवर्ष्मा, आश्रयाशोऽपि न दहनः. नान्तक इवाकस्मादपहृतजीवनः...... । and so on. An illustration of *Bhedakālis'ayokī* is found on p. 4, l. 89.

स हिमालयो नावश्यायोच्छलितः नो मायाजन्मने हितश्च । असौ हि मानी गिरि स्थितो वृषध्वजश्च । असौ सद्गतिः अवधूताखिलकान्तारः, पावकाग्रेसरः, न भोगोत्सुकः, सुमनोहरश्च । स रत्नाकरोऽनहिमयः, कथमगाधः समयदिः नोद्रेकोऽप्यस्य विस्मयः, हिमकराश्रयोऽमृतमयः, सत्पात्रः तस्याचलो न क्रोधः, महानदीनः, स सपोतः स समुद्रः । *Māladīpaka* is another figure of speech that we meet with on p. 6, l. 14. यस्य च समरभुवि भुजदण्डेन कोदण्डं, कोदण्डेन बाणाः, बाणैः रिपुशिरः, तेनापि भूमण्डलं, तेन चाननुभूतपूर्वो नायकः, नायकेन च कीर्तिः, कीर्त्या च सप्तसागराः, सागरैः कृतयुगादि राजचरितस्मरणं. अनेन च स्थैर्यं, अमुना च प्रतिक्षणमाश्चर्यमासादितम् ।

On page 13, l. 8 we have an illustration of *Milita.* Verses 15 and 16, where the appearance of a lion is described in *Sārdulavikrīḍita* metre and which are good illustrations of Subandhu's compact and mature diction are examples of *Svabhāvokti.* Verses 17 and 18 are good illustrations of *Kāvyalinga* and *Asangati.* The following two paragraphs are some of the most beautiful *Utprekṣās* found in Vāsavadattā.

रविविरंहविधुरायाः कमलिन्या हृदयमिव द्विधा पपाट चक्रवाकमिथुनम् । आगमिष्यतो हिमकरदयितस्य पार्श्वे सञ्चरन्ती कुमुदिन्या भ्रमरमाला दूतीवालक्ष्यत । तारकाव्याजादस्तङ्गतस्य दिवाकरस्यं शोकादिव ककुभो व्यरुदन् । भास्वतो निजदयितस्य विरहादभिनवकिञ्जल्कराशिव्याजेन मुर्मुर इव नलिनीकोशहृदये जज्वाल । (p. 32 l. 6. ff) and रजनीवधूकरद्वयोच्छलितपतन्मुसलाहतिक्षतान्तर उलूखल इव चन्द्रे, कण्डनविकीर्णेषु तण्डुलेष्विव तारागणेपून्मीलत्सु, सन्ध्याताम्रमुखेन वासरवानरेण नभस्तरुमारोहता, शाखाभ्य इव कम्पिताभ्यो दिग्भ्यो विकचप्रसून इव तारागणे इन्दुमण्डलफले च पतति······ । (p. 41, l. 11 ff)

The best achievements of Subandhu in Vāsavadattā are the descriptions of nature and man, hero and heroine, the seasons, mountain, rivers, army and so on. With a conscious desire to describe all these he procceds to string with one another epithets and further adjectives to these epithets. The background of these descriptions is varied. The standard of comparisions are not always the objects of nature and this proves the range of Subandhu's poetic genius. In the earlier descriptions of king Chintāmaṇi and prince Kandarpaketu we have double and triple entendres running along a background of mythological persons and places. Very interesting social conventions are suggested because here we get an idea of punishments like छलनिग्रह; कण्टकयोग; खलसंयोग, करच्छेद, नेत्रोत्पाटन, अग्नितुलाशुद्धि, शूलसंयोग and करपत्रदारण.

In a paragraph (no. 4) full of short, beautiful and poetic sentences the poet has described the generosity, the personal charm and attraction and the strength and valour of Kandarpaketu. The whole

para may be taken to be a good illustration of अर्थव्यक्ति or clarity in conveying meaning.

The description of dawn and the vision of a beautiful maiden (Vāsavadattā) that was seen by Kandarpaketu are not only charming but they follow the best poetic conventions in sanskrit literature. The moon, a drinking cup of the night-maiden was slowly drowning itself in the ocean, the bees had concealed themselves in the scented dome of the lilies, the Sārikā birds were requesting the maidens to tear themselves away from the embrace of their lords, the scholarly teacher had awakened for his morning recitation and the lonely roads were resonant with the poetic narrations of the Kārpaṭika bards who had tuned them to the sweet notes of *Bhāsarāga*. The aim of Subandhu in such descriptions is to explore all possible sources and objects of comparison. Then follows a descriptions of Vāsavadattā, the heroine of the story. The poet begins to describe each limb and its innocent beauty and starts with the description of the thighs of the heroine. The Sanskrit literary works have recorded a continuous tradition of such descriptions which are found in ealier works like Rāmāyaṇa, in the Kāvyas of Aṣvaghoṣa and Kālidāsa and in works like Kāmasūtra and Bṛhatsamhitā. Architectural details have been pressed into service as standards of comparison, for we have such objects for standards of comparison as तोरण, कनकप्राकार, श्रालवालवलय, मण्डलपरिवेष, कनकपत्र, परिखावलय and शलाकागुणः. It should be noted that in such descriptions Bāṇa closely follows Subandhu in details and manner of comparison. The description of Kādambarī follows the same plan. Vāsavadattā's description on page 38 is another instance of the power of Subandhu's literary genious which revels in departing from the already known standards. Here the limbs of Vāsavadattā are compared with sciences like vyākaraṇa, astronomy and dialectics, literary works like Bhārata, Rāmāyaṇa, Chhandovichiti and the systems of philosophies like the Buddhist and the Upaniṣadic philosophies. The love of the novel and not attempted-by-any-one-before is another characteristic of Subandhu's style.

Unlike Kālidāsa who has successfully deleneated the inner workings of the human mind and the whole atmosphere of the mental world of men and women, Subandhu loves to describe the calm majesty of seasons, the wealth of the woodlands, the wide expanse of the ocean, the flowing beauty of Revā, the charm of the sunrise and the sunset and the blinding darkness of the night.

We should take into consideration the rather baffling brevity of the story and the paucity of characters and incidents in Vāsavadattā. In

this background the uneasiness of Kandarpaketu and the torment and lamentations of Vāsavadattā are the only occasions that the poet can willfully stumble upon to describe. Here also words like

भामिनि विलासवति विक्षिप मुक्ताचूर्णनिकरं, रागिणि रागलेखे स्थगय नलिनीदलसमूहेन पयोधरभरं, सुकान्ते कान्तिमति मन्दं मन्दमपनय बाष्पविन्दून्, यूथिकालङ्कृते यूथिके सञ्चारय नलिनीदलार्द्रवातान्, एहि भगवति निद्रे अनुगृहाण माम्, धिगिन्द्रियैरपरैः किमिति लोचनमयानि ममाङ्गानि विधिना न कृतानि, भगवन्कुसुमायुध तवायमञ्जलिरनुचरो भव भाववति तादृशे जने······ । are full of deep, poignant and sincere emotion.

The descriptions of Revā and Bhāgirathī are notable for the wealth of the details that the poet could demonstrate. He is eager to note each bird, beast, tree, creeper, man, gods, and goddesses. The creepers and flowers rustling in the wind are promiscuously described with the fearful noises of the owl and jackals, and the love play of the heavely couples. The same is true of descriptions of Vindya (Paras 8, 9 and 42) and the description of महासागरकच्छप्रान्त which enumurates a number of tress, creepers, birds and beasts.

They are नल, निचुल, पिचुल, चिरिबिल्व, बिल्वोटज, कुटज, भृङ्गराज, सुन्दरी, वेत्र, ताल, हिन्ताल, पूग, पुन्नाग, नागकेसर, घनसार, मल्लिका, केतक, कोविदार, मन्दार, बीजपूरक, जम्बीर, जम्बू, रक्ताशोक, केसर, मुचुकुन्द, सहकार, हरिद्रा, गुञ्जा and so on (Para 45). The small paragraph (56) describing the fight between two rival armies of two generals is very effective with its realistic atmosphere.

The ladies of the palace lovingly talking with each is another instance of Subandhu's power of describing finer emotions and incidents.

वदने वदनेत्रपेयकान्तौ किमुपमानमिन्दुरप्यायाति । वसतीव सतीव्रते तव हृदये कोऽपि । शतधा शतधारसारा वाचस्तवानुभूताः ।······ ···अपि चटुलं चटुम्लपटं सखीजनमायासयसि । मुरले स्तनता स्तनताडनेमु यत्सौख्यं लब्धं स्मरता स्मरतापनोदनं तदियं तेन वियुक्ता किं मुह्यसि । हतमोहतमो दयितः स्मरति स्म रतिप्रियं तव कौशलम् ।

and प्रियसखि मदनमालिनि मालिनि बिम्बाधरसङ्गत्यागेच्छाया विरामं कुरु··· । कुरङ्गिके कल्पय कुरङ्गशावकेभ्यः शष्पाङ्कुरम् । किशोरिके कारय किशोरकप्रत्यवेक्षाम् । तरलिके तरलय गुरुसान्द्रधूपपटलम् । कर्पूरिके पाण्डुरय कर्पूरधूलिभिः पयोधरभारम् । मातङ्गिके मानय मातङ्गशिशुयाचनाम् । शशिलेखे लिख ललाटपट्टे शशिलेखाम् । केतकिके सङ्केतय केतकीमण्डपस्य दोहदम् । शकुनिके देहि क्रीडाशकुनिभ्य आहारम् । मदनमञ्जरि मञ्जरय सभामण्डपकदलीगृहम् । शृङ्गारमञ्जरि सङ्कल्पय शृङ्गाररचनाम् । and so on (para 41).

We have two more instances of Subandhu's desire to select unconventional objects of comparison while describing Vāsavdattā on the one hand and Kandarpaketu on the other.

cp. शनैश्चरेण पादेन, सौम्येन दर्शनेन, गुरुणा नितम्बेन, लोहितेनाधरेण, विकचेन विलोचनेन, भास्वतालङ्कारेण, ग्रहमयीमिव, संसारभित्तिचित्रलेखामिव··· अष्टादशवर्षदेशीयां कन्यामपश्यत्स्वप्ने। (Vāsa. p. 11. l. 4).

The southern recension represented by Shrirangam text tries to fill in the gaps.

भास्वतालङ्कारेण, श्वेतरोचिषा स्मितेन, लोहितेनाधरेण, सौम्येन दर्शनेन, गुरुणा नितम्बेन, सितेन हारेण, शनैश्चरेण पादेन, तमसा केशपाशेन, विकचेन लोचनोत्पलेन and so on (p. 77. l. 1)

Kandarpaketu is described with objects of comparison which are rivers like Mālini, Tungabhadrā, S'oṇa, Narmadā and Godāvari.

cp. समुद्रमिव महासत्त्वं मालिन्या कबरिकया, तुङ्गभद्रया नासिकया, शोणेनाधरेण, नर्मदया वाचा, गोदया भुजया स्वर्वाहिन्या कीर्त्या च पुण्यमयमिव··· त्रिभुवनविलोकनीयाकृतिं युवानं ददर्श। (Vāsa. p. 25. l. 1ff)

While we sometimes deplore the presence of long compounds, it is an extremely pleasant experience when we sight beautiful thought dressed in simple and poetic words; cp.

प्रलयकालोदितद्वादशरविकिरणकलापतीव्रविरहाग्निदह्यमाना सती, अति कृशां विप्राणामिव तनुं बिभ्रती, प्रचलदमन्दरान्दोलितदुःखसिन्धुतरलतरतरङ्गच्छटाधवलहासच्छुरिताधरपल्लवं तन्मुखारविन्दं, द्विजकुलमिव श्रुतिप्रणयि तदीक्षणयुगलं, सहजसुरभिमुखपरिमलामोदमाघ्रातुकामा सुदूरनिर्गतनासावंशलक्ष्मीः कलङ्कमुक्तेन्दुकलाकोमला पीयूषफेनपटलपाण्डुरास्यद्विजपङ्क्तिः तददृष्टचरमनङ्गमतिशयानं रूपं, धन्यानि तानि स्थानानि ते च जनपदाः, पुण्यनामाक्षराणि च तानि सुकृतभाञ्जि यान्यमुना परिष्कृतानीति मुहुर्मुहुः परिभावयन्ती, दिक्षु विलिखितमिव, नभस्युत्कीर्णमिव, लोचने प्रतिबिम्बितमिव, चित्रपटलिखितमिव, पुरो दर्शितमिवेतस्ततो विलोकयन्ती व्यतिष्ठत। (Vāsa. p. 27 l. 6ff.)

These few remarks regarding the literary importance of Subandhu's Vāsavadattā prove one point very clearly that Subandhu was a master of a clear, simple and beautiful diction as well as a style majestic with long and rolling compounds, and full of double-meaning epithets. That he was very fond of showing off his scholarly abilities, his command of sciences, his ability to weave together words to form a difficult construction and his love of the out-of-the-way and the un-attempted so far by anyone else is evident at each sentence of Vāsavadattā. He may be said to have successfully illustrated the prevailing requirments of a good poetic composition viz नवोऽर्थः, अग्राम्या जातिः, अक्लिष्टः श्लेषः, स्फुटः रसः and विकटाक्षरबन्धः through his work viz. Vāsavadattā. His श्लेष is not always अक्लिष्ट but the scholar will definitely enjoy it, for it challenges his learning and the ability of interpretation. Baldness is something that Subandhu guards

himself against in his composition. He has tried to live up to the few requirements of a good composition that he himself has suggested. It is not studded with useless expletives like तु, हि, न, or च, (सत्कविकाव्यबन्ध इवाबद्धतुहिनः । 22.11.) The double-meaning epithets are very cleverly strung together (32.4.) for it is the composition of one who is specially adept in this type of well-knit construction (verse no. 13) which is singularly devoid of even a letter the relevancy of which could be questioned by a critic (20-29). The figures of speech like Utprekshās (20.17) and metres like S'ikharinī, Praharṣiṇī and Puṣpitāgrā add to augment the beauty of Vāsavadattā (15-6).

Some of the flaws in Subandhu's work are his utter disregard for plot, for relevancy of incidents and for characterisation. His love of अनुप्रास and यमक is responsible for laboured paragraphs like para 33 where the darkness and the stars are described and para 45 the latter part of which is little short of enumeration of trees and creepers, birds and beasts. Some of his puns are laboured and consciously over-done (cp. the description of Chintāmaṇi, para 1, 2 and 3). There are a few sentences which can be said to be open to the charge of vulgarity (ग्राम्यत्व) [(a) रतकील इव जघन्यकर्मलग्नोऽपि ह्लपयति साधून् (12-21) (b) मुखमदनमन्दिरतोरणाभ्यां···भ्रूलताभ्यां विराजितां···। (10-18) and (c) अथ मकरन्दसखीजनप्रयत्नलब्धसंज्ञौ तौ एकासनमलञ्चक्रतुः । (39-1)]. Although there cannot be two opinions as regards Subandhu's command over Sanskrit language that he so successfully wields to his purpose, he is careless about repetitions of thought and phraseology in his work. Words like वाहिनीशत, सदागति, नृत्यत्कबन्ध, जीवाकृष्टि, दोषानुबन्ध, हरिचन्दन and so on occur very frequently. In Subandhu we have little evidence of the chiselled beauty of diction that one meets with in Kālidās, Bhāravi, Māgha and Shriharṣa. His sentences are in a few cases loosely connected with one another, there being presented a very quick and not very intelligible leap from one idea to the other. It is likely that Subandhu's scribes may be responsible for this for it is quite possible that Subandhu's text suffered greatly with the rise of Bāṇa's fame and the unsettled political atmosphere of Subandhu's time.

These few remarks about Subandhu and his work will give some idea of the problems connected with the appreciation of Vāsavadattā. No claim is advanced here about a full and comprehensive treatment of these problems. This work based on the earliest ms. so far available to us will, it is hoped, create some enthusiasm regarding the appreciation of Subandhu and in getting nearer the original composition of Subandhu.

× × ×

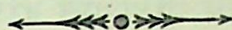
It is my very pleasant duty to acknowledge the help rendered to me by different scholars. To revered Munishrī Jinavijayajī Mahārāja I am specially indebted, for he offered me an opportunity to study critically Subandhu's work. I am overwhelmed by his अकारणवात्सल्य, his parental love for the progress of the work and the magnanimity of his heart at each word of advice that I had the priviledge of listening to, during the work.

I am highly thankful to my revered teacher Prof. Rasikbhāi C. Parikh for a number of important suggestions which have helped me in various ways. To my revered guru Prof. K.V. Abhyankar, I am greatly indebted for his kindness in going through portions of the critical text of Vāsavadattā and securing for me a loan of four manuscripts from Bhāṇḍārkar Oriental Research Institute, Poona. I take this opportunity of thanking Prof. A.D. Pusalkar for making arrangements for the loan of mss. from the Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona. I also thank Prof. Vāsudevasharaṇaji Agrawal for promptly replying to my querries regarding certain points in Vāsavadattā.

5-4-65 J. M. SHUKLA

महाकवि-सुबन्धु-विरचिता

वासवदत्ता नाम कथा ।



॥ ॐ नमो भारत्यै[1] ॥

करबदर[2]सदृशमखिलं भुवनतलं यत्प्रसादतः कवयः ।
पश्यन्ति सूक्ष्ममतयः सा जयति सरस्वती देवी ॥ १ ॥

खिन्नोऽसि मुञ्च शैलं बिभृमो[3] वयमिति वदत्सु शिथिलभुजः ।
भरभुग्नवितत[4]बाहुषु गोपेषु हसन् हरि[5]र्जयति ॥ २ ॥

कठिनतरदामवेष्टनलेखासन्देह[6]दायिनो यस्य ।
राजन्ति बलिविभङ्गाः[7] स पातु दामोदरो भवतः ॥ ३[8] ॥

स जयति हिमकरलेखा चकास्ति यस्योत्सुकोमया[9] निहिता ।
नयनप्रदीपकज्जलजिघृक्षया शिरसि[10] रजतशुक्तिरिव ॥ ४ ॥

भवति सुभगत्वमधिकं विस्तारितपरगुणस्य सुजनस्य ।
वहति[11] विकासितकुमुदो द्विगुणरुचिं हिमकरो[12]द्योतः ॥ ५ ॥

---

१ A ॐ नमो वीतरागाय । B श्रीसरस्वत्यै नमः ।
G श्री हयग्रीवाय नमः । वासवदत्ता सव्याख्या ।

२ A, B, H, T, K G करवदर० । P करवदर० ।

३ A बभ्रिमो ।

४ G, K ०वितथ० । T ०विनत (भरेण भुग्ना विनताश्च बाहवो येषाम्) ।

५ T has in mind हरेर्जयति as it explains हरेर्हास्यम् ।

६ A ०सन्दोह० ।

७ Ha, Hh वलिविभागाः ।

८ G has a different order of the verse; It puts this verse after verse no. 4 स जयति० ।

९ A यस्योमयोत्सुका निहिता । B यस्यामयोत्सुकान्निहिता ।
H यस्योमयोत्सुकान्निहिता । G, K यस्योमयोत्कया० ।
Śivarāma adds : उन्मुखा निहिता इति क्वचित्पाठः ।

१० A, B, H, G omit शिरसि । He ०शङ्खशुक्ति० ।

११ A वहति हि विकसित० ।

१२ G हिमकरद्योतः ।

विषधरतोऽप्यतिविषमः खल इति न मृषा वदन्ति विद्वांसः ।
यदयं नकुलद्वेषी स कुलद्वेषी पुनः[1] पिशुनः ॥ ६ ॥

अतिमलिने कर्तव्ये भवति खलानामतीव निपुणा धीः ।
तिमिरे हि कौशिकानां रूपं प्रतिपद्यते दृष्टिः[2] ॥ ७ ॥

हस्त इव भूतिमलिनो लङ्घयति[3] यथा यथा खलस्सुजनम् ।
दर्पणमिव तं कुरुते तथा तथा निर्मलच्छायम्[4] ॥ ८ ॥

विध्वस्तपरगुणानां भवति खलानामतीव मलिनत्वम् ।
अन्तरितशशिरुचामपि सलिलमुचां मलिनिमाभ्यधिकः ॥ ९ ॥

सा रसवत्ता निहता[5] नवका विलसन्ति चरति नो कङ्कः[6] ।
सरसीव कीर्तिशेषं गतवति भुवि विक्रमादित्ये ॥ १० ॥

अविदितगुणापि[7] सत्कविभणितिः कर्णेषु वमति मधुधाराम् ।
अनधिगतपरिमलापि हि हरति दृशं मालतीमाला ॥ ११ ॥

गुणिनामपि निजरूपप्रतिपत्तिः परत एव संभवति ।
स्वमहिमदर्शनमक्ष्णोर्मुकुरतले[8] जायते यस्मात् ॥ १२ ॥

सरस्वतीदत्तवरप्रसादश्चक्रे सुबन्धुः सुजनैकबन्धुः ।
प्रत्यक्षरश्लेषमयप्रबन्धं विन्यासवैदग्ध्यनिधिर्निबन्धम्[9] ॥ १३ ॥

---

१ G adds (पुनः) after पुनः ।

२ The verse is quoted as one of Subandhu in Vidyākara's 'Subhāṣitaratnakośa' (Kosambi : verse no. 1254).

३ H K and G read यथायथा before लङ्घयति ।

४ A and B invert the order of the verses 8 and 9.

५ A, B, T, H, K, G विहता । Also Kosambi सारसवत्ता......विहता न वकाः० । ibid note २ verse no. 1491.

६ H कं कः । This is following Śivarāma who understands it as कः सबलः कं निर्बलं नो चरति न भक्षयति ।

७ The verse is quoted as one of Subandhu in Vidyākara's Subhāṣitaratnakośa (Kosambi : verse no. 1718).

८ A ०मक्ष्णां ।

९ A, B H, G read ०मयप्रबन्धविन्यास० । K reads the verse at the end of the work and reads प्रत्यक्षरश्लेषमयप्रपञ्चविन्यासवैदग्ध्यनिधिं प्रबन्धम् । and reads the first line सरस्वती० as second.

§१) अभूदभूतपूर्वः, सर्वोर्वीपतिचक्रचूडामणिश्रेणीशाणकोणकषण-निर्मलीकृतचरणनखमणिः, नृसिंह इव दर्शितकशिपुक्षेत्रदानविस्मयः, कृष्ण इव कृतवसुदेवतर्पणः, नारायण इव सौकर्यसमासादितधरणी-मण्डलः, कंसारातिरिव जनितयशोदानन्दसमृद्धिः, आनकदुन्दुभिरिव कृतकाव्यादरः, सागरशायीवानन्तभोगीचूडामणिरञ्जितपादः, वरुण इवाशान्तरक्षणः, अगस्त्य इव दक्षिणाशाप्रसाधकः, जलनिधिरिव वाहिनीशतनायकः समकरप्रचारश्च, हर इव महासेनानुयातो निर्जि-तमारश्च, मेरुरिव विबुधालयो विश्वकर्माश्रयश्च, रविरिव क्षणदान-प्रियश्च्छायासन्तापहरश्च, कुसुमकेतुरिव जनितानिरुद्धसंपद् रतिसुख-प्रदश्च, विद्याधरोऽपि सुमनाः, धृतराष्ट्रोऽपि गुणप्रियः, क्षमानुगतोऽपि सुधर्माश्रितः, बृहन्नलानुभावोऽप्यन्तःसरलः, महिषीसंभवोऽपि वृषोत्पादी, अतरलोऽपि महानायकः राजा चिन्तामणिर्नाम ।

§२) यत्र च शासति धरणिमण्डलं छलनिग्रहप्रयोगा वादेषु, नास्तिकता चार्वाकेषु, कण्टकयोगो नियोगेषु, परीवादो वीणासु, खलसंयोगः शालिषु, द्विजिह्वसङ्गृहीतिराहितुण्डिकेषु, कर[च्छेदः क्लृप्तकर] ग्रहणेषु, नेत्रोत्पाटनं मुनीनां, राजविरुद्धता पङ्कजानां,

---

१ A, B, T, H, K, G ०चक्रचारुचूडामणि० ।

२ A, T, H, K, G दर्शितहिरण्यकशिपु० ।

३ B महावराह इव ।

४ A in adscript and B, H, K, G have पद्म after पाद ।

५ A, कुमारसेनानुयातो ।

६ H amends निर्जित of his mss. A b c d f g h and Narasimha to निर्वर्तित ।

७ K, G कुसुमायुध इव ।

८ K सुधर्माश्रयः ।

९ K धरां ।

१० A छलजातिनिग्रहस्थानप्रयोगो । H, G छलनिग्रहप्रयोगो । K छलजातिनिग्रहप्रयोगो ।

११ A, K ०योगेषु । Hd वनेषु इति नरसिंहः । ०कण्टको राजनियोगेषु इति जगद्धरः ।

१२ A in adscript and H द्विजराजविरुद्धता ।

सार्वभौमयोगो दिग्गजानां[1], शूलसंयोगो[2] युवतिप्रसवे, अग्नितुला-शुद्धिः सुवर्णानां, दुःशासनदर्शनं भारते, करपत्रदारणं जलजानां, परमेवं व्यवस्थितम्[3]। महावराहो गोत्रोद्धरणप्रवृत्तोऽपि गोत्रोद्दलनमकरोत्। राघवः परिहरन्नपि जनकभुवं जनकभुवा सह वनं विवेश। भरतोऽपि रामदर्शितभक्तिरपि राज्ये[4] विराममकरोत्। नलस्य दमयन्त्या मिलितस्यापि पुनर्भूपरिग्रहो जातः। पृथुरपि गोत्रसमुत्सारणाद्विस्तारितभूमण्डलः[5]। इत्थं[6] नास्ति वागवसरः पूर्वतनराजेषु[7]।

§३) स पुनरन्य एव लक्तसर्वपूर्वोर्वीपतिचरितः[8]। तथाहि। सर्वतः[9] कटकसञ्चारिणो गन्धर्वान् दर्शितगृह्णोन्नतिः सुखयन्[10] विरराम। स हिमालयो नावश्यायोच्छलितः नो मायाजन्मने हितश्च। असौ हि मानी गिरि स्थितो वृषध्वजश्च। [असौ] सद्गतिः[11], अवधूताखिलकान्तारः, पावकाग्रेसरः, न भोगोत्सुकः सुमनोहरः[श्च]। स रत्नाकरोऽनहिमयः[12], कथमगाधः,समर्यादः, [13]नोद्रेकोऽप्यस्य विस्मयः[14], हिमकराश्रयोऽमृतमयः, सत्पात्रः[15], तस्याचलो न क्रोधः, महानदीनः, सपोतः स समुद्रः।

---

१ A, B, H, T, G add सूचीभेदो मणीनाम्।

२ H T, G शूलभङ्गो युवतिप्रसवेषु।

३ A, B, H, omit व्यवस्थितम्।

४ A राज्यं विरागेन।

५ A ०समुत्सारणविस्फारित० । B ०विसृतभूमण्डलः।

६ A तदित्थं [तद् in adscript]।

७ G (पूर्वतनेषु) राजसु (अपि तु वचनीयतायाः)।

८ A, H, K, G न्यक्कृतसर्वोर्वीपति [B चक्रचारु] चरितः।

९ A, B, H, K, G स पर्वतः।

१० A सुखयन्नपि न।

११ A, B, H, K, G स सदागतिरवधूताखिल०।

१२ G, स रत्नाकरोऽनतिभयो। Habcdeg नाहिमयः। B रत्नाकरोऽपि न हिमालयः। and K रत्नाकरोऽनहिभयः।

१३ A, B नोद्रेकोप्यस्य। H, G नोद्रोकोऽप्यस्य। K नोद्रोकः विस्मयः।

१४ A, B, H, K, G read सदा before हिमकराश्रयो।

१५ A, B, H omit सत्पात्रः।

[स[1] चन्द्र इव] क्षणदानन्दकरः, कुमुदवनबन्धुः, सकलकलाकुलगृहं, नतारातिबलः। [स[2] समुद्रो] मित्रोदयहेतुः, काञ्चन शोभां बिभ्रत्, अचलाधिकलक्ष्मीः सुमेरुरिव[3]। यस्य च रिपुवर्गः सदा पार्थोऽपि न महाभारतरणयोग्यः, भीष्मोऽप्यशान्तनवे हितः, सानुचरोऽपि न गोत्रभूषितः। अपि च स त्रिशङ्कुरिव[4] नक्षत्रपथस्खलितः, शंकरोऽपि न विषादी, पावकोऽपि न कृष्णवर्त्मा, आश्रयाशो[ऽपि] न दहनः, नान्तक इवाकस्माद‌पहृतजीवनः, न राहुर्मित्रमण्डलग्रहणवर्धितरुचिः, न नल इव कलिविलसितविनटितः[5], न चक्रीव शृगालवधस्तुतिसमुल्लसितः[6], नन्दगोप इव यशोदयान्वितः[7], जरासन्ध इव घटितसन्धिविग्रहः, भार्गव इव सदानभोगः, दशरथ इव सुमित्रोपेतः सुमन्त्राधिष्ठितश्च, दिलीप इव सुदक्षिणानुगतो[8] रक्षितगुश्च, राम इव जनितकुशलवयोरूपोच्छ्रायः। तस्य च[9] पारिजात इवाश्रितनन्दनः, हिमालय इव जनितशिवः, मन्दर इव भोगिभोगाङ्कितः, कैलास इव महेश्वरोपभुक्तकोटिः, मधुरिव नानारामानन्दकरः, क्षीरोदमथनोद्यतमन्दर इव मुखरितभुवनः, रागरज्जुरिवोल्लासितरतिः, ईशानभूतिसञ्चय इव सन्ध्योच्छलितः, शरन्मेघ इवावदातहृदयो [10]विष्णुपदावलम्बी च, पार्थ इव समरसाहसोचितः, कंस इव कुवलयापीडभूषितः[11], तार्क्ष्य इव [विनतानन्दकरः] सुमुखनन्दने[12] [श्च], विष्णुरिव [13]क्रोडीकृतसुतनुः, शान्तनव

---

१ A सचन्द्रः in adscript। H, G सचन्द्र इव।

२ P does not have स समुद्रो। A reads स समुद्रो मित्रोदयहेतुः।

३ K सुमेरुश्च।

४ K, G नाक्षत्रपथच्युतः।

५ A, B, H कलिविघटितो। K, G कलिविजितविग्रहो।

६ K शृगालवधलब्धस्तुतिसमुल्लसितो।

७ P, Hcefg and जगद्धर ०यशोदयान्वितो। H यशोदयाश्रितो।

८ H सुदक्षिणानुरक्तो। K, G सुदक्षिणान्वितो।

९ K, G add राज्ञः after तस्य च।

१० K adds चन्द्र इव and omit च।

११ K, G कुवलयापीडभूषणः।

१२ B सुमुखनन्दकरश्च।

१३ A विष्णुरिव वराहक्रोडीकृतसुतनुः।

इव स्ववशस्थापितकालधर्मः, कौरवव्यूह इव सुशर्माधिष्ठितः, सुबाहुरपि रामानन्दी, समदृष्टिरपि महेश्वरो, मुक्तामयोऽप्यतरलमध्यो, जलद इव विमलतरवारिधारात्रासितराजहंसः, वंशप्रदीपोऽप्यक्षतदशः, तनयः कन्दर्पकेतुर्नाम ।

§ ४) येन च चन्द्रेणेव सकलकलाकुलगृहेण, शार्वरीतिहारिणा[१], कुमुदवनबन्धुना[२], प्रसादिताशेन[३], विलोकिता जलधय इवोल्लसितगोत्राः[४], सुदूरवर्तितजीवनाः[५], प्रसन्नसत्त्वाः सन्तः परामृद्धिमवापुः प्रजालोकाः[६] । यस्य च जनितानिरुद्धलीलस्य, रतिप्रियस्य, कुसुमशरासनस्य, मकरकेतोरिव दर्शनेन वनिताजनस्य हृदयमुल्ललास । यस्मै चानुगतदक्षिणसद्भागतये, नेत्रश्रुतिसुखदकोमलकोकिलरुताय, विकासितपल्लवाय, कृतकान्तारतरङ्गाय, सुरभिसुमनोऽभिरामाय, सर्वजनसुलभपद्माय, विस्तृतकरसंपदे[७], अतिक्रान्तदमनकाय वसन्तायेव, वनलता इवोत्कलिकासहस्रसंकुलाः, भ्रमरसङ्गताः, प्रवालहारिण्यः, विलसद्वयसस्तरुण्यः स्पृहयाञ्चक्रुः । यस्य [च] समरभुवि भुजदण्डेन कोदण्डं, कोदण्डेन बाणाः, बाणै रिपुशिरः, तेनापि भूमण्डलं, तेन चाननुभूतपूर्वो नायकः, नायकेन च कीर्तिः, कीर्त्या च सप्तसागराः, सागरैः कृतयुगादि राजचरितस्मरणं, अनेन च स्थैर्यं, अमुना च प्रतिक्षणमाश्चर्यमासादितम् । यस्य च प्रतापानलदग्धानां[८] रिपुसुन्दरीणां करतलताडनभीतैरिव मुक्ताहारैः पयोधरपरिसरो मुक्तः । यस्य च निहित[९]नाराचजर्जरितमत्तमातङ्गकुम्भस्थलविगलितमुक्ता-

---

१ B शार्वरीविहारिणा । B, H, K दलितकैरवेण is added before कुमुदवनबंधुना ।

२ G कैरवविबन्धुना ।

३ A, H, K, G प्रसाधिताशेन ।

४ B इवोध्वसितगोत्राः ।

५ A, B, H, K, G सुदूरविवर्द्धित० ।

६ P only has प्रजालोकाः ।

७ B, H, G विस्तारितकनकसंपदे । also K विस्तृतकनकसंपदे ।

८ K, G ०दग्धदयितानां ।

९ A, B, H, K, G निशित; also Habdf and Narasimha, निशितनाराचराजिजर्ज० । He निशितनाराचचक्रजर्जरित० ।

फलदन्तुरितपरिसरे, [1]तरत्पत्त्ररथे, [2]रक्तवारिसंचरत्करिकच्छपोत्फुल्लपुण्डरीकशतसमाकुले, नृत्यत्कबन्धे, सुरसुन्दरीसंगमोत्सुकचारभटाहङ्कारसंभारभीषणे, [3]समरसरसि, भिन्नपदातिकरितुरगरुधिरार्द्रो जयलक्ष्मीपादालक्तकरागरञ्जित इव खड्गो रराज ।

§५) अथ स कदाचिदवसन्नायां यामवत्यां दधिधवले कालक्षपणकपिण्ड इव निशायमुनाफेनस्तबके, मेनकानखमार्जनशिलाशकल इव मधुच्छत्रच्छायमण्डलोदरे, पश्चिमाचलोपधानसुखनिलीनशिरसः, [4]ताडङ्क इव शेषमधुभाजि, चषक इव विभावरीवध्वाः, अपरजलनिधिपयसि शङ्खकान्तिकामुके निमज्जति कुमुदिनीनायके, [5]शिशिरकर्दमितकुमुदपरागमध्यबद्धचरणेषु षट्चरणेषु, कलप्रलापबोधितचकिताभिसारिकासु सारिकासु, प्रबुद्धाध्यापककर्मठेषु मठेषु, [6]भासरागमुखरकार्पटिकोपगीयमानकाव्यकथासु रथ्यासु, सकलनिपीतनिशातिमिरसंघातमतितनीयस्तया सोढुमसमर्थेष्विव कज्जलव्याजादुद्वमत्सु, कामिमिथुननिधुवनलीलादर्शनार्थमिवोद्ग्रीविकाशतदानखिन्नेषु, [7]विविधबुधाश्रयभवनविचित्रसुरतक्रीडासाक्षिषु, शरणागतमिवाधोनिलीनं तिमिरमवत्सु, [8]दुर्जनवचनेष्विव दग्धस्नेहतया मन्दिमानमुपगतेषु, अतिवृद्धेष्विव दशान्तमुपगतेषु, विपन्न-

१ Habdh, G °तरत्पत्त्ररथे । T, H, K °पतत्पत्त्ररथे ।

२ H on the testimony of Narasimha and Jagaddhara रक्तवारिसञ्चरदनेकच्छायोत्पलपुण्डरीकवाहिनीशतसमाकुले । (Hall's manuscripts have many variant readings—रक्त॰ नेककच्छपोत्फुल्ल पु॰, रक्तवारिज॰ योत्फुल्ल पु॰, रक्त वारिज॰ दरुणकच्छपे उत्फुल्लपुण्डरीके ।); K, G रक्तवारिसमुह्यमानद्विरदपदकच्छपे विलसदुत्पलपुण्डरीके वाहिनीशतसमाकुले ।; T विलसदुद्दण्डपुण्डरीके ।

३ B, H समरसागरे ।

४ H, K, G राजतताटङ्कचक्र इव (श्यामाश्यामायाः) । K, G सागर इव समरशिरसि ।

५ H शिशिरकर्दमितकुमुदधूलिमध्यबद्धचरणेषु ।
K, G शिशिरहिमशीकरकर्दमित॰ ।

६ A वासरादिमुखर॰ । B, H, T विभासरागमुखर॰ । G ॰(हास) रागमुखर॰ ।

७ A, B विविधबहुबन्धसुरतक्रीडासाक्षिषु । G विविधविलाससचित्रसुरतसाक्षिषु ।
T विविधविभ्रमसुरतक्रीडासाक्षिषु । H विविधबन्धरतक्रीडासाक्षिषु ।

८ A, B, H, G दुर्जनेष्विव ।

सदीश्वरेष्विव पात्रमात्रशेषेषु, दानवेष्विव निशान्तपथचारिषु, अस्तगिरिशिखरेष्विव पतितपतङ्गेषु, प्रदीपेषु, अनवरतमकरंदबिंदुसंदोहमोहमुखरमधुकरनिकुरुम्बहुंकारमुखरितेषु म्लानिमानमुपगच्छत्सु वासागारकुसुमोपहारेषु, विगलितकुन्दैरलकैः प्रियविरहशोकाद् बाष्पबिन्दूनुत्सृजद्भिरिव प्रियतमगमननिषेधमिव कुर्वतीषु वाचालतुलाकोटिभिश्चरणपल्लवैर्विलसितासु, रजनिशेषसुरतपरिश्रमविगलितकेशपाशदरदलितमालतीमालापरिमललुब्धमुखरमधुकरनिकुरुम्बपक्षानिलपीतनिदाघजलशीकरकणासु, उद्वेल्लद्भुजवल्लीझणत्कारसुभगासु,[नव]नखपददष्टकेशनिर्मोकवेदनाकृतसीत्कारविनिर्गतमुग्धमुग्धदशनकिरणच्छटाधवलितभोगवासासु, पुनर्दर्शनपृच्छाविधुरसखीजनानुक्षणवीक्ष्यमाणप्रियतमासु, क्षणदागतसुरतवैयात्यवचनशतसंस्मारकगृहशुकचाटुव्याहृतिक्षणजनितमन्दाक्षासु, शरद्वासरलक्ष्मीष्विव नखालङ्कृतपयोधरासु, आसन्नमरणास्विव जीवितेशपुराभिमुखीषु, वसन्तवनराजिष्विवोत्कलिकाबहुलासु, प्रियैरालिङ्ग्यमानासु कामिनीषु, आन्दोलितकुसुमकेसरे, [१२]केशरेणुमुषि-

१ H, K निशान्तमध्यचारिषु ।

२ A, B, G H, K, G पतत्पतङ्गेषु ।

३ K, G अनवरतनिपतन्मक० । A adds in later hand निपतित ।

४ A ०मोहमुग्ध० । B ०मोहमुखर० । H ०सन्दोहलुब्धमधुकर० ।
Hb, Hd, He, Hg, Hh ०सन्दोहमोहमुग्धमदमुदितमधुकरनिकरनिकुरुम्ब० ।
K, G ०संदोहास्वादमुग्धमधुकरनिकुरुम्ब० ।

५ A, B, H, K, G ०विरहशोकात्० ।

६ H, K, G ०निरोधमिव ।

७ K ०जलकणिकासु । G जलशीकरकणिकासु ।

८ H ०कङ्कणझणत्कारमुखरासु । । K, G ०कङ्कणझणत्कारसुभगासु ।

९ H ०संसक्तकेश- -निर्मोक । K नखपदसंसक्त० । Ha, Hc, Hd, He, Hf, Hh as also Narasimha and Jagaddhar नव० पददष्टकेश० ।

१० K, G केशपाशविनिर्मोक० ।

११ K, G ०सुरत is added before वैयात्य ।

१२ A केसररेणुमुषिरणितमधुरमणीनां । B केशरकेशरेणुमुषि० । K केसरेणुमुषिरणितनूपुरमणीनां । G केसरेणुमुषिरतिरणितनूपुरमणीनां ।

रणितमधुकरमणीनां रमणीनां, विकचकुमुदाकरे मुदाकरे सङ्गभाजि, प्रियविरहितासु रहितासु सुखेन मुर्मुरमिव वर्षति समन्तादर्पके दर्पकेषुदहनस्य, दूरप्रसारितकोकप्रियतमारुते मारुते वहति, जघनमदननगरतोरणेन, मन्मथमहानिधिमन्दिरकनकप्राकारेण, रोमलतालवालवलयेन, गगनचन्द्रमण्डलपरिवेषेण, त्रिभुवनविजयप्रशस्तिरोमावलीकनकपत्रेण, सकलजनहृदयबन्दीनिवासपरिखावलयेन, जगल्लोचनविलासशलाकागुणेनेव मेखलादाम्ना परिकलितजघनस्थलाम्, उन्नतपयोधरभारान्तरितमुखदर्शनाप्राप्तिखेदेनेव गुरुनितम्बपयोधरकुम्भपीडाजनितायासेनेव पयोधरकलशयोः कथं मय्येव पातो भविष्यतीति चिन्तयेव, गृहीतगुरुकलत्रानुशयेनेव, विधातुरतिपीडयतो हस्तपरामर्शजनितपरिक्लेशेनेव क्षीणतरतामुपगतेन मध्यभागेनालङ्कृताम्, अनुरागरत्नमयकनकपरुवकाभ्यां चूचुक[मुद्रा]सनाथाभ्याम्, अतिगुरुपरिणाहतया पतनभयखिल्लिताभ्यामिव चूचुकच्छलेन विधिना इव

---

१ A विकचकुमुदाकरसङ्गभाजि । Ha, Hb ०विकासितकु० । and Hg. विकसितकु० ।

२ P मुखेन । A, B, K सुखेन ।

३ A, B, H, K, G समन्तादर्पके दर्पकेषुदहनस्य ।

४ H रोमावलीलतालवालेन । K रोमराजिलताल० ।

५ A, B जगल्लोचनविहङ्गमलासकशलाका० । H जग०मालालासक० ।
K, G जगल्लोचनविहङ्गमावासलासक० ।

६ B, H परिवृत० but परिगत० according to Narasimha and Jagaddhara.

७ A in adscript निबद्धोभयपार्श्व after कुम्भ । The superiority of P's readings can be judged from different readings found in K and G.

(a) गुरुनितम्बबिम्बपयोधरकुम्भपीडाजनितायासेनेव । H

(b) गुरुतरनितम्ब...कुम्भनिरुद्धोभयपार्श्वपीडाजनितायासेनेव...G.

(c) गुरुतरनितम्बबिम्बकुचकुम्भनिरुद्धोभयपार्श्व...नेव०...K.

८ A, B add ममसूर्द्धजयोरियत्प्रमाणयोः स्तनकलशयोः ।

९ A, B हस्तपाशपरामर्शजनितायासेन ।

१० A, B ०कुरुवकाभ्यां० । H अनुरागरत्नमयकनकरुचकाभ्यां० ।
G, K ०परुवकाभ्यां० । K explains परुवक as सम्पुट or समुद्गक ।

११ A, B, H चूचुकमुद्रासनाथाभ्यां० ।

१२ H, K, G add गिरिसारेणेव after विधिना ।

कीलिताभ्यां, सकलावयवनिषिक्तशेषलावण्ययुक्ताभ्यां, [हृदय]तटाककमलाभ्यां [इव] [1]हृच्छयचातुरिकाविभ्रमाभ्यां, रोमावलीलताफलाभ्यां, कन्दर्पदर्प[2]वर्धनवशीकरणचूर्णपूर्णसमुद्गाभ्यां, अशेषजनहृदयपतनसञ्जातगौरवाभ्यां, संसारमहातरुफलाभ्यां, [3]यौवनमहापादपप्रसवाभ्यां, हारलतामृणाललोभनीयचक्रवाकाभ्यां, [4]हारलतारोमावलीसङ्गमव्याजप्रयागतरुफलाभ्यां, त्रिभुवनविजयपरिश्रमखिन्नस्य मकरकेतोर्विजनवासगृहाभ्यामुद्भासमानां स्तनाभ्यां, मुखचन्द्रसंततसंनिहितसन्ध्यारागेण, दन्तमणिरक्षासिन्दुरमुद्रानुकारिणा, निस्सरता हृदयानुरागेणेव रञ्जितेन, रागसागरविद्रुमशकलेनेवाधरपल्लवेनोपशोभमानां, तरुणकेतकदलद्राघीयसा पक्ष्मलचटुलालसेन हृदयावासगृहावस्थितस्य हृच्छयविलासिनो गवाक्षशङ्कामुपजनयता, सरागेणापि निर्वाणं [5]जनयता, गतिप्रसररोधकश्रवणकृतकोपेनेवोपान्तलोहितेन धवलयतेव जगदशेषं, उत्फुल्लकमलकाननसनाथमिव गगनं कुर्वता, दुग्धाम्भोनिधिसहस्राणीवोद्वमता, कुन्दनीलोत्पलमालतीमालालक्ष्मीमुपहसता नयनयुगलेन विभूषितां, दशनरत्नतुलादण्डेन [6]नयनसेतुसमुद्गतबन्धेन यौवनसन्मथवारणवरंडकेनेव नासावंशेन परिष्कृतां, विलोचनकुवलयभ्रमरपङ्क्तिभ्यां मुखमदनमन्दिरतोरणाभ्यां, रागसागरवेणिकाभ्यां, यौवननर्तकलासिकाभ्यां भ्रूलताभ्यां विराजितां, घनसमयाकाशलक्ष्मीमिवोल्लसच्चारुपयोधरां, [7]जयघोषणापन्नजनतामिवोल्लसत्तुलाकोटिप्रतिष्ठितां, सुयोधनधृतिमिव कर्णविश्रान्तलोचनां, वामनलीलामिव दर्शितवलि-

---

१ A, B, H हृच्छयकपोलचातुरिकाविभ्रमाभ्यां० । G adds विलेपन instead of कपोल while K adds विलास for कपोल ।

२ K ०वर्धनचूर्णपूर्णकनककलशाभ्यामिव ।
G कन्दर्पदर्पकशीलचूर्णपूर्णकनककलशाभ्यां० ।

३ यौवन...प्रसवाभ्यां is omitted by K and G.

४ K, G हारलतारोमावलीगङ्गायमुनासङ्गमव्याज० ।

५ H ०कुर्वता । but K and G accept जनयता following Habcdfgh as well as Narasimha,

६ A, B, H नयनसमुद्रसेतुबन्धेनेव । K, G नयनामृतसिन्धुसेतुबन्धेनेव ।

७ A, B, H, K जयघोषणापन्नजनमूर्तिमिव० । G जयघोषणापन्न(नरपति)मूर्ति० ।

भङ्गां.वृश्चिकरविस्थितिमिवातिक्रान्तकन्यातुलां,उषामिवानिरुद्धदर्शन-सुखां, शचीमिव वन्दनेक्षणरुचिं,पशुपतिताण्डवलीलामिवोल्लसचक्षुः-श्रवसं,अटवीमिवोत्तुंगश्यामलकुचां, वानरसेनामिव सुग्रीवाङ्गदशो-भितां, शनैश्चरेण पादेन सौम्येन दर्शनेन गुरुणा नितम्बेन, लोहिते-नाधरेण विकचेन विलोचनेन भास्वतालङ्कारेण, ग्रहमयीमिव संसार-भित्तिचित्रलेखामिव त्रैलोक्यसौन्दर्यसङ्केतभूमिमिव रसाञ्जनसिद्धि-मिव यौवनस्य, संकल्पवृत्तिमिव शृङ्गारस्य, निधानमिव कौतुकस्य, विजयपताकामिव मकरध्वजस्य, अभिभूतिमिव मदनकान्तायाः, सङ्केतभूमिमिव लावण्यस्य, स्तंभनचूर्णमिवेन्द्रियाणां, मोहनशक्ति-मिव मन्मथस्य, विहारस्थलीमिव सौन्दर्यस्य, एकायतनशालामिव सौभाग्यस्य, उत्पत्तिस्थानमिवकान्तेः, [आकर्षणमन्त्रसिद्धि] मिव मनसः, चक्षुर्बन्धनमहौषधिमिव मन्मथेन्द्रजालिनः, त्रिभुवनविलो-चनसृष्टिमिव प्रजापतेः कन्यकामष्टादशवर्षदेशीयामपश्यत्स्वप्ने ।

§६) अथ तां प्रीतिविस्तारितेन पिबन्निव चक्षुषा, जनितेर्ष्ययेव निद्रया चिरसेवितया मुमुचे । विबुद्धस्तु विषसरसीव दुर्जनवचसीव निमग्नमात्मानमवधारयितुं न शशाक । तथाहि क्षणमाकाशतलालिङ्ग-नार्थं प्रसारितबाहुयुगलः, एह्येहि प्रियतमे, मा गच्छ मा गच्छेति दिक्षु विदिक्षु च विलिखितामिवोत्कीर्णामिव चक्षुषि निखातामिव हृदये प्रियामाजुहाव । ततस्तत्रैव शय्यातले निलीनो निषिद्धाशेषपरिजन-दर्शनो दत्तकपाटः परिहृतताम्बूलाहारादिसकलोपभोगस्तं दिवस-मनयत् । तथैव निशामपि स्वप्नसमागमेच्छाभिरनैषीत् ।

§७) अथ तस्य प्रियसखो मकरन्दो नाम कथमपि लब्धप्रवेशः कन्दर्पसायकप्रहारविवशं कन्दर्पकेतुमुवाच । सखे किमिदमसाम्प्रत-

---

१ A ०मुषामिव जनितानिरुद्धदर्शनसुखाम् । B ...०मिवानिरुद्धदर्शितसुखाम् ।

२ G रसायनसिद्धिमिव यौवनस्य । K रसायनसमृद्धिमिव यौवनमहायोगिनः । H रसायनसिद्धिमिव यौवनमहायोगिनः ।

३ H, A, B, G प्रीतिविस्फारितेन ।

४ P विषरससरसीव; A in adscript विषयरससरसीव and adds before विष...सर-सीव the word चिंतासरसीव ।

५ K निर्लक्षमाकाशतले ।

६ H, K, G omit ०दर्शनो ।

मसाधुजनोचितचरितमाश्रितोऽसि । तवैतदालोक्य [चरितं] वितर्कदोलासु निवसन्ति सन्तः । खला पुनस्तत्तदनिष्टमनुचितमेवावधारयन्ति । अनिष्टोद्भावनरसान्तरं खलहृदयं भवति । को नामास्य तत्त्वनिरूपणे समर्थः । तथाहि भीमोऽपि न बकद्वेषी, आश्रयाशोऽपि मातरिश्वा, अतिकटुरपि महारसः, सर्षपस्नेह इव करयुगलालितोऽपि शिरसा धृतोऽपि न कौटवं जहाति । तालफलरस इवापातमधुरः परिणामविरसस्तिक्तश्च । पादपराग इवाधूतोऽपि मूर्द्धानं कषाययति । विषतरुप्रसव इव यथा यथानुभूयते तथा तथा मोहमेव द्रढयति । न वारिविरहोऽस्य जायते नीचदेशस्येव । निदाघदिवस इव मत्सरो वहति संतापं सुमनसाम् । अन्धकार इव दोषानुबन्धचतुरः विश्वकर्मावलोपनोद्यतः । विरूपाक्षोऽपि चक्रधरः, शक्राश्व इवोच्चैःश्रवाः नदेशाजप्रशंसी च । शरस्येव निर्भिन्नस्यापि सतः स्नेहं दर्शयन्ति । नक्राट इव हृदयं विलोडयति । यक्षबलिरिवात्मघोषमुखरो मण्डलभ्रमणकथकश्च । मत्तमातङ्ग इव स्ववशालोलमुखोऽधरीकृतदानश्च । वृषभ इव सुरभियानविकलः कामीव गोत्रस्खलनविधुरो वामाध्वानुरक्तश्च । अजीर्णविकार इव कलेवरेऽपि वचसि मन्दिमानमावहति । वञ्चक इव रक्तः कटुकफलेन विभावरीरक्तश्च । परेत इव बन्धुतापदर्शनः । परशुरिव भद्रश्रियमपि खण्डयति । कुद्दाल इव दलितगोत्रः क्षमाभाजः प्राणिनो निकृन्तति । रतकील इव जघन्यकर्मलग्नोऽपि हेपयति साधून् । दुष्ट-

---

७ A, H, K, G ०रसोत्तरं० ।

२ H कटुत्वं ।

३ B इवाकम्पितोऽपि ।

४ K प्रसून इव । G प्रसूनमिव ।

५ B, H, K, G बहुमत्सरो० ।

६ K, G रुद्र इव विरूपाक्षः विष्णुरिवचक्रधरः ।

७ A स्नेहं दर्शयतोऽपि कालकूट इव हृदयं विलोडयति ।
B स्नेहं दर्शयतोऽपि नक्राट इव मद्यं विलोडयति ।

८ K, G जीर्णरोग इव ।

९ H, K, G वञ्चक इव कटपले [also Hd, Narasimha and Jagaddhara ०कटफले] रक्तो ।

शूर्पश्रुतिरिव काननरुचिरनुगतमपि यवसं ततं नानुमोदते । अबीजादेव जायन्तेऽकाण्डात्प्रसरन्ति खलव्यसनाङ्कुराः दुरुच्छेदाश्च भवन्ति। असतां हृदि प्रविष्टो हि दोषलवः करालायते, सतां न विशत्येव हृदयम्, भूयो यदि कथमपि विशति तदा पारद इव क्षणमात्रं न तिष्ठति। मृगा इव [विनोद] बिन्दोः श्रमगा भवन्ति साधवः। सुखं जना हि भवादृशाः शरत्समथा इव हरन्ति न च मित्रस्य सचेतना विसदृशामुपदिशन्ति । अचेतनानामपि मैत्री समुचितपक्षनिक्षिप्ता । [तथाहि] माधुर्यशैत्यशुचित्वतापशान्तिभिः पयः पय इति निमित्ततामुपगतस्य दुग्धस्य मत्समागमाद्वर्धितस्य क्वाथे पुरो ममैव क्षयो युक्त इति विचिन्त्येव वारिणापि क्षीयते। तदिदमसांप्रतमाचरितम् । सखे गृहाण साधुजनोचितमध्वानम् । साधवो हि मोहात्परमुत्पथप्रवृत्ता भवन्तीत्यादि वदति तस्मिन्कथमपि स्मरप्रहारपरवशः परिमिताक्षरमुवाच [कन्दर्पकेतुः]। वयस्य दितिरिव शतमन्युसमाकुला भवति सज्जनचित्तवृत्तिः। नायमुपदेशकालः। पच्यन्त इवाङ्गानि क्वथ्यन्त इवेन्द्रियाणि। भिद्यन्त इव मर्माणि । निःसरन्तीव प्राणाः। उन्मूल्यन्त इव विवेकाः। नष्टेव स्मृतिः। तदधुना यदि त्वं सहपांसुक्रीडितसमदुःखसुखोऽसि तदा मामनुगच्छेत्युक्त्वा परिजनालक्षितस्तेन सहैव पुरान्निर्जगाम ।

§ ८) अनन्तरं कतिपयनल्वशतमध्वानं गत्वागस्त्यवचनसँमाहृतब्रह्माण्डगतशिखरसहस्रः, कन्दरान्तरलतागृहसुखप्रसुप्तविद्याधरमिथुनगीताकर्णनसुखितचमरीगणमारणोत्सुकितशबरशतसंबाधकक्षतटः, कटककरिकराकृष्टभग्नस्यन्दमानहरिचन्दनामोदवाहिगन्धवाहसुरभितशिलातलः, सुदूरपतनभग्नतालफलरसार्द्रकरतलास्वादसोत्सु-

१ A, B खलव्यसनाङ्कुरा दुरुच्छेदा भवन्ति ।

२ श्रमगा is the reading of Hd and Jagaddhara and following it G accepts it; B, H, K read विनोदबिन्दोर्वशगा ।

३ A, H मित्रतामुपगतस्य । K, G पय इति शब्दसाम्याच्च मित्रतामुपगतस्य ।

४ A, B, H, K, G दिङ्मोहात् । K, G ०उत्पथप्रवृत्ता अपि पुनर्गृहीतसत्पथा भवन्ति ।

५ K, G अस्मादृशजनचित्तवृत्तिः । H भवति मनोवृत्तिः ।

६ A, B ०क्वाथ्यन्त० ।

७ A ०संगृहीत । H, K, G ०संहृत० ।

८ K, G सुखसुप्तप्रबुद्ध ।

कशाखामृगकदम्बकः, प्रलम्बमाननिर्झरवरसविधोपविष्टजीवंजीवकमिथुनलिह्यमानविविधफलरसामोदसुरभितपरिसरः, सरभसकेसरिसहस्रखरनखरधाराविदारितमत्तमातङ्गकुम्भस्थलगलितमुक्ताफलशबलशिखरतया शिरोलग्नं तारागणमिवोद्वहन्, सुग्रीव इव ऋक्षगवयशरभकेसरिकुमुदसेव्यमानपादच्छायः, पशुपतिरिव नागनिःश्वाससमुत्क्षिप्तभूतिः, जनार्दन इव विचित्रवनमालः, सहस्रकिरण इव सप्तपत्रस्यन्दनोपेतः, विरूपाक्ष इव सन्निहितगुहः शिवानुगतश्च, कामीव कान्तारोषरसानुगतः समदनश्च, श्रीपर्वत इव सन्निहितमल्लिकार्जुनः, नरवाहनदत्त इव प्रियङ्गुश्यामासनाथः, शिशुरिव कृतधात्रीधृतिः, वासरारम्भ इवारुणप्रभापाटलितपत्रवनराजिः, कृष्णपक्ष इव बहुलतागहनः, कर्ण इवानुभूतशतकोटिदानः, भीष्म इव शिखण्डिमुक्तैरर्धचन्द्रैराचितः, कामसूत्रविन्यास इव मल्लनागघटितकान्तारसामोदितः, हिरण्यकशिपुरिव शम्बरकुलाश्रयः, गैरिकरागव्याजादुपरिरविरथमार्गमार्गणार्थमिवारुणेनोपास्यमानः, शिखरगतसूर्याचन्द्रमस्तया विस्तारितविलोचनोऽगस्त्यमार्गमिवोद्वीक्षमाणः, स्रस्तान्त्रनाल इव जरदजगरभोगैः, कुम्भकर्ण इव दन्तान्तरालगतवानरव्यूहः, पिण्डालक्तकाङ्कितपदपङ्क्तिसूचितसञ्चरितशचीपतिवारविलासिनीसङ्केतकेतकीमण्डपः, अकुलीनोऽपि सद्वंशभूषितः, दर्शिताभयोऽपि मृत्युफलदायी, सप्रस्थोऽप्यपरिमाणः, सनदोऽपि निश्शब्दः, भीमोऽपि कीचकसुहृत्, पिहिताम्बरोऽप्युल्लसदंशुको विन्ध्यो नाम महागिरिरदृश्यत।

---

१ A ०निर्झरोपविष्ट० । K, G ०निर्झरोपान्तोपविष्ट० ।

२ A, B, H, K, G ०लेलिह्यमान० ।

३ K, G शिखरावलग्नं ।

४ K, G add पनस after कुमुद ।

५ P ०यानपादच्छायः ।

६ B omits कामीव...समदनश्च ।

७ H, K, G कान्तारसामोदः ।

८ A अस्रांतमाल इव । B स्रस्तांत्रमाल इव । K कुलिशशतरन्ध्रस्रस्तान्त्रजाल इव ।

९ K पिण्डालक्तकरागपल्लवित० । H पिण्डालक्तकरागाङ्कितपादपङ्क्ति० । G पिण्डालक्तकरक्तपदपङ्क्ति० ।

§ ९) यश्च प्रवृद्धगुल्मतयैवेह[1] दृश्यमानबहुधातुविकारः, साधुरिव सानुग्रहप्रचारप्रकटितमहिमा, मीमांसान्याय इव पिहितदिगम्बरदर्शनः । यश्च हरिवंशैरिव पुष्करप्रादुर्भावरमणीयैः, राशिभिरिव [2]मीनमिथुनकुलीरसङ्गतैः, करणैरिव शकुनिनागभद्रबालवकुलोपेतैः [3]खातकैरुपशोभितोपान्तः । [4]यश्च कुसुमविचित्राभिः, वंशपत्रपतिताभिः, सुकुमारललिताभिः पुष्पिताग्राभिः शिखरिणीभिः प्रहर्षिणीभिर्लताभिर्दर्शितानेकवृत्तविलासः । यश्च समदकलहंससारसरसितोद्भ्रान्तभाकूटविकटपुच्छ[5]कच्छव्याधूतविकचकमलखण्डविगलितमकरन्दबिन्दुसन्दोहसुरभितसलिलया, सायन्तनसमयो[6]न्मज्जद्राजसुन्दरिनाभिमण्डलनिपीतसलिलया, मदमुखरराजहंसकुलकोलाहलमुखरितकूलपुलिनया, [7]तटनिकटमत्तमातङ्गगण्डपिण्डनिर्गतमदधारास्तबकितसलिलया, तीरप्ररूढकेतकीकाननिपतितधूलीनिकुरुम्बजात[8]सैकतसुखोपविष्टतरुणसुरमिथुननिधुवनलीलापरिमलसाक्षिकू[9]लोपवनया, [10]तटावटनिकटनिपतितजम्बूखण्डमण्डपावस्थितजलदेवतावगाह्यमानपयसा, तीरप्ररूढवेतसलताभ्यन्तरनिलीनदात्यूहव्यूहमदकलकुहकुहारावकौतुकाकृष्टसुरमिथुनै[11]संस्क्रियमाणोपभोगया, [12]उपकूलसञ्जातकुलालकुक्कुटघटाघूत्कारतीरया, [13]जलमानुषमृदितसुकुमारपुलिनया, उपवनवाता-

१ K, G प्रवृद्धगुल्मतया रोगीव ।

२ K, G मीनमकरकुलीरमिथुन० ।

३ A, B H, K, G देवखातैरुपशोभितोपान्तः ।

४ K यश्च छन्दोविचितिरिव ।

५ K विकटकुञ्जकूर्चव्याधूत । G विकटकुञ्जकच्छव्याधूत० । H विकटपुच्छच्छटाव्याधूत ।

६ H, K, G ०न्मज्जत्पुलिन्दराजसुन्दरी ।

७ K, G तटिनीतट...गण्डस्थलविगलन्मदधाराविन्दुप्रकर० ।

८ H, K, G सितसैकत ।

९ P ०कूलपवनया ।

१० K, G तटावटविघटिताम्भोजखण्ड० । B, H तटाटवीनिकट० ।

११ A, B, H, R, G संस्तूयमानोपभोगया ।

१२ A उपकुले ..नलनिकुञ्जपुञ्जकुलाल० । H, K, G उपकूलसञ्जातनलनिकुञ्जपुञ्जितकुलायकुक्कुटघटाघटित० ।

१३ K, G आतपसेवासमुत्सुकजलमानुषीमृदित० ।

A and B have hopelessly missed the order of the long phrases.

न्दोलिततरलतरङ्गया, नलनिकुञ्जपुञ्जनिविष्टबकोटककुटुम्बिनीनिरीक्ष्यमाणार्द्धशफरया, पोताधानलुब्धककोयष्टिकस्कम्भनभीमवेतसवनया, तरङ्गमालासन्तरद्दुद्दण्डपालदर्शनधावदतिचपलराजिलराजिराजितोपकूलसलिलया, खञ्जरीटकणाटीनमिथुनमैथुनोपजातनिधिग्रहणकौतुककिरातशतखन्यमानतीरया, क्रुद्धयेव दर्शितमुखभङ्गया, मत्तयेव स्खलद्वृत्या, दिनारम्भलक्ष्म्येव वर्धमानवेलया, भारतसमरभूम्येव नृत्यत्कबन्धया, प्रावृषेव विजृम्भमाणशतपत्रपिहितविषधरया, धनकामयेव कृतभूभृत्सेवया रेवया प्रियतमयेव प्रसारितवीचिहस्तोपगूढः। यश्च

हरिखरनखरविदारितकुम्भस्थलविकलवारणध्वानैः।
अद्यापि कुम्भसम्भवमाह्वयतीवोच्चतालभुजः ॥ १४ ॥

ततो मकरन्दस्तमुवाच

पश्योदञ्चदवाञ्चदञ्चितवपुःपश्चार्द्धपूर्वार्द्धभाक्
स्तब्धोत्तानितपृष्ठनिष्ठितमनाग्भुग्नाग्रलाङ्गूलभृत्।
दंष्ट्राकोटिविसङ्कटास्यकुहरः कुर्वन्सटामुत्कटा-
मुत्कर्णः कुरुते क्रमं करिपतौ क्रूराकृतिः केसरी ॥ १५ ॥

अपि च

उत्कर्णोऽयमकाण्डचण्डिमकटुः स्फारत्स्फुरत्केसरः
क्रूराकारकरालकायविकटः स्तब्धोर्ध्वलाङ्गूलभृत्।
चित्रेणापि न शक्यते विलिखितुं सर्वाङ्गसङ्कोचभाक्
चीत्कुर्वद्गिरिकुञ्जकुञ्जरशिरः कुम्भस्थलस्थो हरिः ॥ १६ ॥

§ १०) अनन्तरं च नीचदेशनयेव न्यग्रोधोपचितया, उत्तरगोग्रहणसमरभूम्येव विजृम्भितबृहन्नलया, मरुदेशटक्कयात्रयेव घनसारसार्थ-

१ A, B omit खञ्जरीट and add दर्शन after मैथुन। A has मिथुनमैथुन in adscript. H omits खञ्जरीट while K omits कणाटीर।

२ K तरङ्गहस्तयोपगूढः।

३ B adds यः after अद्यापि।

४ K. G उत्कर्णोऽय...पटुः।

५ K. G ०करालवक्त्रकुहरः। H ०करालवक्त्रविकट०।

६ K फिट्कुर्वद्गिरिकुञ्जकुञ्जरबृहत्कुम्भस्थलस्थो हरिः।

७ कुरुदेशेढक्कयेव।

वाहिन्या, विदग्धमधुगोष्ठ्येव नानाविटपीतासवया, नलकूबरचित्त-वृत्त्येव सततधृतरम्भया, मत्तमातङ्गगत्येव घण्टारवविदितमार्गया, सदीश्वरसेवयेव दूरोद्गतबहुफलया, विराटलक्ष्म्येव आनन्दितकीचकशतया विन्ध्याटव्या कतिपयपदं गत्वा, कामिन इव मदनशलाकाङ्कितस्य, विकर्तनस्येव स्निग्धच्छायस्य, वैकुण्ठस्येव लक्ष्मीभृतः, यात्रोद्यतनृपतेरिव घनपत्रशोभितस्य,वेदस्येव भूरिशाखालङ्कृतस्य,गाणिक्यस्येवानेकपल्लवोज्ज्वलस्य, जम्बूवृक्षस्य तलच्छायायां विशश्राम ।

§११) अत्रान्तरे भगवानपि मरीचिमाली आतपक्लान्तमत्तमहिषलोचनपाटलमण्डलश्चरमाचलशृङ्गमारुरोह ।

§१२) ततो मकरन्दः फलमूलान्यादाय कथमपि तमभिनन्दिताहारपरिचयमकार्षीत् । स्वयं च तदुपभुक्तशेषमशनमकरोत् । अथ तामेव प्रियतमां हृदयफलके संकल्पतूलिकया लिखितामवलोकयन्निष्यन्दकरणग्रामः कन्दर्पकेतुर्मकरन्दविरचितपल्लवशयने सुष्वाप । अथार्धयाममात्रखण्डितायां विभावर्यां तत्र जम्बूतरुशिखरे मिथः कलहायमानयोः शुकशारिकयोः कलकलं श्रुत्वा कन्दर्पकेतुर्मकरन्दमुवाच । वयस्य शृणुवस्तावदेतयोरालापमिति । ततः सारिका प्रकोपतरलाक्षरमुवाच । कितव शारिकान्तरमन्विष्य समागतोऽसि, कथमितरथा रात्रिरियती तवेति । तच्छ्रुत्वा शुकस्तामब्रवीत् । भद्रेऽपूर्वा मया कथा श्रुता । अथ समुपजातकुतूहलयानुबध्यमानः स कथयितुमारेभे ।

§१३) अस्ति प्रशस्तसुधाधवलैः बृहत्कथालम्बैरिव शालभञ्जिकोपशोभितैः, वृत्तैरिव समाणवकक्रीडितैः, करियूथैरिव समत्तवारणैः,

१ H, K, G अदूरोद्गत० । K remarks, "दूरोद्गत इति पाठे तु दूरोद्गता अत्युच्छ्रिता इति । पक्षे दूरोद्गतानि अत्यन्ताधिकानि इति च व्याख्येयम्" ।

२ A, B omit विकर्तनस्येव...अनेकपल्लवोज्ज्वलस्य ।

३ K omits परिचयम् ।

४ H, G ०निष्पन्द० । K ०निस्पन्द० ।

५ K याममात्रखण्डितायां यामवत्यां तत्र ।

६ A ०प्रकोपतरलाक्षरं (B शुकं) । Hd, K जम्बूनिकुञ्जस्थिता शारिका काचिच्चिरादागतं शुकं ।

७ H, K, G अन्यथा ।

८ K, G अपूर्वा बृहत्कथा मया श्रुता ।

९ K, G अस्ति मन्दरगिरिशृङ्गैरिव प्रशस्त० ।

सुग्रीवसैन्यैरिव सगवाक्षैः, बलिभवनैरिव सुतलसन्निवेशैर्वेश्मभिरुद्भासितं, धनदेनापि प्रचेतसा, प्रजापालेनापि रामेण, प्रियंवदेनापि पुष्पकेतुना, भरतेनापि शत्रुघ्नेन, तिथिपरेणाप्यतिथिसत्कारप्रवणेन, असङ्ख्येनापि सङ्ख्यावता, मर्मभेदिनापि वीरतरेण, अपतितेनापि नानासवासक्तेन, सुदर्शनेनाप्यचक्रेण, अज्ञातमदेनापि सुप्रतीकेन, अपक्षपातिनापि हंसेन, अविदितस्नेहक्षयेणापि कुलप्रदीपेन, अग्रहेणापि काव्यजीवज्ञेन, निदाघदिवसेनेव वृषवर्धितरुचिना, माघविरामदिवसेनेव तपस्यारम्भिणा, नभस्वतेव सत्पथगामिना, विवस्वतेव गोपतिना, महेश्वरेणेव चन्द्रं दधता निवासिजनेनानुगतं, घनाघनेनेव प्रवालमणिमण्डलेन, देवाङ्गनाजनेनेवेन्द्राणीपरिचितविदग्धेन, वनगजेनेव नवपल्लवपल्लवितरुचिना, कोकिलेनेव परपुष्टेन, भ्रमरेणेव कुसुमेषु ललितेन, जलौकेनेव रक्ताकृष्टिनिपुणेन, याचजूकेनेव सुरतार्थिना, महानटबाहुनेव बद्धभुजङ्गेन, गरुडेनेव विलासिहृदयतापकारिणा, अन्धासुरणेव शूलानासुपरिगतेन वेश्याजनेनाधिष्ठितं कुसुमपुरं नाम नगरम् ।

§१४) यत्र च सुरासुरमौलिमणिमालाललितचरणारविन्दा, शुम्भनिशुम्भबलमहावनदावानलज्वाला, महिषमहासुरगिरिवरवज्रधारा, प्रणयप्रणतगङ्गाधरजटाजूटस्खलितजाह्नवीजलधाराधौतपादपद्मा

१ A, B, H अजापालेनापि । K, G गोपालेनापि ।

२ K लक्ष्मणेन ।

३ P अपक्षपातेनापि ।

४ A, B, H, K read 'अग्रन्थिनापि वंशपोतेन' after कुलप्रदीपेन ।

५ After काव्यजीवज्ञेन A reads जनेनानुगतं घनागमदिवसेनेव दर्शितखण्डाभ्रेणेव वेलातटेनेव प्रवालमणिमण्डितेन देवाङ्गनाजनेनेवेन्द्राणीपरिचयविदग्धेन वनगजेनेव नवपल्लवपल्लवितरुचिना कोकिलेनेव परपुष्टेन । Evidently A has confused the order of words in the original.

६ K घनापगमेनेव दर्शितखण्डाभ्रेण वेलातटेनेव प्रवालमण्डनेन ।

७ H याजकेनेव ।

८ P बाहुवनेनेव । H महानटबाहुनेव वलगद्भुजङ्गेन । G, K महा० बद्धभुजङ्गाङ्केन ।

९ K, G अन्धकेनेव ।

भगवती कात्यायनी चण्डाभिधाना स्वयं निवसति। यस्य परिसरे सुरासुरमुकुटकुसुमरजोराजिपरिमलवाहिनी, प्रजापतिकमण्डलुधर्मद्रवधारा, धरातलगतसगरसुतशतसुरनगरसमारोहणपुण्यरज्जुः, ऐरावणकटकमठकम्पिततटा, हरिचन्दनस्यन्दनसुरभितसलिला, सलीलसुरसुन्दरीनितम्बबिम्बाहतितरलिततरङ्गा, स्नानावतीर्णसप्तर्षिमालाविमलजटाटवीपरिमलपुण्यवेणिः, एणतिलकमुकुटजटाजूटकुहरभ्रान्तिजनितसंस्कारतयैव कुटिलावर्ता, धरणीव सार्वभौमकरस्पर्शोपभोगक्षमा, जलदकालसरसीव गन्धान्धोपरिभ्रमद्भ्रमरमालानुमीयमानजलमग्नकुमुदपुण्डरीका, छन्दोविचितिरिव मालिनीसनाथा, ग्रहपङ्क्तिरिव सूर्यात्मजोपशोभिता सराजहंसा च, शरत्कालदिनश्रीरिवोज्ज्वलत्कोकनदा प्रबुद्धपुण्डरीकाक्षा च, हतान्धतमसापि तमसान्विता, [वीचिकलिताप्यवीचिदुर्गमा] भगवती भागरथी प्रवहति।

§ १५) [यच्च] दिशि दिशि कुसुमनिकरमिव तारागणमुद्वहद्भिः, उत्तम्भितजलदैः, अनूरुकशाभिघातपरवशरविरथतुरगग्रासविषमितपल्लवैः, चन्द्रचमूरुरुचिरचरणसङ्क्रान्तामृतकणनिकरसेकसंजातबहलसुकुमारनवकिसलयसहस्रकलिताकालसन्ध्याविभ्रमैः, भरतचरितैरिव सदारामाश्रितैः, महावीरैरिव नारिकेलधरैः, असंस्कृततरुणैरिव दूरप्रसारिताक्षैः, तपस्विभिरिव जपासक्तैः, प्रसाधितैरिव मालोपशोभितैः, मातङ्गकुम्भस्थलदारणोद्यतसिंहैरिवोत्कर्णकेसरैः, सारिष्टैरपि चिरजीविभिः, मुनियुतैरपि मदनाधिष्ठितैः, उपवनपादपैरुपशोभितं, अदितिजठरमिवानेकदेवकुलाध्यासितं, पातालमिव महाबलिशोभितं भुजङ्गाधिष्ठितञ्च, सुरालयैरपि पवित्रं, भोगिभिरपिनिरुपद्रुतम्।

§ १६) तत्र च सुरतभरखिन्नसुप्तसीमन्तिनीरत्नताटङ्कमुद्राङ्कित-

---

१ A चण्डाभिधाना; B वेतालाभिधायिनी।

२ K, G सुरासुरमज्जनगलितकुसुम०।

३ A, B, K, G पितामहकमण्डलु०।

४ A, B ऐरावतकटकषणकम्पिततटगतहरिचन्दन०।
K, G ०रज्जुनिश्रेणिका। ऐरावतकपोलकषणकम्पिततटगतहरिचन्दन०।

५ K, G गन्धपरिभ्रमद्०।

६ H दिशिदिशि तारागणमिव कुसुमनिकरमुद्वहद्भिरुत्त०। K, G यच्च दिशि दिशि सन्तानकतरु०।

बाहुदण्डः, प्रचण्डप्रतिपक्षलक्ष्मीकेशपाशकुसुममालामोदसुरभितकर-कमलः, प्रशस्तकेदार इव बहुधान्यकार्यसंपादकः, पार्थ इव सुभद्रान्वितः सभीमसेनश्च, कृष्ण इव सत्यभामोपेतः[1] शृङ्गारशेखरो नाम राजा प्रतिवसति। यो बलभित् पावको धर्मराण् निर्ऋतिः प्रचेताः सदागतिर्धनदः शङ्कर इत्यष्टमूर्तिरप्यनष्टमूर्तिः ।

सुराणां पातासौ स पुनरतिपुण्यैकहृदयो
ग्रहस्तस्यास्थाने गुरुरुचितमार्गे स निरतः ।
करस्तस्यात्यर्थं वहति शतकोटिप्रणयितां
स सर्वस्वं दाता तृणमिव सुरेशं विजयते ॥ १७ ॥

जीवाकृष्टिं स चक्रे मृधभुवि धनुषः शत्रुरासीद्गतासु-
र्लक्ष्याप्तिर्मार्गणानामभवदरिबले तद्यशस्तेन[2] लब्धम् ।
मुक्ता तेन क्षमेति त्वरितमरिगणैरुत्तमाङ्गैः प्रतीष्टो[3]
पञ्चत्वं द्वेषिसैन्ये स्थितमवनिपतिर्नापि सङ्ख्यान्तरं सः ॥ १८ ॥

§ १७) यत्र च राजनीतिचतुरे चतुरम्बुधिमेखलाया[4] भुवो नायके शासति वसुमतीं पितृकार्ये वृषोत्सर्गः, शशिनः कन्यातुलारोहः, योगेषु शूलघातादिचिन्ता, दक्षिणवामकरणं दिग्विनिश्चयेषु, शरभेदो दधिषु, शृङ्खलाबन्धो वर्णग्रथनासु, उत्प्रेक्षाक्षेपः काव्यालङ्कारेषु, लक्षदानच्युतिः सायकानां, क्रिपां सर्वविनाशः, कोशसङ्कोचः कमलाकरेषु[5], जातिहीनता[6] दुष्कुलेषु न पुष्पमालासु, शृङ्गारहानिर्जरत्करिषु न जनेषु, दुर्वर्णयोगः कम्बिकादिषु[7] न कामिनीकान्तिषु, गान्धारविच्छेदो

---

१ K adds. सबलश्च after ०पेतः । G सत्यभामानुरक्तः सबलश्च ।

२ Ha, K, G सद्यश० ।

३ H प्रतिष्ठा । K, G प्रविष्टा ।

४ K, G ०मेखलां शासति वसुमतीं ।

५ K, G add न जनेषु after कमलाकरेषु ।

६ K, जातिविहीनता मालासु न कुलेषु । G जातिविहीनता मालासु न दुष्कुलेषु ।

७ A कठिकादिषु । B दुर्वर्णयोगः कंटिकासु न कामिनीकमलाकान्तिषु । K, G कर्णिकादिषु । H कटकादिषु । कम्बिका or कम्बि (f) is explained by Monier Williams as a shoot or a branch or a joint of a bamboo and the word according to him rarely occurs except in lexicons.

रागेषु न पौरवनितासु, मूर्च्छाधिगमो गानेषु, खे[1]र्माभावो नीचसेवकेषु न परिधानेषु, मलिनाम्बरत्वं निशासु न जनेषु, चलरागता गीतेषु न विदग्धजनेषु, वृषहानिः निधुवनलीलासु न पौरेषु, भङ्गुरत्वं रागविकृतिषु न [2]चित्तेषु, अनङ्गता कामदेवे न परिजने, माराममो यौवनोदयेषु न प्रकृतिषु, द्विजघातः सुरतेषु न प्रजासु, रशनाबन्धो रतिकलहेषु न दानानुमतिषु, अधररागता तरुणीषु न परिजनेषु, कर्तनमलकभ्रूषु न पुरन्ध्रीषु, निस्त्रिंशत्व[3]मसीनां, करवालनाशो योधानां परं व्यवस्थितः ।

§ १८) [4]तस्य च महिषी दिग्गजमदलेखेवानन्दितालिमाला, पार्वतीव सुकुमारा [5]चन्द्रलेखालङ्कृता च, वनराजिरिव नवमालिकोद्भासिता सचित्रका च, अप्सरस्संहतिरिव संहतसुकेशी समञ्जुघोषा च, सर्वान्तःपुरप्रधानभूता अनङ्गवती नाम । तयोश्च मध्यमोपान्तवयसि वर्तमानयोः कथमपि दैवशात् त्रिभुवनविलोभनीयाकृतिः, [6]पुंलोमतनयेवानन्दितसहस्रनेत्रा वासवदत्ता नाम [तनया] बभूव । [7]अथ सा रावणभुजवन इवोल्लासितगोत्रेव परिणाममुपयात्यपि यौवनभावे परिणयपराङ्मुखी तस्थौ ।

§ १९) अथैकदा तु विजृम्भमाणसहकारकोरकनिकुरुम्बनिपतितमधुकरमाला[8]मदहुङ्कारजनितपथिकसंज्वरः, कोमलमलयमारुतोद्भूत-

१ A कर्माभावो नीचसेवकेषु ।
H, K, G ०न परिजनेषु ।

२ A न चरितेषु । B न चित्रेषु ।

३ K, G ०मसिषु न मनस्सु, करवालनाशो योधेषु न जनपदेषु परमेवं व्यवस्थितम् ।

४ K, G तस्य चाभूदेवंविधस्य राज्ञो महिषी ।

५ A, H omit चन्द्रलेखा … … समञ्जुघोषा च ।

६ P पुलोमतनयातनयेवानन्दितसहस्रनेत्रा । K has a long line after सहस्रनेत्रा— "मेरुगिरिमेखलेव सुजातरूपा शरन्निशेवोल्लसत्तारका सत्परिषदिवाच्छिद्रद्विजपङ्क्तिभूषिता राक्षसकुललक्ष्मीरिव माल्यवत्सुकेशशोभिता तनयाभूद्" । G follows K ।

७ K has again a longer line
अथ सा रावणभुजवन इवोल्लसितगोत्रे विन्ध्याचल इव मदनालङ्कृते पारावार इव संञ्जात लावण्ये नन्दनवन इव सदा कल्पतरुणाभिनन्दिते पवन इव सुमनोहरे । G follows K.

८ B ०मदकलझङ्कारध्वनिजनितपथिकजनज्वरः ।

चूतप्रसवसरसास्वादकषायकण्ठकलकण्ठकुहरितभरितसकलदिङ्मुखः, विकचकमलखण्डलीयमानमत्तकलहंसकुलकोलाहलमुखरितकमलसरोवरः, परभृतनखकोटिपाटितपाटलकुड्मलविवरविनिर्गतमधुधारासारशीकरकणनिकरसमारब्धदक्षिणसमीरबाणदुर्व्रणितपथिकवधूहृदयः, मधुमदमुदितकामिनीगण्डूषसीधुसेकपुलकितबकुलः, मदनरयपरवशविकासिनीतुलाकोटिविकटचटुलचरणारविन्दामन्दप्रहारहृष्टकङ्केलिशतः, प्रतिदिशमश्लीलप्रायैर्गीयमानश्रवणोत्सुकखिङ्गजनप्रायप्रारब्धचर्चरीगीताकर्णनमुह्यदनेकपथिकशतः, दुर्जन इव सतामरसः, दुष्कुल इव जातिहीनः, रावण इवापीतलोहितपलाशशतसेवितः, महाशृङ्गारीव सुगन्धवहः, सुराजेव सम्भृद्धकुवलयः, वाँस्तविक इव वर्धितसुखाशः, सत्कविकाव्यबन्ध इवाँबद्धतुहीनः, सत्पुरुष इव दोषानुबन्धरहितः, कैवर्त इव बद्धराजीवोत्पलजालः, समृद्धकासारशकुनिसार्थ इव निन्दितमरुबकः, शक्र इवेन्द्राणीरुचितः, महावीर इवाधरीकृतदमनकः, खिङ्ग इवाम्लानसुभगो वसन्तकाल आजगाम।

§२०) अतिदूरप्रवृद्धेन मधुना जगति को वा न विक्रियते यदतिमुक्तोऽपि मुनिरपि विचकास। कुसुमशरस्य नवचूतशरमूलनिलीनमधुँकरावलि पत्रेणेव रेजे। वृन्तनिर्गतविचकिलविवरे गुञ्जन्मधुकरो मकरकेतोस्त्रिभुवनविजयशङ्खध्वनिमिव चकार। नवयावकपङ्कपल्लवितसनूपुरतरुणीचरणप्रहारानुरागवशान्नवकिसलयच्छलेन तमेव रागमुदवहदशोकपादपः। मधुरमधुध्वनितकामिनीमुखकमलसङ्गानु-

---

१ K, G परभृतखरनखरत्रोटिकोटि०।

२ A, B, H, K, G मदनरसपरवश०।

३ K, G ०प्रायवैहासिक ... ... उत्सुकषिद्गजनसमारब्धचर्चरीतालाकर्णन०।

४ K वास्तुक इव।

५ K, G इवानवबद्धतुहिनिपातः। ६ B पिङ्ग इव। H खिड्ग इव। K, G षिद्ग इव।

७ K, G ०मधुकरावलिर्नामाक्षरपङ्क्तिरिव रेजे।

८ K वृन्तविनिर्गतविकचविचिकिलकलिकाविवरमञ्जु०।

९ A, B, H, K, G ०परिपूरित०।

१० H, K, G मुखकमलगण्डूषसेकादिव।

रागादिव तद्रसमात्मकुसुमेषु विश्वद्कुलतरु [१]रराजत। अन्तरान्तरानिपतितमधुकरनिकरकिर्मीरः कङ्केलिगुच्छोऽर्द्धनिर्वाणमनोभवचिताचक्रानुकारी पथिकजनदाहमुवाह। विकचविचकिलराजिरलिकुलशबलेन्द्रनीलमुक्तावलीव मधुश्रियो रुरुचे। [२]विरहिणीहृदयमथनाय कुसुमशरस्य [३]चक्रमिव नागकेसरकुसुममशोभत। पथिकहृदयमस्त्यं ग्रहीतुं मकरकेतोः पला[४]वं इव पाटलिपुष्पमदृश्यत।

§२१) कन्दर्पकेलिसंपल्लम्पटलाटीललाटतटविकटधम्मिल[५]मेलनमिलितपरिमलसमृद्धमधुरिमगुणः, कामकलाकलापचारुसुन्दरीसुन्दरस्तनकलशघुसृणधूलिपरिमलामोदवाही, [६]रणरणकरसितकान्तकुन्तलीकुन्तलोल्लासनसङ्क्रान्तपरिमलमिलितालिमाला मधुरतरझङ्कारमुखरितनभस्तलः, नवयौवनरागतरलकेरलीकपोलपालिपत्रावलीपरिचयचतुरः, चतुःषष्टिकलाकलाप[७]विदग्धमुखमा[८]लवीनितम्बबिम्बसंवाहकुशलः, सुरतश्रमवशां[९]ध्रीनीरन्ध्रपीनपयोधरभारनिदाघकणशिशिरितो [१०]मलयानिलो ववौ।

§२२) अत्रान्तरे वासवदत्तासखीजनाद्विदिताभिप्रायः शृङ्गारशेखरः स्वसुतास्वयंवरार्थमशेषधरणितलभाजां [११]भूभुजां सङ्गतमकरोत्। ततो दग्धकृष्णागुरुपरिमलामोदितमधुव्रतमालाबहलगुमगुमायितमुखरितं, अतिरभसहासच्छटादीधितिपरिमिलितं, अनेक-

१ H, K, G रराज।

२ H, K, G विरहिणां।

३ K शरशाणचक्रमिव। G शागचक्रमिव। Ha, Hb and Narasimha तक्राटचक्रमिव।

४ A वडिश इव।

५ A मिलिनमिलित। B धम्मिल्लमल्लिकामिलित।
K, G have a diff. reading कन्दर्प ... ... तटलुलितालकधम्मिल्लभारवकुलकुसुमपरिमलमलेनसमृद्धमधुरिमगुणः।

६ K, G रणरणकरसितापरान्तकान्तकुन्तलोल्लनसङ्क्रान्तपरिमलमिलितालिमाला॰।

७ P ॰कलापदुग्धमुख॰।

८ H, K, G मालवनितम्बिनी॰।

९ K, G आन्ध्रपुरन्ध्री॰।

१० K, G मलयमारुतो।

११ K, G राजपुत्राणामेकत्र मेलनमकरोत्।
A, H, ॰सङ्गममकरोत्। B ॰मेकत्रसमागममकरोत्।

कथालापविदग्धशृङ्गारमयजनसमाकुलं, [1]दह्यमानसुगन्धसौरभाकृष्टपुरोपवनषट्पदकुलसमाकुलं, अर्जुनसमरमिव नन्दिघोषमुखरितदिगन्तं मञ्चमारुरोह वासवदत्ता ।

§२३) तत्र केचित्कलाङ्कुरा इव विजितनगरमण्डनाः, अपरे पाण्डवा इव दिव्यचक्षुःकृष्णागुरुपरिमिलिताः, अन्ये शरद्दिवसा इव दूरप्रवृद्धाशाः, इतरेऽप्या[2]हर्तुमुद्यता इव स्वबलार्थिनः, केचिद्व्याधा इव शकुनश्रावकाः, [3]केचिदाखेटिन इव रूपानुसारप्रवृत्ताः, केचिज्जैमिनिमतश्राविण इव तथागत [मत] ध्वंसिनः, केचित्खञ्जना इव सांवत्सरफलदर्शिनः, [4]केचित्सुमेरुपरिसरा इव कार्तस्वरमयाः, केचित्कुमुदाकरा इव भास्वद्दर्शननिमीलिताः, केचिद् धार्तराष्ट्रा इव विश्वरूपावलोकनजनितेन्द्रजा[5]लोद्भूतप्रत्ययाः, केचिदात्मनिवारणबुद्ध्या बलवन्तोऽपि सुवाहाः, केचित्पाणिग्रहणार्थिनोऽप्यसुकरं मन्यमानाः, केचिद्धरीभूतापि स्थिराः, केचित्पाण्डुपुत्रा इवा [क्षहृदया]ज्ञानहृतक्षमाः, केचिद् बृहत्कथाबन्धिनो गुणाढ्याः, केचित्तिर्यग्गतयो गन्धवाहाः,केचित्कौरवसैनिका इव द्रोणाशासूचकाः, [6]केचित्कुमुदाकरा इवासोढभासः क्षणमेवं स्थिता राजपुत्राः । [7]सा च क्षणेनैकैकशः [8]समवलोक्य कुमारिका तस्मात्कर्णीरथादवततार ।

§२४) अथ सा तस्यामेव रात्रौ स्वप्ने बालिनमिवाङ्गदोपशोभितं, कुहूमुखमिव [9]हारिकण्ठं, कनकमृगमिव रामाकर्षणनिपुणं, जयन्तमिव वचनामृतानन्दितवृद्धश्रवसं,कृष्णमिव कं सहर्षं न कुर्वन्तं, महामेघमिव

१ K, G ०दह्यमानमहिषाक्षादि ।

२ B, H व्याहन्तुमुद्यताः ।

३ K, G केचिदाखेटासक्ता इव ।

४ A, B केचित्सुखन्तना इव ।

५ H ०जनितेन्द्रजालप्रत्ययाः । K, G ०जालाद्भूतप्रत्ययाः ।

६ K, G केचित्कैरवाकरा इवासोढसूरभासः ।

७ K, G सा च क्षणेनैतानेकैकशः ।

८ H समवलोकय विरक्तहृदयासौ कुमारिका तस्मात् कर्णवंशादवततार । K, G विरक्तहृदया सती तस्मात्कर्णीरथादवततार ।

९ P हरिकण्ठं ।

विलसत्करकं, [समुद्रमिव] [1]महासत्त्वं, मालिन्या कबरिकया, तुङ्गभद्रया नासिकया, शोणेनाधरेण, नर्मदया वाचा, गोदया भुजया स्वर्वाहिन्या कीर्त्या च पुण्यमयमिव, आदिकन्दं [2]शृङ्गारपादपस्य, [3]रोहणगिरिं सकलगुणरत्नसमूहस्य, प्रभवशैलं [4]सुन्दरकथानदीनां, सुरभिमासं वैदग्ध्यसहकारस्य, आदर्शतलं सौजन्यमुखस्य, आदिकन्दं विद्यालतानां, [5]स्वयंवरपतिं सरस्वत्याः, स्पर्धागृहं कीर्तिलक्ष्म्योः, आदिगृहं शीलसम्पदां, कोशमिव महा[6]सौन्दर्यस्य त्रिभुवनलोभनीयाकृतिं युवानं ददर्श ।

§ २५) स चिन्तामणिनाम्नो राज्ञस्तनयः कन्दर्पकेतुर्नामेति सा स्वप्न एव नामादिकम्[7]अश्रौषीत् । अनन्तरं 'अहो प्रजापते रूपनिर्माणकौशलमिदं, मन्ये स्वस्यैव नैपुण्यस्य सौन्दर्यदर्शनोत्सुकमनसा कमलभुवा जगत्त्रयसमवाये रूपपरमाणूनादाय विरचितोऽयमन्यथा कथमयमस्य कान्तिविशेष' इति, वृथैव दमयन्ती नलस्य कृते वन[वास]वैशसमवाप,मुधैवेन्दुमती महिष्यप्यजानुरागिणी बभूव,अफलमिव दुष्यन्तस्य कृते शकुन्तलापि दुर्वाससः शापमनुबभूव, निरर्थकमिव [8]मदनमञ्जुका नरवाहनदत्तं चकमे, निष्कारणमेवोरुगरिमनिर्जितरम्भा [रम्भा] नलकूबरमचीकमत,विफलमेव धूमोर्णा स्वयंवरार्था[9]गतदेवग्रहगन्धर्वसहस्रेषु धर्मराजमकाङ्क्षतेति [10]बहुधिया चिन्तयन्ती विरहमुर्मुरमध्यमारूढेव वाडवाग्निशिखा [कवलितेव], कालाग्निरुद्रपावकग्रस्तेव, पातालगुहा-

---

१ K, G समुद्रमिव महासत्त्वम् ।
A, B, H omit महासत्त्वं ... ... कीर्त्या च पुण्यमयमिवा० ।
It is rather strange that none of the ms. of H has this reading.

२ H रूपपादपस्य ।

३ H रोहणगिरिं शृङ्गाररत्नस्य ।

४ K, G सुन्दरकन्दर्पकथानदीनाम् ।

५ K कोशगृहं महासौन्दर्यधनस्य मूलगृहं शीलसंपदः स्वयंवृतपतिं कीर्तेः स्पर्धागृहं लक्ष्मीसरस्वत्योः ।

६ P मृगसौन्दर्यस्य ।

७ K, G ०मश्रुणोत् ।

८ K मदनमञ्जरी ।

९ K, G ०मागतेषु देवगणेषु धर्मराजमाचकाङ्क्षे ।

१० A, B, H, K, G बहुविधं । Before बहुविधं K, G read 'निष्प्रयोजनमेव ऋद्धिर्गन्धर्वयक्षेपु कुबेरमाससाद । अहेतुकमेव पुलोमतनया देवेन्द्रासक्ताचित्ता बभूव ।'

प्रविष्टेव, [शून्यकरण] ग्रामेलिखितमिव, उत्कीर्णमिव, निगलितमिव, वज्रलेपघटितमिव, अस्थिपञ्जरप्रविष्टमिव, मर्मान्तरास्थितमिव, [मज्जारसशबलितमिव], प्राणपरीतमिव, अन्तरात्मानमधिष्ठितमिव, रुधिराशयद्रवीभूतमिव, पललसंविभक्तमिव कन्दर्पकेतुं मन्यमाना, उन्मत्तेव, बधिरेव, मूकेव, शून्येव, निरस्तकरणग्रामेव, मूर्च्छागृहीतेव, ग्रहग्रस्तेव, यौवनसागरतरङ्गपरम्परापरिगतेव, रागरज्जुभिरपवारितेव, कन्दर्पकुसुमबाणैः कीलितेव, शृङ्गारविषघूर्णितेव, रूपपरिभावनशल्यखिल्लितेव, मलयानिलाहतजीवितेव, प्रियसख्यनङ्गलेखे वितर[मे]हृदये पाणिपादं दुःसहो विरहसन्तापः, मुग्धे मदनमञ्जरि [2]सिञ्च चन्दनोदकेन, सरले वसन्तसेने संवृणु केशकलापपाशम्, तरले [3]लवङ्गवति विकिर केतकधूलिं, [4]मालिनि अलं शैवलदलेन, चपले चित्रलेखे लिख चित्रे चित्तचोरं जनम्, भामिनि विलासवति विक्षिप मुक्ताचूर्णनिकरम्, रागिणि रागलेखे स्थगय नलिनीदलसमूहेन पयोधरभरम्, सुकान्ते कान्तिमति मन्दं मन्दमपनय बाष्पबिन्दून्, यूथिकालङ्कृते यूथिके सञ्चारय नलिनीदलार्द्रवातान्, एहि भगवति निद्रे अनुगृहाण माम्, धिगिन्द्रियैरपरैः, किमिति लोचनमयानि ममाङ्गानि विधिना न कृतानि, भगवन्कुसुमायुध तवायमञ्जलिर[5]नुचरो भव भाववति ता[6]दृशे जने, [[7]मलयानिल] सुरतोत्कण्ठदीक्षागुरो वह यथे[8]च्छमिति बहुविधं भाषमाणा वासवदत्ता सखीजनेन समं [9]मुमूर्च्छ ।

---

१ H शून्यकरणग्रामे हृदये लिखितमिव । K has different line मदनदावाग्निशिखाकवलितेव वसन्तकालाग्निगृहीतेव दक्षिणमारुतरुद्रपावकग्रस्तेव उन्मादपातालगृहं प्रविष्टेव शून्यकरणग्रामेव वर्तमाना ।

२ K, G सिञ्चाङ्गानि चन्दनवारिणा ।

३ H, K, G तरङ्गवती ।

४ A, B वामे मदनमालिनि वीजय शैवलदलेन । H, K, G वामे मदनमालिनि कलय घलयं शैवालकलापेन ।

५ K, G अनुवशो ।

६ K, G मादृशे ।

७ P omits मलयानिल । H मलयानिल सुरतसमुत्कण्ठादीक्षागुरो ।

८ A, B, H, K, G add अपगता मम प्राणाः after यथेच्छं ।

९ K, G संमुमूर्च्छ ।

§ २६) अनन्तरं परिजनप्रयत्नोच्छ्वसितजीविता च, क्षणमतिशिशिरघनसाररजोनिम्नगाकूलपुलिने, क्षणमतितुहिनजडमलयरजसः सरित्परिसरे, क्षणमरविन्दकाननपरिवारितसरस्तटविटपच्छायासु, क्षणमनिलोल्लासितदलेषु कदलीकाननेषु, क्षणं कुसुमशय्यासु, क्षणं नलिनीदलस्रस्तरेषु, क्षणं तुषारसङ्घातशिशिरितशिलातलेषु परिजनेन नीयमाना, प्रलयकालोदितद्वादशारविकिरणकलापतीव्रविरहाग्निदह्यमाना सती, अतिकृशां विप्राणामिव तनुं बिभ्रती, प्रचलदमन्दमन्दरान्दोलितदुःखसिन्धुतरलतरतरङ्गच्छटाधवलहासच्छुरिताधरपल्लवं तन्मुखारविन्दं, द्विजकुलमिव श्रुतिप्रणयि तदीक्षणयुगलं, सहजसुरभिमुखपरिमलामोदमाघ्रातुकामा सुदूरनिर्गतनासावंशलक्ष्मीः, कलङ्कमुक्तेन्दुकलाकोमला, पीयूषफेनपटलपाण्डुरास्यद्विजपङ्क्तिः, तददृष्टचरमनङ्गमतिशयानं रूपं, धन्यानि तानि [स्थानानि] ते च जनपदाः, पुण्यनामाक्षराणि च तानि सुकृतभाञ्जि यान्यमुना परिष्कृतानीति मुहुर्मुहुः परिभावयन्ती, दिक्षु विलिखितमिव, नभस्युत्कीर्णमिव, लोचने प्रतिबिम्बितमिव, चित्रपटलिखितमिव, पुरो दर्शितमिवेतस्ततो विलोकयन्ती व्यतिष्ठत ।

§ २७) अथ तस्याः सारिका तमालिका नाम तत्सखीभिः सहालोच्य कन्दर्पकेतोर्भावमाकलयितुं [प्र] स्थिता । आगता च मयैव सार्द्धमत्रैव तरोरधस्तिष्ठतीत्युक्त्वा विरराम ।

§ २८) अथ सहर्षमुत्थाय मकरन्दो विदितवृत्तान्तां तमालिकामकरोत् । सा च कृतप्रणामा कन्दर्पकेतवे पत्रिकामुपानयत । अथ स तां स्वयमवाचयत ।

---

१ H ०घनसाररसनिम्नगा । K, G ०घनसाररसाकुलनिम्नगा ।

२ A, B, H ०मलयजरससरित्परिसरे । K, G ०मलयजरससारसरित्परिसरे ।

३ K कुसुमप्रवालशय्यासु ।

४ Also Hd. but A, B omit it.

५ K ०माघ्रातुकामेव सुदूरविनिर्गिता तत्रा (A सा नासा) सावंशलक्ष्मीः ।

६ A, H प्रस्थिता । B प्रस्थापिता । K प्रेषिता ।

७ Hd सहर्षमुखोऽयम् । K सहर्षं समुत्थाय ।

८ K, G अथ मकरन्दस्तामादाय पत्रिकां विस्रस्य स्वयमेवावाचयत् ।

प्रत्यक्षदृष्टभावाप्यस्थिरहृदया हि कामिनी भवति ।
स्वप्नानुभूतभावा द्रढयति न प्रत्ययं युवतिः ॥ १९ ॥

§ २९) तच्छ्रुत्वा कन्दर्पकेतुरमृतार्णवमग्नमिव सर्वानन्दानामुपरि वर्तमानो[1] मन्दं मन्दमुत्थाय प्रसारितबाहुयुगलस्तामालिलिङ्ग[2] । अथ तयैव सार्धं समासीनः किं वदति किं करोति कथमास्त इत्यादि सकलं वृत्तान्तं पृच्छंस्तां[3] निशां दिनमप्यतिवाह्य चचाल कन्दर्पकेतुः । अत्रान्तरे भगवानपि मरीचिमाली एनं वृत्तान्तमिव कथयितुं मध्यमं लोकमवातरत्[4] ।

§ ३०) अथ वासरताम्रचूडचक्राकारः चक्रवाकचक्रसङ्क्रमितसन्तापतयेव मन्दिमानमुद्वहन्मन्दारस्तबकसुन्दरः, सिन्दूराहतसुरगजकुम्भविभ्रमं बिभ्राणः, ताण्डवचण्डवेगोच्छलितधूर्जटिजटाजूटकूटबन्धबन्धुरविकटवासुकिभोगमणिताटङ्कसङ्काशनाभिमण्डलः, सन्ध्यासन्धिनीसरसयावकपटचारुः, वारुणिवारविलासिनीमणिकुन्तलकान्तिः, दिनकरच्छिन्नवासरकबन्धचक्राकारः,[5] मधुपूर्णकपाल इव कालकपालिनः,[6] अम्लानकुसुमस्तबक इव श्रियः, गगनाशोकतरुस्तबकः [इव], कनकदर्पण इव प्रतीचीविलासिन्याः, बलभद्र[7] इव वारुणीसङ्गतः सरागश्च, दुर्विध इव परित्यक्तवसुः सविषादश्च, शाक्य इव रक्तांशुकधरः, संज्ञोपेतः[8] भगवान् चरमार्णवपयसि[9] तरलतरङ्गवेगोच्छलितविद्रुमविकटाकृतिर्ममज्ज ।

§ ३१) क्रमेण च रजोलुठितोत्थितकुलायार्थिकलहविकलकलविङ्ककुलकलकलवाचालितशिखरेषु शिखरिषु, वसतिसाकाङ्क्षेषु ध्वाङ्क्षेषु,

---

१ K, G ०वर्तमानमिवात्मानं मन्यमानो ।
२ H, K, G ०बाहुयुगलस्तमालिकामालिलिङ्ग ।
३ K, G तं च दिवसं तत्रैवातिवाह्य तस्मात्प्रदेशात्तया सहोच्चचाल ससुहृत्कन्दर्पकेतुः ।
४ K, G ०मवततार ।
५ H, K, G कालकरवालकृत्तत्रासरमहिषस्कन्धचक्राकारः ।
६ K, G गगनकपालिनो । P कालकपालिनोऽमलं अम्लान० ।
७ A, B, H omit बलभद्र ... ... संज्ञोपेतः ।
८ K, G सूरिरिव संज्ञोपेतः ।
९ K, G अपराकूपारपयसि ।

अनवरतदह्यमानकालागुरुधूपपरिमलोद्गारेषु वासागारेषु, दूर्वान्वित-तटिनीबद्धगोष्ठीकविदग्धजनप्रस्तूयमानकथाश्रवणोत्सुकशिशुजनकल-कलनिवारणकुपितश्रद्धेषु वृद्धेषु,[1] आलोलिकातरलरसनाभिः कथितकथाभिर्जरतीभिरतिलघुकरताडनजनितसुखे[2], शिशयिषमाण-शिशुजने, विरचितकन्दर्पमुद्रासु क्षुद्रासु, कामुकजनानुबध्य-मानदासीजनविविधाश्लीलवचनश्रुतिविरसीकृतसन्ध्यावन्दनोपविष्टेषु शिष्टेषु, रोमन्थमन्थरकुरङ्गकुटुम्बकाध्यास्यमानप्रदिष्ठगौष्ठीन-पृष्ठास्वरण्यस्थलीषु, निद्राविनिद्राणद्रोणकुलकलितकुलायेष्वाराम-तरुषु,[3] निर्जिगमिषति जरत्तरुकोटरकुटीरकुटुम्बिनि कौशिककुले, तिमिरतर्जननिर्गतासु दहनप्रविष्टदिनकरकिरणासु इव स्फुरन्तीषु दीपलेखासु, मुखरितधनुषि वर्षति शरनिकरमनवरतमशेषसंसार-शेमुषीमुषि मकरध्वजे, सुरतारम्भाकल्पशोभिनि, शम्भलीभाषित-भाजि भजति भूषां भुजिष्यजने, सैरन्ध्रीबध्यमानर[4]शनाजालजल्पाक-जघनासु जनीषु, विश्रान्तकथानुबन्धतया प्रवर्तमानकथकजनगृह-गमनत्वरेषु चत्वरेषु, [5]समावासितकुक्कुटेषु निष्कुटेषु, कृतयष्टिसमा-रोहणेषु बर्हिणेषु, विहितसन्ध्यासमयव्यवस्थितेषु गृहस्थेषु, सङ्को-चोदञ्चदुचकेसरकोटिसङ्कटकुशेशयकोशकोटरकुठीरशायिनि षट्-चरणचक्रे,अथानेन प्रवर्तता [वर्त्मना] भगवता भानुना [आ] गन्त-व्यमिति सर्वपट्टमयैर्वसनैरिव मणिकुट्टिमाभिर्विरचितवरुणेन, भगवता कालेन कृत्तस्य दिवसमहिषस्य रुधिधारेव, विद्रुमलतेवाम्बरम[6]हार्ण-वस्य, रक्तकमलिनीव गगनतडाकस्य, [7]काञ्चनसेतुरिव कन्दर्पस्य, मञ्जिष्ठारागारुणपताकेव गगनहर्म्यतलस्य, लक्ष्मीरिव स्वयंवरगृहीत-

---

१ K, G ०निविष्टविदग्धजन ... ... निवारणश्रद्धेषु वृद्धेषु ।

२ K, G ०जनितसुखे ताभिरनुगते ।

३ H निद्रालुद्रोणकुलकलितकुलायेषु काननिकायेषु ।
K, G ०द्रोणकाककुलकलितकुलायेषु ग्रामतरुनिचयेषु ।
H, K, and G add further कापेयविकलकपिकु(लेष्वाश्रमतरुषु H) लकलिलेष्वारामतरुषु ।

४ H, K, G ०रशनाकलापजल्पाकजघनस्थला (स्थली—H)सु ।

५ K समासादितकुक्कुटेषु किरातगृहनिष्कुटेषु ।

६ K, G चरमार्णवस्य ।

७ P, G काञ्चनसेतुरिव । H काञ्चनसेतुरिव कन्दर्पगमनस्य ।
K, G काञ्चनकेतुरिव कन्दर्परथस्य ।

पीताम्बरस्य, भिक्षुकीव तारानुरागरक्ता, [2]रक्ताम्बरधारिणीव भगवती सन्ध्या समदृश्यत ।

§३२) क्षणेन च क्षणदारागरचनाचतुरासु सन्ध्याशिष्यास्विव वेश्यासु तुलाधारशून्यायां पण्यवीथ्यामिव दिवि, [3]घनघनायमान-दलपुटासु पुटकिनीषु, तिमिरप्रतिहस्तेष्विव तत इतः परिभ्रमत्सु कमलसरसि मधुकरेषु, विकलकुररी[4]रुतच्छलेन रविविरहविधुरासु विलपन्तीष्विव सरोजिनीषु, [5]कमलिनीसन्ध्यारागरज्यमानसलिल-स्थितासु पतिविनाशहृत्पीडया दहनप्रविष्टास्विव कमलिनीषु, गणक इव नक्षत्रसूचके प्रदोषसमये, हरकण्ठकाण्डकालिमसनाभि, दैत्यबल-मिव प्रकटतारकं, भारतसमरमिव [6]वर्धमानोलूककलकलं, धृष्टद्युम्न-वीर्यमिव कुण्ठितद्रोणप्रभावं, नन्दनवनमिव संचरत्कौशिकं, [7]कृष्ण-वर्त्मेवाखिलकाष्ठापहारकं, सगर्भमिव घनतरपाषाणकर्कशासु गिरि-तटीषु, सचक्षुरिव [8]सुप्तसिंहनयनच्छविच्छटाकपिलिकेषु सानुषु, सजीवमिव तमोमणिभिः, संवर्धितमिवाग्निहोत्रधूमलेखाभिर्मांसलि-तमिव कामिनीकेशपाशसं[9]स्कारधूपपटलैः, उद्दीपितमिव घनतर-लीनमधुकरपटलमेचकितपेचकिकपोलतलदानधाराशीकरैः, पुञ्जीकृत-मिव विततमालतमालकाननच्छायासु, लीयमानमिव कज्जलरसश्याम-भोगिभोगेषु,प्रावरणमिव रजनीपांसुलायाः, पलितौषधमिव वृद्धवार-योषिताम्, अपत्यमिव रजन्याः, सुहृदिव कलिकालस्य, मित्रमिव दुर्जन-हृदयानां, बौद्धसिद्धान्तमिव प्रत्यक्षद्रव्यमपह्नुवानं तिमिरमजृम्भत।

---

१ B ०स्वयंवरगृहीतपीताम्बरा । H, K स्वयंवरपरिगृहीतपीताम्बरा ।

२ After रक्ताम्बरधारिणीव, Hd K, and G add वारमुख्येव पल्लवानुरक्ता कामिनीव कालेयाताम्रपयोधरा वभ्रूरिव कपिलतारका ।

३ A, B, H, K, G घनघटमान० ।

४ K ०कूजित० ।

५ A, B, H omit कमलिनीसन्ध्याराग ... ... कमलिनीषु ।
K प्रतिफलितसन्ध्याराग० ।

६ K वर्धमानोलूकशकुनिकलकलम् ।

७ K, G कृष्णवर्मज्वलनमिव ।

८ H सुप्तसिंहनयनदीधितिच्छटाकपिलेषु । K, G सुप्तप्रबुद्धसिंहनयनच्छविच्छटाकपिलेषु ।

९ A in adscript कारक after संस्कार and H ०संस्कारागुरुधूमपटलै० ।
K, G ०धूपपटलै० ।

§ ३३) मुदितमिवातिमत्तमातङ्गमण्डलमनोहरगण्डमण्डले, फलितमिवातिसान्द्रबहलच्छदवितततमालकानने[1], स्फुरितमिवातिकान्तकान्ताजनघनतरकेशसंहतौ, मीलितमिवेन्द्रनीलमणिरश्मिभिः[2], अतिशयमांसलं तमोऽवटतटाटवीषु, साटोपमतिस्फुटपाटवोत्कटप्रकटविशङ्कटैकविटपोत्कटविनटितषट्पदालिषु, घनतरघोरं, अतिघस्मरविषधरभोगभासुरं, मदभरमत्तदन्तिदन्तद्युतितर्जनजर्जरम्[3]। ततो निशाकरारम्भसमय इव संकुचत्कुवलयव्याजविरचिताञ्जलिपुटे नमति[4] तमितिमिरे, क्षणेन च सन्ध्याताण्डवडम्बरोच्छलितमहानटजटाजूटकूटकुटिलविवरवर्तिजह्नुकन्यावारिधाराविन्दव इव विकीर्णाः, दुर्धरधरणिभारभुग्नभीमदिङ्मातङ्गमण्डलामुक्तशीकरच्छटा इवातितताः, अतिदवीयोनभस्तलभ्रमणखिन्नदिनकरतुरगविसरवान्तफेनस्तवका इव[5] [विस्तीर्णाः], गगनमहासरःकुमुदकाननसन्देहदायिनः, विश्वं गणयतो विधातुः शशिकमठिनीखण्डेन[6] तमोमषीश्यामेऽजिन इव वियति संसारस्यातिशून्यत्वाच्छून्यविन्दव इव वितताः[7], जगत्त्रयविजयनिर्गतस्य कुसुमकेतो रतिकरतलविकीर्णलाजा[8] इव, गुलिकास्त्रगुलिका इव पुष्पधनुषः, वियदम्बुराशिफेनस्तबका इव[9], रतिविरचिता गगनाङ्गणे आतर्पणपञ्चाङ्गुलय इव, व्योमलक्ष्मीहारमुक्तानिकरा इव, चन्द्रचिताचक्राद्वात्यावेगव्यस्ताः[10] कामकीकसखण्डा इव, तिमिरोद्गमधूमधूमलसन्ध्या-

१ B, H, K, G कानने ।

२ H मिलितमिवे० । K, G उन्मीलितमिवे० ।

३ K, G ०द्युतितर्जनजर्जरितं दिवाकरोदयारम्भणमिव संकुचत्कुवलयं असतां महत्त्वमिव तिरस्कृतसकलान्तरं निमीलन्नीलोत्पलव्याजरचिताञ्जलिपुटेन नमदिवागतं निशापतिं तिमिरमनायत । अथ क्षणेनेव सन्ध्याताण्डव० ।

४ A नमति तनीयसि तिमिरे । B ताम्यति तमीतिमिरे । H नतिमति तमोतिमिरे । Ha, Hb नमति नातितनीयसि तमोतिमिरे । Hg अवनमति तमोतिमिरे ।

५ K, G ०तुरङ्गमास्यविवरवान्तफेनस्तवका इव विस्तीर्णाः ।

६ H, K, G शशिकठिनीखण्डेन ।

७ K, G विलिखिताः ।

८ K, G रतिकरविकीर्णा इव लाजाञ्जलयः । A ०विकीर्णा लाजजाला इव ।

९ A इव विकीर्णाः । K, G इव वितताः ।

१० Ha, Hd, Hg, K, G हरकोपानलदग्धकामचिताचक्रादिन्दोर्वात्यावेशविप्रकीर्णाः ।

मलाहितगगनमहास्थलीमहाकटाहभृज्ज्यमानस्फुटितलाजानुकारास्तारा व्यराजन्त । ताभिश्च श्वित्रीव वियदशोभत ।

§ ३४) ततो दीर्घोच्छ्वासरचनाकुशलं सश्लेषबहुघटनापटु सत्कविविरचनमिव, चक्रवाकमिथुनमतीवाखिद्यत । कमलिनीसञ्चरणलग्नमकरन्दबिन्दुलंबमधुकरमालाशबलगात्रं, कालपाशेनेव मूर्तरामशापेनाकृष्यमाणं चक्रवाकमिथुनं विजघटे । रविविरहविधुरायाः कमलिन्या हृदयमिव द्विधा पपाट चक्रवाकमिथुनम् । आगमिष्यतो हिमकरदयितस्य पार्श्वे संचरन्ती कुमुदिन्या भ्रमरमाला दूतीवालक्ष्यत । तारकाव्याजादस्तङ्गतस्य दिवाकरस्य शोकादिव ककुभो व्यरुदन् । भास्वतो निजदयितस्य विरहादभिनवकिञ्जल्कराशिव्याजेन मुर्मुर इव नलिनीकोशहृदये जज्वाल । रविरश्मिभस्मितनभोवनमषीराशिरिव, श्रुतिवचनमिव क्षतदिगम्बरदर्शनं, कृष्णरूपमपि तिरस्कृतविश्वरूपभावं, सद्योद्रावितराजतपट्टसमुद्रप्रवाह इव शार्वरमन्धकारमजृम्भत ।

§ ३५) क्षणेन च क्षणदाराजकन्याकन्दुक इव, कन्दर्पकनकदर्पण इव, उदयगिरिबालमन्दारस्तबकाकृतिः, प्राचीललाटकुसुमचक्राकारः, कुण्डलमिव नभश्रियः, दिव्यवधूप्रसाधिकाहस्तस्रस्तालक्तपट इव, गगनसौधकनककुम्भ इव, प्रस्थानकलश इव त्रिभुवनविजयनिर्गतस्य मकरकेतोः, कन्दर्पकार्तस्वरतूणमुखचक्रकान्तितस्करः, प्राक्शैलशिखराग्रप्ररूढजवातरुकुसुमच्छविः, अच्छकुङ्कुमपिण्डपूर्णस्थित [पात्र] इव निशाविलासिन्याः कुङ्कुमारुणश्वेत [स्तन] कलश इव चाखण्डलाशायाः, उदयारुणमण्डलो रजनीपतिरभ्युदयमाससाद ।

१ Hb, Hc, Hf, Hh as also जगद्धर ०भृज्यमानरविकरधान्यार्धस्फुटितलाजबीजानुकारा ।
२ A, B, H सत्कविवचनमिव । K, G सत्काव्यविरचनमिव ।
३ Hc, Hg, Hh. and K, G बिन्दुसन्दोहलुब्धमुग्धमुखरमधुकर० ।
४ B पिहितदिगम्बरदर्शनम् । H परिहृतदिगम्बरदर्शनम् । K, G क्षपितदिगम्बरदर्शनम् ।
५ K, G प्राचीललनाललामललाटतटघटितबन्धूककुसुमतिलकचक्राकारः ।
६ K, G दिग्वधू० ।
७ K, G शातकुम्भकुम्भ इव गगनसौधतलस्य प्रस्थानमङ्गलकलश इव ।
८ K, G कन्दर्पकार्तस्वरतूणमुखमिव । The words प्राक्शैल......निशाविभासिन्याः are omitted.
९ A, B, H निशाविलासिन्याः ।
१० A कुङ्कुमारुणस्तनभर इवाखण्डलाशायाः । K, G कुङ्कुमारुणैकस्तनकलश इव आखण्डलाशाङ्गनायाः ।

§ ३६) ततः कामिनीहृदयसङ्क्रामित इव चकोराङ्गनानेत्रपुटपाटित[1] इव रक्तकुमुदकोशकीट इव क्षीणतां जगाम क्षणदाकृतो रागः ।

§ ३७) अनन्तरं शर्वरीव्रजाङ्गनानिष्ठ्यूत[2]नवनीतस्वस्तिक इव, कुसुमकेतोर्मुखच्छायामुद्रितं[3] इव, श्वेतातपत्रमिव मकरकेतोः, दन्तपालिचक्र इव वियन्महासेः[4], श्वेतचामर इव मदनमहाराजस्य, बालपुलिनमिव निशायमुनायाः, स्फटिकलिङ्गमिव गगनतापसस्य, अण्डमिव कालोरगस्य, कम्बुरिव नभोमहार्णवस्य[5], चैत्यमिव मदनारिदग्धस्य मकरकेतोः, चिताचक्रमिव कलङ्काङ्गारशबलं सङ्कल्पजन्मनः, गगनगामिपुण्डरीकमिव, अम्बरमहार्णवफेनपुञ्ज इव, पारदपिण्ड इव [कालधातुवादिनः], राजतकलश इव दूर्वाप्रवालशबलः, कन्दर्प[6]रथचक्रचारुः, उदयाचलचूडामणिः, अम्बरमहाप्रासादपारावतः, ऐरावतकुम्भस्थलमिव, भग्नशृङ्गपुराणगोमुण्ड इव, तारकाश्वेतगोधूमशालिनो नभःक्षेत्रस्य, पाण्डुरराजतपात्रमिव सिद्धाङ्गनाहस्तस्रस्तो ग्रहपतिरुज्जगाम । यश्च पुण्डरीकं लोचनमधुकराणां, शयनीयसैकतं चित्तहंसानां, स्फटिकव्यजनं विरहवह्नीनाम्[7] ।

§ ३८) अत्रान्तरेऽभिसारिकासार्थप्रेषितानां प्रियतमान्प्रति दूतीनां द्व्यर्थाः सप्रपञ्चा विकारभङ्गुराः प्रवादा बभूवुः । तथाहि । अवस्त्रीकृतमात्मानं नाकलयसि तत्त्वतः[8] । प्रस्तर इव क्रूरोऽसि । न चाकर्षकचुम्बक-

---

१ K, G चक्राङ्गनानयनयुगलपीत इव रक्तकुमुदकोशालीढ इव ।

२ H, K, G ०विष्कृतनूतन० ।

३ H ०मुद्रितमुकुर इव । K, G ०मुद्रित इव मुकुरः ।

४ K ०महासेः ।

५ K, adds स्फाटिककमण्डलुरिव नभोव्रतिनः ।

६ H कन्दर्परथचक्रचारुः अम्बरप्रासादस्य ।

K, G पुण्डरीकमिव गगनगामिगङ्गायाः, फेनसञ्चय इव गगनमहार्णवस्य, पारदपिण्ड इव कालधातुवादिनः, राजतकलश इव दूर्वाप्रवालशबलो मनोभवाभिषेकस्य, श्वेतचक्रमिव कन्दर्परथस्य, चूडामणिरिव उदयगिरिनागराजस्य, श्वेतपारावत इव अम्बरमहाप्रासादस्य, गगनसरिद्धौतसिन्दूरं कुम्भस्थलमिवैरावतस्य, भुग्नशृङ्गपुराणगोमुण्डखण्ड इव ताराश्वेतगोधूमशालिनो नभःक्षेत्रस्य, मलयपिण्डपाण्डुरराजततालवृन्तमिव सिद्धाङ्गनाहस्तविस्रस्तं ।

७ K adds "श्वेतशाणचक्रं मन्मथसायकानाम् ।" after विरहवह्नीनां ।

८ H तत्त्वतः । कान्त । K तत्त्वतः कान्त ।

द्रावकेष्वेकोऽप्यसि, भ्रामकोऽसि परं कितव। धर्मार्थान्यप्रयुक्तः क्षेपणिक इव मुधा वाहिततरवारिस्त्वमसि। सखेदमिव मनसा चिन्तयसि दुर्लभाम्। सत्त्वसारचरितो रिपुमण्डलाग्रतो निर्वृतिमुपेत्य तिष्ठति। स खलु वीरः प्रतिपक्षस्य यः सम्प्रहारतः कुञ्जरान्नयति। धृतोरुकरवालसञ्चयोऽपि परमकाण्ड एव पतन्महापदं विग्रहेण लभते। राजसेन रहितो राजसे न रहितो ध्रुवम्। विशारदा विशारदाभ्रविशदा विशदात्मनीनमहिमानमहिमानरक्षणक्षमा क्षमातिलक ते वीरता वीरता मनसि भूतता भूतता वचसि। साहसेन सा हंसेन कमला कमलालया जिता, सा त्वद्दर्पणा दर्पणाकारविमलाशया शयाब्जनिर्जितकिसलया सलयाङ्गुलिरिव विभ्रमेण विभ्रमेण गवाक्षशलाकाविवरं प्रति विलोकयन्ती विलोकयन्ती विनाशापमनुभवति दुःखानि। जीवनायक जीवनाय क इह नाश्रयति सुभगम्। अन्यास्तावदासतां दासतां पुरतोऽहमेव भजामि, मैत्र्यतो मैत्र्यतोऽस्तु। अञ्जसारतः सारतः किमपि कन्दर्पकं दर्पकं न तनोषि विशेषतोऽशेषतः स्थितमेव मरणम्। शठधियां शोधन यशोधन प्रेमहार्यामहार्या समोत्कटाक्षैः कटाक्षैराविर्भूतदास्यास्तदास्याः परिजनाः। कमलाकृतिनारीणां कमलाकृतिनारीणां भवता मुखं मलिनितम्। विश्वस्य विश्वस्य व्यवस्थां समासाद्य समासाद्यमनेककालं सङ्गीतसङ्गी तनुषेऽतनुषेकमनङ्गपुष्पेषु पुष्पेषुरुजा तरसा जातरसा मन्दाक्षमन्दा क्षणं भ्रमन्ती मुह्यति। कामधुराधरेण का मधुराधरेण युक्ता रजोराजिविशेषकेण सविशेषकेण मुखेन्दुना तव हृदि लग्ना म्रदिमाकरेण करेण स्वेदबिन्दुपयोधरेण पयोधरेण वक्षः-

---

१ P क्षपणक। T, H. K, G क्षेपणिक इव।

२ K, G सत्त्वसारचित्तो यो।

३ H धीरताधीरता। K धीरता धीरता।

४ H ०साहसेनकमला कमलापराजितापराजिता।

५ A विलोकयन्ती लोकयन्त्रितविनाशा विनाशापमनुभवन्ती। H विभ्रमेण प्रतिगवाक्षशलाकाविवरं विलोकयन्ती विलोकयन्ती त्वया विना साविना सायमनुभवन्ती दुःखानि।
K ०लोकयन्त्रितविनाशा। and explains लोकेन सखीजनेन यन्त्रितः प्रतिषिद्धः विनाशः प्राणत्यागः यस्याः सा तादृशी।

६ P विशेषतः शेषतः। K ऽविशेषतः।

७ H प्रेमहार्या महार्याशयोत्कटाक्षैः।; Ha, Hb प्रेमहार्यामहार्यासमोत्कटाक्षैः। B, Hc, Hd, Hf, Hh प्रेमहार्या[illegible]समासमोत्कटाक्षैः। प्रेमहार्यामहार्या समासोत्कटाक्षैः।

फलकाञ्चनेन जितानाविलकाञ्चनेन। कामदारुण मदारुणनेत्रा स्मरभयं रमयन्तं त्वामदयं मदयन्ती परमकमितारं वाञ्छति हारिणा हारिणा स्तनकुम्भेन हारिणाक्षिरुचिहारिणा चक्षुषा हारिणा। अनन्तरं दुग्धार्णवप्रविष्टमिव, स्फटिकगृहप्रविष्टमिव श्वेतद्वीपनिवाससुखमनुभवदिव जगदामुमुदे।

§ ३९) क्रमेण च विघटमानदलपुटकुमुदकाननकोशमकरन्दबिन्दुसन्दोहदोहदमधुकरकुलकलरुतमुखरितदिगन्ते, चन्द्रिकापानभरालसचकोरकामिनीभिरभिनन्दितागमने, सुरतभरखिन्नपुलिन्दसुन्दरीस्वेदजलकणिकापहारिणि प्रतिवाति सायन्तने तनीयसि निशानिःश्वासनिभे नभस्वति कन्दर्पकेतुस्तमालिकामकरन्दसहायो वासवदत्ताजनकनगरीमयासीत्।

§ ४०) अनन्तरं कटकैकदेशविरचितैकान्तनिहितमुक्तामकरन्दपद्मरागशकलेन वासवदत्तादर्शनार्थमास्थितेन देवतागणेनेव जातवलयेन परिगतम्, अनिलोल्लासिताभिर्नभस्तरुमञ्जरीभिरिव तर्जयन्तीभिरिव गगनपुरश्रियं पताकाभिरुपशोभमानं, पट्टाङ्कणप्रसृताभिः कर्पूरचन्दनकुङ्कुमैलागन्धोदकरसपरिमलवाहिनीभिर्वाहिनीभिस्तटस्फटिकपट्टसुखनिषण्णनिद्रायमाणाज्ञातप्रासादपारावतालिभिः प्रभ्रश्यत्तटविटपकुसुमस्तबकितसलिलाभिरनवरतमज्जदुन्मदयुवतिजनजघनास्फालनोच्छ्वसितशीकरनिकरस्नपितवेदिकाभिः, कर्पूरपूरविरचितपुलिनतलनिषण्णनिनदानुमीयमानराजहंसीभिः,विकचनीलोत्पलकाननदर्शिताकाण्डचक्रवाकतिमिरशङ्काभिः, युवतीभिरिव सुपयोधराभिः, सुग्रीवयुद्धकलाभिरिव कीलालस्नपितकुम्भकर्णाभिः, सागरकूलभूमिभिरिव

१ K ०सन्दोहसान्द्रनिष्यन्दास्वादमुदितमधुकर० ।

२ K वासवदत्तानगरमयासीत् ।

३ A in adscript and B, H, K ०अभ्रंलिहशिखरेण सुधाधवलेनैकान्तरनिविष्टकनकमुक्तामरकतपद्मरागशकलेन वासवदत्तादर्शनार्थमुच्छ्रितदेवतागणेनेव शालवलयेन विरचितम्। This reading perhaps belongs to the time when the southern recension was attaining an independent existence.
K begins the paragraph अथ स प्रविश्य कटकैकदेशे विनिर्मितम् ।

४ H, K कनकशिलापट्टाङ्कणप्रसृताभिः ।

५ K कर्पूरकुङ्कुमचन्दनैलालवङ्गपरिमल० ।

सुन्दरीपादपरागशबलाभिः, नवनृपतिचित्तवृत्तिभिरिव [1]कुल्यायमानकरिणीभिः, शिखरगतमुक्ताजालव्याजेन युवतिजनदर्शनागतं तारागणमुद्वहद्भिः[2],काचकलशाकृतिमुद्वहन्तीभिः शिखिसंहतिभिरुद्भासितैः प्रासादैरुपशोभितं, [3]कालागरुधूपपटलैर्दर्शिताकालजलदोन्नाहम्, क्वचिद्गम्भीरमुरजरवाहूत[4]मन्दमन्दनर्तितनीलकण्ठं, सा[5]यंसमयमिव निपतितलोकलोचनं, जनकयज्ञस्थानमिव दारोत्सुकितरामं, मानुषमिवाभिनन्दितसुरतं[6], निधानमिव कौतुकस्य, आ[7]वासमिव शृङ्गारस्य, कुलगृहमिव वि[8]भ्रमस्य, सङ्केतस्थानमिव सौन्दर्यस्य, वासवदत्ताभवनं भवनन्दनप्रभावो ददर्श ।

§ ४१) [9]द्रवसि द्रवसिन्धुतो निगलिते चपला चपलायते किमेषा । स्तवकस्तव कर्णतः पतितोऽयम् । [10]सुरेखे सुरया सुरयाचनोचितश्रीस्त्वमसि । [11]मत्ता कलहे कलहेमदामकाञ्चीदामकणितैः स्मरमिवाह्वयसि । मलये [12]मलयेप्सितं दृशैवाधिगतासि । कलिके कलिकेतुमिमां मुखरां मुञ्च मेखलां शृणुवः कलवल्लकीविरुतम् । मेखला मे खला न भवति, त्वमेव त्वमेव मुखरतया मुखरतया च । [13]अपतेऽत्र पतेदियमवन्तिसेनाकुसुमोपहारे मुग्धा तव कैतवकैरलं, [14]लवङ्गिके वेपथुरेवाशयं

---

१ A कुल्यायमानकरिणीभिरनेकाकाराभिरुपेतैः । B ०नेकाकारिभिर्वापीभिरुपशोभितं । H कुल्यायमानकरिणीभिरनेकतराभिरुपशोभितं । K, G कुल्यायमानकरिणीभिरनेकाभिर्नदीभिरुपशोभितं ।

२ A, H, K, and G add उपान्तनिलीनाभिः ।

३ B H, K, G क्वचिदनवरतदह्यमानकृष्णागरुधूमपटलै...जलदसंनाहम् ।

४ B, K. G ०रवाहूतसमदनीलकण्ठम् । H ०रवाहूतसानन्दनर्तितनीलकण्ठम् ।

५ H, K, G सायन्तनसमयमिव ।

६ K, G add अरण्यमिवानेकषालशोभितं ।

७ K, G आस्थानमिव ।

८ K, G सकलविभ्रमाणाम् ।

९ H द्रवसि द्रवसिद्धितो निगलिते । K भद्रे द्रवसि द्रवसिद्धेरगदिता ।

१० K सुकपोलरेखे ।

११ P मत्ता कलहे ।

१२ K, G मलयेप्सितं कुरु दृशैवाधिगतासि ।

१३ K. अपतेऽत्र पतेयर्मिति नागकुसुमोपहारेषु स्खलन्तीयम् ।

१४ P कालङ्गि । K तत्र कैतवकैरलम् । कलिलो निःश्वासैर्वेपथुरेवाशयं व्यनक्ति । वहतीव हतीरनङ्गलेखे तव वपुः स्मरसायकानाम् । तत्र च हारलता पिहितापि हि तायते । उत्कलिके तत्रोत्कलिकाबहुले वदने वद नेत्रपयोजकान्ते किमुपमानमिन्दुरप्यायाति ।

व्यनक्ति। वहतीव हृतीरनङ्गलेखे स्मरसायकानाम् तव वपुरलसम्। पिहिताऽपि हितायते। उत्कलिके तवोत्कलिका महोर्मिः। वदने वद नेत्रपेयकान्तौ किमुपमानमिन्दुरप्युपयाति। वसतीव सतीव्रते तव हृदये कोऽपि। शतधा शतधारसारा वाचस्तवानुभूताः। केरलि करकाकरकालमेघखण्डतुलामयमुल्लसितोत्फुल्लमल्लिकामालभारी[तव याति] कुन्तलकलापः। [1]कुन्तलिके पुरगोपुरगोचराः श्रूयन्ते गीतध्वनयः। किमत्र कल्पयसि क्षणमीक्षणमीलनात्। अपि चटुलं चटुलम्पटं सखीजनमायासयसि। सुरते स्तनता स्तनताडनेषु यत्सौख्यं लब्धं स्मरता स्मरतापनोदनं तदियं तेन वियुक्ता किं मुह्यसि। हतमोहतमो दयितः स्मरति स्म रतिप्रियं तव कौशलम्। नखराणां व्रणः स्मरजन्यां स्म रजन्यां कुरुते रुजं न ते। किं लोचनाभ्यां लोचनाभ्यां प्रीणिताखिलजनेक्षणदेशः क्षणदेशः किं न पीयते। प्रियसखि मदनमालिनि मालिनि बिम्बाधरसङ्गलालसेच्छया विरामं कुरु। मधुमदारुणमालवीकपोलतलसमानोऽ[2]भ्रान्तसमानो रक्तमण्डलतया त्वया को विशेषः। कुरङ्गिके कल्पय कुरङ्गशावकेभ्यः शष्पाङ्कुरम्। किशोरिके कारय किशोरकप्रत्यवेक्षाम्। तरलिके तरलय [3]गुरुसान्द्रधूपपटलम्। कर्पूरिके पाण्डुरय कर्पूरधूलिभिः पयोधरभारम्। मातङ्गिके मानय मातङ्गशिशुयाचनाम्। शशिलेखे लिख ललाटपट्टे शशिलेखाम्। केतकिके सङ्केतय केतकीमण्डपस्य दोहदम्। शकुनिके देहि क्रीडाशकुनिभ्य आहारम्। मदनमञ्जरि [4]मञ्जरय सभामण्डपकदलीगृहम्। शृङ्गारमञ्जरि सङ्कल्पय शृङ्गाररचनाम्। सञ्जीवनिके वितर जीवञ्जीवकमिथुनाय मरिचपल्लवम्। पल्लविके पल्लवय कर्पूरधूलिभिः कृत्रिम[5]केतककाननम्। सहकारमञ्जरि

---

१ K, G कुन्तलिके कुन्तलालङ्कृते न च पुरगोपुरगोचराः श्रूयन्ते संगीतध्वनयः। किमत्र कलयसि...मायासयसि। सुरते सुरते स्तनता स्तनताडनेषु यत्सौख्यं...नोदनं तत्केन वियुक्तासि। किं मुह्यसि महतो महतो दयितः स्मरति स्म रतिप्रियं...कौशलम्। नवनिशानखराणां नखराणां व्रणः...कुरुते न रुजम्। तव...प्रीणिताखिल...।

२ B, K मधुमदारुण...कपोलकोमललोलदलमण्डलतया लतया को विशेषस्तव।
H मधुमदारुणमालवीकपोलतलसमानो लसमानो।

३ A, H, K G कृष्णागुरुधूपपटलम्।

४ K मञ्जीरय लतामण्डपम्। कदलिके विदलय कदलीगृहम्।

५ H, K, G केतकीकाननम्।

संञ्जनय सहकारसौरभं व्यजनवातेषु। मदनलेखे लेखय मदनलेखं मलयानिलस्य। मकरिके देहि मृणालाङ्कुरं राजहंसशावकेभ्यः। विलासवति विलासय मयूरकिशोरकम्। तमालिके [परि]मलय मलयजरसेन भवनवाटम्। काञ्चनिके विकिर कस्तूरिद्रवं काञ्चनमण्डपिकायाम्। प्रवालिके सेचय घुसृणरसेन बालप्रवालकाननम् इत्यन्योन्यप्रणयपेशलाः प्रमदानामालापकथाः शृण्वन् कन्दर्पकेतुर्मकरन्देन समं विस्मयमकरोन्मनसि "अहो भवनानामतिशायि सौन्दर्यम्। अहो शृङ्गाररचनाकौशलम्। तथाहि तत्काललीलादलितमालवीदशनकान्तिकोमलकान्तदन्तघटितो मण्डपः। असावपि कर्पूरशलाकानिर्मितयन्त्रपञ्जरसंयतः क्रीडाशुक इत्यादि परिचिन्तयन् प्रविश्य व्याकरणेनेव सरक्तपादेन, भारतेन सुपर्वणा, रामायणेनेव सुन्दरकाण्डचारुणा जङ्घायुगलेन विराजमानां, छन्दोविचितेरिव भ्राजमानतनुमध्यां, नक्षत्रविद्यामिव गगनीयहस्तश्रवणां, न्यायस्थितिमिवोद्योतकरस्वरूपां, बौद्धसङ्गीतिमिवालङ्कारप्रसाधितां, उपनिषदमिव सानन्दात्मकमुद्योतयन्तीं, द्विजकुलस्थितिमिव चारुचरणां, विन्ध्यगिरिश्रियमिव सुनितम्बां, तारामिव गुरुकलत्रोपशोभितां, शतकोटिमूर्तिमिव मुष्टिग्राह्यमध्यां, प्रियङ्गुश्यामासखीमिव प्रियदर्शनां, ब्रह्मदत्तमहिषीमिव सोमप्रभां, दिग्गजकरेणुकामिवानुपमां, वेलामिव तमालपत्रसाधितां, अश्वतरकन्यामिव मदालसां वासवदत्तां ददर्श।

§४२) अथ प्रीतिविस्फारितेन चक्षुषा पिबतः कन्दर्पकेतोर्जहार चेतनां

१ K संमार्जय श्रमोदकबिन्दून्सहकारसौरभव्यजनवातेन।

२ A, B, H परिमलय। K लेपय।

३ K, G अहोभुवनातिशायि सौन्दर्यम्। अहो शृङ्गारकलाकेलिकौशलम्।

४ K, G omit तथाहि तत्काल...मण्डपः।

५ K महाभारतेनेव।

६ H K, छन्दोविचितिमिव।

७ K न्यायविद्यामिव।

८ P बौद्धस्थिति०। H बौद्धसङ्गतिमिवालङ्कारभूषिताम्। K, G have न्यायविद्यामिवोद्यतकरस्वरूपां, सत्कविकाव्यरचनामिवालङ्कारप्रसाधिताम्।

९ K उपनिषदमिव सदानन्दां, रविप्रभामिव लोकमुद्योतयन्ती०।

१० H शतकोटमिव। K शतकोटियष्टिमिव।

११ K, G ०पमां, रेवामिव नर्मदाम्।

मूर्च्छावेगः । तमपि पश्यन्ती वासवदत्ता मुमूर्च्छ । अथ मकरन्दसखीजनप्रयत्नलब्धसंज्ञौ तौ एकासनमलश्चक्रतुः । ततो वासवदत्तायाः प्राणेभ्योऽपि गरीयसी सर्वविस्रम्भपात्रं कलावती नाम कन्दर्पकेतुमुवाच । आर्यपुत्र नायं विस्रम्भकथानामवसरः । अतो लघुतरमेवाभिधीयते । त्वत्कृते यानया वेदनानुभूता सा यदि नभः पत्रायते सागरो[1] लोलायते ब्रह्मा लिपिकरायते भुजगपतिर्वा[2] कथकः तदा किमपि कथमप्येकैकैर्युगसहस्रैरभिलिख्यते कथ्यते वा । त्वया च राज्यमुज्झितम् । किं बहुनात्मा सङ्कटे[3] समारोपितः । एषास्मत्स्वामिदुहिता प्रभातायां रजन्यां पित्रा यौवनातिक्रमदोषशङ्किना भयेन विद्याधरचक्रवर्तिनो विजयकेतोः पुत्राय पुष्पकेतवे पाणिग्रहणाय दातव्या । अनयाप्यालोचितमद्य यदि तं जनमादाय नागच्छति तमालिका तदावश्यमेव[4] मया हुतवहे शयितव्यमिति । तदस्याः सुकृतवशेन[5] महाभागः इमां भूमिमनुप्राप्तः । अथ कन्दर्पकेतुः भीतभीतः सप्रणयमानन्दामृतसागरोद्दामतरङ्गलहरीभिराप्लुत इव वासवदत्तया सहामन्त्र्य मकरन्दं वार्तान्वेषणाय तत्रैव नगरे नियुज्य भुजगेनेव सदागत्यभिमुखेन[6] मनोजवनाम्ना तुरगेण तया सह नगरान्निरगात्[7] ।

§ ४३) क्रमेण[8] च जाङ्गलकवलाभिलाषमिलितनिःशङ्कशकुनिकुल-[9]

१　H सा यदि नभः पत्रायते सागरो...ब्रह्मायते लिपिकरो भुजगराजायते कथकस्तदा । K भुजगपतिर्वा कथकायते ।

२　K सागरो मेलानन्दायते...र्वा कथकायते ।

३　K आत्मास्याः सङ्कटे ।

४　K अवश्यमेवाश्रयाशः आश्रयितव्यः ।

५　A, B and H read तदत्र यत्सांप्रतं......विरराम K, G सुकृतवशाच्च महाभागः समागतः । तदत्र यत्सांप्रतम् तत्र भवानेव प्रमाणमित्युक्त्वा विरराम ।

६　After सदागत्यभिमुखेन K, G read सरित्पतिनेव शुक्तिशोभितेन विन्ध्यविपिनेनेव श्रीवृक्षलाञ्छितेन, हंसेनेव मानसगतिना अरण्येनेव गण्डशोभितेन वनस्पतिनेव स्कन्धशोभितेन वज्रेणेवेन्द्रायुधेन ।

७　H ०जगाम ।

८　K, G ततः क्रमेण गव्यूतिमात्रमध्वानं गत्वा नरजाङ्गल० ।

९　H, K, G ०कङ्ककुलसङ्कुलेन ।

सङ्कुलेन अर्धदग्धचिताचक्रसिमिसिमायमानविकटकटतृणाचटुलकटपूतनोत्तालवेतालरवभीषणेन, शूलशिखरारोपितशङ्कितवर्णकर्णनासिकाच्छेदरुधिरपटलपतितभाङ्कारिभम्भरालीसम्भारभरितभूमिभागबीभत्सेन, कटाग्निदह्यमानपटुचटन्नृकरोटिटङ्कारभैरवरवेण,[2] शूलपाणिनेव कपालबलिभस्मशिवावह्निभूतिभुजगावरुद्धदेहेन, पुरुषातिशयेनेवानेकमण्डलकृतसेवेन श्मशानवाटेन गत्वा निमेषमात्रादिवानेकशतयोजनं,[3] प्रलयकालवेलामिव समुदितार्कसमूहां, नागराज्यस्थितिमिवानन्तमूलां, सुधर्मामिव स्वच्छन्दस्थितकौशिकां, सत्पुरुषसेवामिव श्रीफलाढ्यां, भारतसमरभूमिमिव दूरप्ररूढार्जुनां, पुलोमकुलस्थितिमिवसहस्रनेत्रोचितेन्द्राणिकां, [4]शूरपालचित्तवृत्तिमिव [5]कलितगणिकारिकां, सज्जनसम्पदमिव विकसिताशोकसरलपुन्नागां, शिशुजनलीलामिव कृतधात्रीधृतिं, क्वचिद्राघवचित्तवृत्तिमिव वैदेहीमयीं, क्वचित्क्षीरसमुद्रमथनवेलामिवोज्जृम्भमाणामृतां, क्वचिन्नारायणशक्तिमिव स्वच्छन्दापराजितां, क्वचिद्वाल्मीकिसरस्वतीमिव दर्शितेक्ष्वाकुवंशां, लङ्कामिव बहुपलाशशोभितां, [6]धार्तराष्ट्रसेनामिवार्जुनशरनिकरपरिवारितां, नारायणमूर्तिमिव बहुरूपां, सुग्रीवसेनामिव पनसचन्दननलकुमुदसेवितां, क्वचिद् विधवामिव सिन्दूरतिलकभूषितां प्रवालाभरणां च, क्वचित्कुरुसेनामिवोलूकद्रोणशकुनिसनाथां धार्तराष्ट्रान्वितां च, अम्लानजातिविभूषितामपि [7]विरुद्धवंशां, दर्शिताभयामपि भीषणां, सततहित-

१ K ०रुधिरपटलपतनटङ्कारिकरकोटिकर्परकरालकौणपनृत्ततुमुलेन । भम्भरालीकेलिसंभारभरितभूमिभागवीभत्सेन ।

२ Hd K, G, add after भैरवरवेण, " विवृतोल्कामुखीमुखोज्ज्वलज्ज्वलनज्वालाजटिलेन, आन्त्रतन्तुप्रोतकपालकलितकुचप्रालम्बडामरडाकिनीगणकृतकुणपविभागकोलाहलेन, आर्द्रसिरारचितविवाहमङ्गलप्रतिसरपिशाचमिथुनप्रदक्षिणीक्रियमाणचितानलेन । [मण्डलकृतसेवेन] दण्डकारण्येनेव कबन्धाधिष्ठितेन चक्रवर्तिनेव अनेकनरेन्द्रपरिवृतेन ।

३ K शतयोजनमध्वानं गत्वा पुनरपि ।

४ H शूलपालचित्तवृत्ति० ।

५ K दर्शितगणिकारिकाम् । H फलितगणिकारिकाम् ।

६ H कुरुसेनामिव ।

७ विरुद्धवंशां is accepted by P as also by all the mss. of Hall except Hd., जगद्धर and नरसिंह । Against this Hall accepts अकुलीनवंशाम् । K and G have अकुलीनवंशाम् ।

पथ्यामपि प्रवृद्धगुल्मां, षट्पदव्याप्तामपि द्विपदानाकुलां, द्विजकुल-भूषितामप्यकुलीनवंशां विन्ध्याटवीं विवेश । अत्रान्तरे भगवत्यपि निशा तयोर्निद्रामादाय जगाम ।

§ ४३) क्रमेण कालकैवर्तकेन तमिस्रानायं प्रक्षिप्य गगनमहासरसि सजीवशफरनिकर इवापह्रियमाणे तारागणे, रक्तांशुके विषमप्ररूढ-बिसलताशरयन्त्रानुगतशतपत्रपुस्तकसनाथे मकरन्दबिन्दुसन्दोहनि-र्भरपानमत्तमधुकरमन्द्रमुक्तस्वनैः सद्धर्णमिव पठति विकचे कमलाकरे, भिक्षुकृषीवलेनेव कालेन तिमिरबीजेष्विव मधुकरेषु मधुरसकर्दमित-केसरपङ्केषु घनघटमानदलपुटेषु, रजोमुर्मुरसनाथमधुकरपटलानु-गतोद्दण्डपुण्डरीकव्याजाद्धूपमिव भगवते किरणमालिने प्रयच्छन्त्यां कमलिन्यां, रजनीवधूकरद्वयोच्छलितपतन्मुसलाहतिक्षतान्तर उलूखल इव चन्द्रे, कण्डनविकीर्णेषु तण्डुलेष्विव तारागणेषून्मीलत्सु, सन्ध्या-ताम्रमुखेन वासरवानरेण नभस्तरुमारोहता, शाखाभ्य इव कम्पि-ताभ्यो दिग्भ्यो विकचप्रसूनै इव तारागणे इन्दुमण्डलफले च पतति, तारातण्डुलशबलं नभोऽङ्गणं स्फुरदरुणतरुणचूडाचारुवदने वासरकृक-वाकौ चरितुमवतरति, मत्सङ्गतिप्रसिद्धो वारुणीसमागमाद् द्विजपति-रेष पतिष्यतीति हसन्त्यामिवाखण्डलककुभि, करघातनिहतान्धकार-

१ B षट्पदव्याकुलामपि द्विपदाकुलां ।

२ Hall reads अनन्तरं तयोर्निद्रामादाय जगाम रजनी । before the words क्रमेण... K has अत्रान्तरे तयोर्निद्रामादाय निशा जगाम । at the end of the previous paragraph.

३ H, K, G स्वधर्ममित्र पठति विकचकमलाकरभिक्षौ कृषीवलेनेव कालेन तिमिरबीजनिकरेष्विव मधुकरेषु मधुरसकर्दमितपरागपङ्केषु घनघटमानदलपुटेषु । K, G ०कुमुदाकरक्षेत्रेषूप्यमानेषु । but H घनघट्टमानदलेषु भ्रमरेषु व्याजात्पङ्कजेषूप्यमानेषु ।

४ K, G कमलिनीतापस्यां ।

५ H, K, G ०पतत्प्रभातमुसलाहति० । but A ०करद्वयाकुलितपतदंशुकसंहति० ।

६ K, G विकचप्रसूननिकरे इव ।

७ H चन्द्रमण्डलफले च । K, G ०फले इवेन्दुमण्डले च ।

८ H, K, G तारागणशालितण्डुलशबलं ।

९ K, G मत्सङ्गमादतिप्रवृद्धो वारुणीसङ्गमात् । H मत्सङ्गतिप्रवृद्धो ।

१० K आखण्डलाशायाम् ।

११ H, K, G अरुणकेसरिकराघातनिहता० ।

करीन्द्ररुधिरधाराभिरिवोदयगिरिशिखरनिर्झर[1]धौतधातुरागैरिव, त्वङ्गत्तुरङ्गखरखुरपुटपाटितपद्मरागच्छायाभिरिव[2], केसरिकरतलाहतमत्तमातङ्गोत्तमाङ्ग[3]सङ्गलदस्रसारणीभिरिव, त्रिभुवनकार्यसम्पादनप्रभावानुरागरसैरिव रक्तमण्डले, ताराकुमुदवनग्रहणाय प्रसारितहस्त इव [4]कुङ्कुमरागारुणे, प्राचीविलासिन्याः पूर्वाचलभोगीन्द्र[5]फणार्पणे, गगनेन्द्रनीलकनककिसलये, [6]नभोनगरप्राचीकाञ्चनदीनारचक्रकुम्भे, प्रा[7]चीललाटतटकुङ्कुमार्द्रबिन्दौ, [8]सन्ध्याबाललतैककुसुमे, मञ्जिष्ठारुणपट्टसूत्रसदृशे, [9]संन्ध्यारुणगुम्फिते, प्राचीकाञ्चनदीनारचक्र इव वासरविद्याधरसिद्धगुलिके, [10]धातुरागारुणदिग्गजपादतलानुकारिणि विभावरीतिमिरतस्करे भगवति भास्करे समुदयमारोहति, मञ्जिष्ठाचामर इव दिग्गजेषु, महाभारतसमररुधिरोद्गार इव कुरुक्षेत्रेषु, [11]शक्रधनुःकान्तिलेप इव जलदच्छेदेषु, काषायपट इव [12]शाक्याश्रममठिकासु, कौसुम्भराग इव ध्वजपटपल्लवेषु, फलपाक इव कर्कन्धुषु, कुङ्कुमच्छटारस इव व्योमसौधाङ्गणस्य, सश्वरदरुणयवनिकापट इव [13]कालस्य, बालप्रवालभङ्गारुणे प्रसरत्यातपे, क्षणेन च [14]चक्रवाकचक्रवालहृदयशोकसन्तापहरणादिव,

---

१ A, B omit धौत and read धातुधाराभिरिव । H, K, G धौतधातुधाराभिरिव ।

२ K, G उदयाचलकूटकोटिप्ररूढजपाकुसुमकान्तिभिरिव पूर्वगिरिकेसरि० ।

३ K ०विगलदसृग्धारा । but B ०गलदसिधाराभारसरणीभिरिव ।

४ ङ्कुमारुणः किरणैः । कनकदर्पण इव प्राचीविलासिन्याः ।

५ H ०फणोपले । K ०फणामणौ ।

६ H नभोनगरप्राचीरकनककुम्भे । K नभोनगरप्राग्द्वारकनकपूर्णकुम्भे । H, K तप्तलोहकुम्भाकारे ।

७ H प्राचीललाटतटकुसुम्भाम्बुबिन्दौ ।
K प्राचीकुमारीललाटतटघटितकुङ्कुमतिलकबिन्दौ ।

८ H सन्ध्यावनलतैककुसुमे ।

९ H सन्ध्यारागगुणगुम्फिते प्राचीकाञ्चनदीनारचक्र इव ।
K सन्ध्यारुणसूत्रग्रथितप्राचीवधूकाञ्चीकाञ्चनदीनारचक्र इव ।

१० K reads before धातुरागा० — "कुमार इव संहततारके, पद्मनाभ इवोल्लसितपद्मे, अध्वग इव छायाप्रिये शक्र इव गोपतौ उदयगिरिधातुरागारुण० ।

११ H सुरराजशरासनकान्तिलेप इव । K सुरधनुःकान्तिविलेप इव ।

१२ K शाक्याश्रमशाखिशाखासु ।

१३ H, कालनर्तकस्य । K, G कालनटस्य ।

१४ H, K, G चाटुचटुलचक्रवाकहृदय......दहनसमर्पिततेजःप्रवेशादिव ।

दहनसमनुप्रवेशादिव, दिननाथकान्तोपलसङ्क्रमादिव, उत्तिष्ठमानमुष्णमुष्णरश्मेराश्रयति रश्मिसञ्चये कन्दर्पकेतुः सर्वरात्रजागरपरवश आहारशून्यशरीरतया निश्चेतनः, अनेकयोजनशतभ्रमणखिन्नः, वासवदत्तयाप्येवंविधया सह लतागृहे मन्दमारुतान्दोलितकुसुमपरिमललुब्धमुखरपरिभ्रमद्भ्रमरझङ्कारमनोहरे तत्कालसुलभया निद्रया गृहीतो निष्पन्दकरणग्रामः सुष्वाप ।

§४४) ततो वणिजीव प्रसारिताम्बरे महादावानल इव सकलकाष्ठादीपिनि पतङ्गमण्डले मध्यन्दिनमारूढे कन्दर्पकेतुः [1]प्रियया विना लतागृहमवलोक्योत्थाय तत इतो दत्तदृष्टिः क्षणं विटपेषु, क्षणं तरुशिखरेषु, [2]क्षणमन्धकूपेषु, क्षणं शुष्कपत्रराशिषु, क्षणमाकाशे, क्षणं दिक्षु, क्षणं विदिक्षु भ्रमन्ननवरतदह्यमानहृदयो विललाप ।

§४५) हा प्रिये वासवदत्ते देहि मे दर्शनम् । [3]किं परिहासेनान्तर्हितासि । त्वत्कृते मया यानि दुःखान्यनुभूतानि तेषां त्वमेव प्रमाणम् । प्रियसखे मकरन्द पश्य मे दैवदुर्विलसितम् । किं मया न कृतमवदातं कर्म । दुर्विपाका नियतिः । दुरतिक्रमा दुःकालगतिः । अहो ग्रहाणामतिकटु कटाक्षपातनम् । अहो विसदृशफलता गुरुजनाशिषाम् । अहो दुःस्वप्नानां दुर्निमित्तानाञ्च फलितम् । सर्वथा न कश्चिदगोचरो भवितव्यतानाम् । किं न सम्यगागमिता विद्याः । किं यथावन्नाराधिता गुरवः । किं नोपासिता वह्नयः । किं नाभ्यर्चिता देवताः । किमधिक्षिप्ताः भूमिदेवताः । किमप्रदक्षिणीकृताः सुरभयः । किं न कृतः शरणेच्छुरभय इति बहुविधं [4]विलपन्दक्षिणेन काननं निर्गत्य नव्यनलनलदनलिनीनिचुलपिचु[5]लविडुदबहुलेन, प्रचुरचिरिबिल्वबिल्वोटजकुटजरुद्धोपकण्ठेन, सोत्कण्ठभृङ्गराजरसितसुन्दरसुन्दरीवनेन, वितत-

---

१ H प्रियया विनाकृतं लतागृहं । ; also K कल्पवृक्ष इव सर्वाशाप्रसाधके पतङ्गमण्डले मध्यं नभस्थलमारूढे कन्दर्पकेतुः प्रवुद्धः प्रियया विनाकृतं लतागृहं ।

२ B तरुगृहेषु । K क्षणमधःकूपेषु क्षणमूर्द्ध्वं तरुशिखरेषु ।

३ K कृतं परिहासेन । अन्तर्हितासि ।

४ K, G इति बहुविधं विलपन् मरणेच्छुः ।

५ H ०पिचुलविदुलबकुलेन । K ०पिचुलवञ्जुलसरलविदुलबकुलचिरिबिल्वबिल्वबहुलेन । प्रचुरविरचितविविधोटजकुटजरुद्धोपकण्ठेन ।

वेत्रव्रततिव्रातावरणतरुणवरुणतरुस्कन्धसमुन्नद्ध[1]भृङ्गगोलकेन, गोलाङ्गूलभग्नगलन्मधुपटलरसासारसिक्ततरुतलेन,[2]तालहिन्तालपूगपुन्नागनागकेसरघनेन, घनसारमल्लिकाकेतककोविदारमन्दारबीजपूरकजम्बीरजम्बूगुल्मगहनेन,[3] प्रत्यूहदा[4]त्यूहव्यूहकुहरितभरितनदीनलनिकुञ्जेन, पुञ्जिताकुण्ठकण्ठकलकण्ठाध्यासितोद्दामसहकारपल्लवेन, [5]चपलकुलायकुक्कुटकुटुम्बसंवाहितोत्कटविकटेन, कोरकनिकुरुम्बरोमाञ्चितकुरबकराजिना, रक्ताशोकपल्लवलावण्यविलिप्यमानदशदिशा, [6]प्रविकसितकेसररजोविसरवर्धमानवासरधूसरिमभारेण, [7]परागपिञ्जरमञ्जरीयुज्य[8]मानमधुपमञ्जुशिञ्जितजनितजनमुदा, मदजलमेचकितमुचुकुन्दस्कन्ध[9]काण्डमथ्यमाननिःशङ्ककरिकरटकण्डूतिना, कतिपयदिवसप्रसूतकुक्कुटी[10]कृतकुटजकोटरेण, चटकसञ्चार्यमाणचतुरवाचाटचाटकैरक्रियमाणचाटुना, सहचरीचारणचञ्चुरे[11]चकोरचुञ्चुना, शैलेयसुकुमारशिलातलसुखशयितशशशिशुना, शेफालिकाशिफाविवरविस्रब्धवर्तमानगौधेरराशिना, निरातङ्करङ्कुणा, निराकुलनकुलकेलिना, कलकोकिलकुलकवलितसहकारकलिकोद्गमेन, सहकारारामरोमन्थायमानचमरयूथेन, श्रवणहारिसनीडगिरिनितम्बनिर्झरनिनादनिद्रानन्दमन्दायमानकरिकुलकर्णतालदुन्दुभिना, समासन्नकिन्नरीगीतरवरममाण-

---

१ H, K, G भृङ्गरोलेन ।

२ Hd नारिकेलकरकेलिराजतालीतालकृतमालतमाललवलीपूग० । K प्रवृद्धनारिकेलकङ्केलिराजतालीतालतमाल......घनेन ।

३ After गहनेन K, G read further — पवनसंवाहितानेकपनसविटपिविटपेन ।

४ A, B, H, K, G अप्रत्यूह ।

५ K, G चपलकुलायकुक्कुटकुटुम्बाध्युषितोत्कटानेकविटपेन ।

६ H प्रविकसितकेसररजोविसरधूसरिमभरेण ।
K प्रविकसितकेसरकुसुमकेसररजोविसरधूसरितपरिसरेण ।

७ K परागपुञ्जपिञ्जरसिन्दुवारमञ्जरीरज्यमानमधुकरमञ्जुशिञ्जितजनितमुदा, लवङ्गचम्पकमधूकतमाललोध्रकर्णिकारकदम्बकदम्बकेन ।

८ H °मुह्यमानमधुकर° ।

९ H °स्कन्धकाण्डकथ्यमान° । K मदजलमेचकितगण्डकाषमुचुकुन्दकाण्डकथ्यमान° ।

१० H कुक्कुटीकुटीरीकृत° ।

११ H °चारणचुञ्चुचतुरचकोरचुञ्चुना ।

रुरुविसरेण, क्षतहरितहरिद्राद्रवरज्यमानवराहपोतपोत्रपालिना, गुञ्जा-पुञ्जगुञ्जज्जाहकजातेन, दंशनकुपितकपिपोतपुटकपाटितपाटलकीटपुट-सङ्कटेन, कुलिशशिखरखरनखरप्रचयप्रचण्डचपेटपाटितमत्तमातङ्ग-रक्तच्छटाच्छुरितचारुकेसरभासुरकेसरिकदम्बकेन महासागरकच्छ-प्रान्तेन कतिपयदूरं गत्वा, अतिचपलवीचिप्रचयतया ताण्डवोद्दण्डदोः-षण्डखण्डपरशुविडम्बनापण्डितं, वारुणीविजयपताकाभिरिव शेष-कुलनिर्मोकमञ्जरीभिरिव शशाङ्कपरिशेषपरमाणुसन्ततिभिरिव फेन-राजिभिरुपान्तरामणीयकं, अपरमिव गगनं अवनीतलमवतीर्णं अच्छार्णवच्छलादुच्छलच्छीकरकणनिकरनिभेन नभश्चरान्मुक्ताफलै-रिव विलोभयन्तं, अभयाभ्यर्थनागतानेकपक्षक्षितिधरभरितकुक्षि-भागं, सगरसुतखातकं, उत्खातपारिजातं, अभिजातमणिरत्नाकरं, करिमकरकुलसङ्कुलं, शकुलकवलाभिलाषि, सञ्चरन्नक्रचक्रं, अस्तमित-तिमिङ्गिलकुलकन्दलीवलयावलीविलुलितलवलीलवङ्गमातुलुङ्गगुल्मं, ऊर्मिमारुतमर्मरिततरलतरोत्तालतालीतरलतरलितजलमानुषमिथुन-मृदिततलपुलिनबालशैवालं, प्रवालाङ्कुरकोटिपाटितमुखखिन्नशङ्खनख-खरनखरशिलालिखिततटलेखं, खगेश्वरगोत्रपत्ररथपटलकलिलसलिलं, अद्याप्यनिर्मुक्तमन्दरमथनसंस्कारमिवावर्तभ्रान्तिभिः, सापसारमिव [१३]फेनैः, ससुरामोदमिव वेलाबकुलगन्धैः, सरोषमिव गर्जितैः,

१ A, K, G, कुहरित० ।

२ A, K, G गुञ्जाकुञ्जपुञ्जितजाहकजातेन ।

३ H दंशनकुपित० । K, G दंशदशन० ।

४ H ०कपिकपोतनखकोटिपाटितपाटलकीटपुटसङ्कुलेन ।
K ०पेटकनखकोटिपाटितपाटलीपुटकीटसङ्कटेन ।

५ H, K, G मातङ्गकुम्भस्थल० ।

६ H, K, G कच्छोपान्तेन ।

७ K ०प्रचयप्रहतप्रपातया ।

८ K ०मञ्जरीभिरिव सुधासहचरीभिरिव ज्योत्स्नासहोदरीभिरिव ।

९ H, K, G ०सन्ततिभिरिव लक्ष्मीलीलातर्पणधाराभिरिव जलदेवताचन्दनविच्छित्तिभिरिव ।

१० K सगरसुतविसरसमुत्खातं, वडवामुखवारिजातं, सुरपत्युपात्तपारिजातं ।

११ K, G शकुनिकुला० ।

१२ A ०नखनखरशिखारलिततटलेखं । B ०शिखालिखिततटलेखम् ।

१३ K, G सित[illegible] । A, K, G [illegible] ।

सखेदमिव [1]निःश्वसितैः, [2]सभ्रूकुटीबन्धमिव तरङ्गैः, आलानस्तम्भमिव रामसेतुना, कुम्भीनसीकुक्षिमिव लवणोत्पत्तिस्थानं, व्याकरणमिव [3]विततस्त्रीनदीकृत्यबहुलं, राजकुलमिव दृश्यमानमहापात्रं, हस्तिबन्धमिव वारिगतानेकनागमुच्यमान[4]गूत्कारं, विश्वामित्रपुत्रवर्गमिवाम्भोजचारुमत्स्योपशोभितं, सत्पुरुषमिव गोत्राश्रयं, साधुमिवाच्युतस्थितिरमणीयं, सुनृपमिव सज्जनक्रमकरं, कृतमन्युमिव करतोयाप्लुतमुखं, विरहिणमिव चन्दनोदकसिक्तं, विलासिनमिव [5]नर्मदावगतं, उद्धृतकालकूटमपि प्रकटितविशराशिं, अतिवृद्धमपि सुन्दरीपरिगतकण्ठं, सुरोत्पत्तिस्थानमप्यसुराधिष्ठानं जलनिधिमपश्यत् ।

§४६) अचिन्तयच्चाहो मे कृतापकारेणापि विधिनोपकृतिरेव कृता यदयं लोचनगोचरतां नीतः समुद्रः । [6]तदत्र देहमुत्सृज्य प्रियाविरहाग्निं निर्वापयामि । यद्यप्यनातुरस्यात्मत्यागो न विहितः तथापि कार्यः । [7]न खलु सर्वः सर्वं कार्यमकार्यं वा करोति । असारे संसारे केन किं नाम न कृतम् । तथाहि । गुरुदार[8]हरणं द्विजराजोऽकरोत् । पुरूरवा ब्राह्मणधनतृष्णया विननाश । नहुषः परकलत्रदोहदी [9]महाभुजग आसीत् । [10]ययातिराहितपाणिग्रहणः पपात । सुद्युम्नः स्त्रीमय इवाभवत् । [11]सोमस्य प्रख्याता जन्तुवधनिर्घृणता । पुरुकुत्सः कुत्सित इवासीत् । कुवलयाश्वो [12]नाश्वतरकन्यामपि परिजहार । नृगः कृकलासतामगमत् । नलं कलिरभिभूतवान् । [13]संवरणो मित्रदुहितरि विक्लव-

---

१ K, G नागनिःश्वासैः ।
२ H सभ्रूकुटीभङ्गुरमिव । K, G सभ्रुभङ्गमिव तरङ्गैः ।
३ K omits वितत ।
४ H ०फूत्कारम् ।
५ K, G ०नर्मदानुगतं, राशिमिव समीनकुलीरं, शृङ्गारिणमिव अनेकमुक्तालङ्कृतमुद्धृत० ।
६ A, B, K, G तदत्र देहं त्यजामि ।
७ K, G न खलु सर्वः सर्वं कार्यमेव करोत्यसारे संसारे । केन किं नाम न कृतम् ।
८ H ०ग्रहणं ।
९ K भुजङ्गतामयासीत् ।
१० B ०राहितब्राह्मणी० । K ययातिः कृतब्राह्मणीपाणिग्रहणः । G (कृतपुरोहितसुतापाणिग्रहणः ।)
११ H, K सोमकस्य० । but Ha, Hb, Hg यमस्य ।
१२ H अश्वतरकन्यामपि जहार । K, G० जगाम ।
१३ H संवरणो । शम्बरो acc. to Ha, Hb, Hc, Hd, He, Hf, Hg, Hh.

तामगात् । दशरथ इष्टरामोन्मादेन मृत्युमवाप । कार्तवीर्यो गोब्राह्मण-पीडया पञ्चत्वमयासीत् । मनुः सुवर्णव्यसनी ननाश । शन्तनुरति-व्यसनाद्विपिने विललाप । युधिष्ठिरः समरशिरसि सत्यमुत्ससर्ज । नास्त्यकलङ्कः कोऽपि प्रायः । [1]देहत्यागे न कलङ्की भवामीति विचिन्त्य कुररखरनखरशिखरखण्डितपृथुलपृथुरोमांविलं,[2]अविरलशकुलशल्क-सङ्कुलजलनकुलकुलोच्चारं, [3]क्रोष्टुकुलोच्छिष्टविकटकर्कटकर्परपरम्परा-परिगतप्रान्तं, अतितरलतरजलरयलुलितचटुलशफरकुलकवलनकृतं, अतिनिभृतबकशकुनिनिवहधवलितपरिसरं, अतिचपलजलकपिकुल-विहरणलुलितसलिल[4]कणनिकरजडितपरिमलितशिशिरितं,अनुदिवस-निपतदतितरुणवनमहि[5]षशृङ्गशिखरलिखितविषमतटं, अनवरतचरद्-सितमुखचरणविहगनिवहमधुरनिनदमुखरितं, अहिमकरकिरणरुचि-जलमनुजशयनमृदितजलधरणीतलं, अतिबहलमदजलशबलकरटतट-करिवरशतनिपतितमधुकरनिकरमधुरविरुतरतकरं, अतिजवनपवन-विधुत[6]जलविनटननिपतितमणिगणपरिगतपरिसरं, जलनिधिभुजग-निर्मुक्तनिर्मोकपट्टमिव, दर्पणमिव वसुन्धरायाः, स्फटिककुट्टिममिव वरुणस्य पु[7]लिनतलमाससाद ।

§ ४७) ततः कृतस्नानादिर्जलमवतरितुमारेभे शरीरत्यागाय ।

§ ४८) अथ सानुग्रहेषु ग्राहेषु, निर्मत्सरेषु मत्स्येषु, [8]अक्षुद्रेषु क्षुद्रेषु, वत्सलेषु कच्छपेषु, अक्रूरेषु नक्रेषु, अभयङ्करेषु मकरेषु, अमारेषु शिशुमारेषु, आकाशात्सरस्वती समुदचरत् । आर्य कन्दर्पकेतो पुनरपि तव प्रियया सङ्गमो भविष्यतीत्यचिरेण । तद्विरम मरणव्यवसाया-

---

१ H, K, G तदहमपि देहमुत्सृजामि ।

२ A अविरतशकुलशल्कसङ्कुलजलनकुल० । B ०सङ्कुलजलनकुलोच्चारं । H पृथुरोमाविल... शल्कजलनकुलोच्चारं । K, G पृथुरोमशल्कसङ्कुलं सङ्कुलितजलनकुलकुलोच्चारशारम् ।

३ H, K क्रोष्टुकुलोत्सृष्ट० ।

४ K ०कणनिकरपरिमिलनशिशिरिततमालतलम् ।

५ A, B, H, K, G ०महिषगवलशिखर० ।

६ H ०जलधिजलपटलविनटननिपतित० । K, G ०जलविघटननिपतित० ।

७ H विपुलं पुलिनजलमाससाद । A विपुलं पुलिनतल० । K, G वरुणस्य कमलवनमिव सपद्म-रागं वनप्रदेशमिव सविद्रुमलतं कातरमिव सदरम् विष्णुमिवानेकमुक्तोपेतं पुलिनतलमाससाद ।

८ K, G अनिच्छेषु कच्छपेषु अक्रुरेषु नक्रेषु ।

दिति। तदुपश्रुत्य मरणारम्भाद्विरराम। पुनः प्रियया समागमाशया [1]संस्थितिहेतुभूतमशनं चिकीर्षुः [2]कच्छोपान्तभुवं जगाम। तत्र तत इतः परिभ्रमन् फलमूलादिना वने वर्तयन्[3]कालं निनाय।

§ ४९) एकदा तु कतिपयमासापगमे काकलीगायन इव [4]सम्रद्धनिम्नगानदः, सन्ध्यासमय इव नर्तितनीलकण्ठः, कुमारमयूर इव [5]समूढशरजन्मा, महातपस्वीव प्रशमितरजःप्रसरः, तापस इव धृतजलदकरकः, प्रलयकाल इव दर्शितानेकतरणिविभ्रमः, निरुपद्रवकाननोद्देश इव घनोत्सुकितसारङ्गः, रेवतीकरपल्लव इव [6]हलिधृतकरः आजगाम वर्षासमयः।

§ ५०) [7]निर्भिन्नमेघनीलोत्पलकानने क्रीडासरसीव नभसि स्मरस्य रत्ननौकेव, [8]कुलटलक्ष्मीमातङ्गकन्यानर्तनचलरज्जुरिव, नभःसौधतोरणमालिकेव, प्रवसता निदाघेन दिवःपयोधरे स्मरणाय [9]क्षता नखपदावलिरिव, [10]गगनलक्ष्मीरत्नरशनामालेव, [11]नभोमन्दारकुसुममञ्जरीव, रतिनखमार्जनरत्नशलाकेव, [12]रत्नशुक्तिरिव कुसुमकेतोरिन्द्रधनुर्लता रराज।

§ ५१) अतिवेगनिपीतजलधिशङ्खमालामिव बलाकाच्छलादुद्वमन्निवादृश्यत जलधरनिकरः। आपीतहरितैः कृष्णासु केदारिकाकोष्ठिकासु [13]समुत्फलद्भिर्जातुशबलैरिव दर्दुरैर्विद्युता समं चिक्रीड वर्षाकालः।

१ H शरीरस्थितिहेतुमाहारं। K शरीरस्थितिहेतुमशनं।

२ K कच्छोपान्तवनं।

३ H कियन्तं कालं। K कालमनेकं निनाय।

४ H सन्नद्धनिम्नगानदः।

५ K समारूढशरजन्मा।

६ A हलधृतिकरः। H, K हलिधृतकरः। Hc adds रावण इव समेघनादो विन्ध्यगिरिरिव सघनः। K adds लङ्केश्वर इव समेघनादो विन्ध्य इव घनश्यामः।

७ K विभिन्न...कानननीले...कनकरत्ननौकेव।

८ H जलदलक्ष्मी०। K जलदकाल०।

९ A दत्तनखक्षतालीव। H, K दत्ता। H नखक्षतावलीव।

१० K गगनलक्ष्मीबन्धुरशना।

११ H नभोमन्दारतरुसुन्दरकलिकामालेव। K नभोमन्दारसुन्दरकलिकेव।

१२ K रत्नमयी विलासयष्टिरिव।

१३ H, K समुत्पतद्भिः। but K समुत्पतद्भिर्दर्दुरशिशुकैर्जातुषैर्नययूतैरिव।

[१]रविदीपकज्जलनिचयनिकषोपले इव मेघे समयसुवर्णकारनिकषितसुवर्णलेखेव तडिदशोभत । विरहिणां हृदयं विदारयितुं करपत्रमिव कुसुमायुधस्य [२]क्रकचच्छदमशोभत । जलददारुणि लोलतडिल्ल[३]तापत्रनिपातविदारिते वेगधूताश्चूर्णचया इव [४]जलरेणवो बभुः । विच्छिन्नदिग्वधूहारमुक्ता इव खरपवनवेगभ्रमितघनघरघट्टनसञ्चूर्णितास्तारानिकरा इव भुवनविजिगीषोर्मकरध्वजस्य प्रस्थानलाजाञ्जलय इव करका व्यराजन्त[५] ।

§५२) अनन्तरमखञ्जखञ्जरीटे अकुञ्चितक्रौञ्चसञ्चारे, निर्भरभरद्वाजद्विजवाचाटविटपे[६], पात्रभ्रान्तशुककलमकेदारे, प्रवेशितावेशिकराजहंसे, कंसारिदेहद्युतिद्युतले, [७]हंसतूलतुलितराजज्जलमुचि, [८]सान्द्रीकृतेन्दुमहाकामुकमुदि, मधुरमधुतृणवीरुधि, [९]सरससारसरसितसारकासारे, कशेरुकन्दलुब्धपोत्रिपोतपौत्रोत्खाततटतडागसञ्चरन्माष[१०]-पुत्रिकापत्रीपटलमधुरसाध्वनिविहितमुदि, कदर्थितकदम्बे कम्बुद्विषि, प्रसृतबिसप्रसूने, चकितचातके, विरलवारिदे, तारतरतारके, वारुणीचारुचन्द्रमसि, स्वादुरससलिले, स्फुरितशफरतर्कु[११]बकोटे, [१२]घूकमण्डूकमण्डले, सङ्कोचितकञ्चुकिनि, काञ्चनच्छेदगौरशालिनि, क्रोश-

---

१ K रविदीपकज्जलितमेघनिकषोपले ।

२ K केतकीपुष्पमशोभत ।

३ H, K ०तडिल्लताकरपत्रदारिते ।

४ K जलकणाः ।

५ Hc and K add "नवशाद्वलं सेन्द्रगोपं महीमहिलायाः शुकाङ्गश्यामलं लाक्षारसाङ्कितं स्तनोत्तरीयमिवालक्ष्यत । मेघकुम्भसलिलैः पृथिवीनायिकां स्नपयित्वा प्रावृट्चेटिकायां गतायां स्वच्छाम्बरं दर्शयन्ती शरच्चेटिका समाजगाम ।

६ H, K पटु (तर) प्रभप्रभाते । K उद्भ्रान्तशुककुलकलकलसङ्कुलकलमकेदारे, प्रवेशितराजहंसे ।

७ A, B, K हंसकुलतुलित० ।

८ A मन्दीकृतेन्द्रमहाकार्मुक० । K सान्द्रीकृतेन्दुमहसि, गामुकजनमृदितमधुतृणवीरुधि ।

९ H, K सुरससार० ।

१० H ०मत्स्यपुत्रिका । H accepts it against his mss. A, C, D, E, F, H.

११ H बकानोके । K बकालिके ।

१२ K घूक० । K कशेरुकन्दलुब्धपोत्रिपात्रोत्खातसरस्तरभागे, चकितचातके, विरलवारिदे, तारतरतारके, वारुणीतिलकचन्द्रमसि स्वादुतरसलिले स्फुरितशफरकवलननिभृतबकालिके ।

दुत्कोशे, सुरभिगन्धिसौगन्धिकगन्धहारिहरिणाश्वे कुमुदामोदिनि[1] कौमुदीकृतमुदि, [2]निबर्हबर्हिणि, कूजत्कोयष्टिके, धृतधार्तराष्ट्रे,[3] हृष्ट-कलमगोपिकागीतसुखितमृगयूथे,[4] कथाकृतकिंशुके, म्लापितमालती-लतामुकुले, बन्धूकबान्धवे, सञ्जातकमुजानके, विसूत्रितसौत्रामण-धनुषि, स्मेरकाश्मीररजःपिञ्जरितदिशि, विकस्वरसरे शरत्सम-यारम्भे कन्दर्पकेतुः परिभ्रमन् शिलामयीं पुत्रिकां कौतुकेन, मोहेन, शोकेन, वेगेन स्वप्रियानुकारिणीति हस्तेन पस्पर्श ।

§५३) अनन्तरं स्पृष्टमात्रा सा शिलामयीं मूर्तिमुत्सृज्य,[5] पुनर्वासव-दत्तास्वरूपमापेदे । तामवलोक्य कन्दर्पकेतुरमृतार्णवमग्न इव सुचिर-मालिङ्ग्य पप्रच्छ । प्रिये कथय किमिदं वृत्तान्तम् ।

§५४) सा तु दीर्घमुष्णं च निःश्वस्य कथयितुमारेभे ।[6] आर्यपुत्रा-पुण्याया मम मन्दभागिन्याः कृते महाभाग[7] उज्झितराज्य इति एकाकी जन इव वाङ्मनसयोरगोचरं दुःखमनुभूतवान् । अनेकदिवसानाहार-शून्यतया[8] कृशतरो निद्रान्ते यदि कदाचित् फलमूलादिकं मिलति तदा शरीरस्थितिं करोतीति विचिन्त्य फलान्वेषणायोपवनतरूनवलोकयन्ती कतिपयनल्वगोचरमगच्छम् ।

§५५) क्रमेण च गुल्मान्तरित[9]क्रियमाणकार्यमानिकं,[10] विरच्यमानेश्वर-

---

१ K दरदलितकुमुदामोदिनि ।

२ K निर्गलितबर्हबर्हिणि ।

३ K धृतधृतिधार्तराष्ट्रे ।

४ H reads after this as—"कथीकृतयूथिते म्लायमानमालतीमुकुले......सञ्जात-सुजातके । K ०मृगयूथे, विसूत्रितशतमखधनुषि, स्मेरकाश्मीररजःपिञ्जरितदशदिशि विकस्वर-कमले बन्धूकबान्धवे शरत्समयारम्भे विजृम्भमाणे कन्दर्पकेतुस्तत इतः ......दृष्ट्वा मम प्रिया ......णीति करेण पस्पर्श ।

५ B अथ शिलास्वभावमुत्सृज्य । H, K शिलाभावमृत्सृज्य ।

६ K प्रत्युवाच ।

७ K महाभागो भवानुत्सृष्टराज्य एकाकी परिभ्रमन्...अवाङ्मनसगोचरं...अनुबभूव ।

८ अथोपवासादिना कृशतरो मूलफलादिनार्यपुत्र आहारं करोतीति विचिन्त्य । K उपवासादिना तृषातुरे भवति निद्राश्रान्ते प्रथमप्रबुद्धाहं भवतः फलमूलादिकमाहरिष्यामीति विचिन्त्य ।

९ K omits तरुगुल्मान्तरित......विपणिकेतुवंशं । and instead has अथ क्षणेन तरुगुल्मान्तरितं सेनानिवेशं दृष्ट्वा ।

१० H ०मानिकनिकेतनं ।

गृहं, अवतार्यमाणकण्ठालकं, आरभ्यमाणपेटुकटुकं[1], व्यवस्थाप्यमानवेश्यासंनिवेशं, श्रूयमाणतुरगहेषारवं, वाद्यमानविश्रामढक्कापुष्करं, अन्विष्यमाणस्वादुसलिलाशयं, उद्दिश्यमानविपणिकेतुवंशं, सेनासन्निवेशमपश्यम् । [2]तमवलोक्याहमचिन्तयम् । किमयं [3]ममान्वेषणाय तातस्य व्यूहं[4] आहोस्विद[5]आर्यपुत्रस्य वाहिनीसम्भार इति चिन्तयन्त्यां[6] मयि [7]परिचारककथितोदन्तो मामुद्दिश्य सेनापतिर्धावितः[8] । [9]ततोऽनन्तरं किरातसैन्यसेनापतिस्तादृश एव सेनासमन्वितो मृगयाव्याजेनागतः सोऽपि धावितः ।

§ ५६) [10]अनन्तरं चिन्तितं मया । यद्यहमार्यपुत्राय कथयामि तदा एकाकी एभिरवश्यमेव हन्तव्यः । अथ न कथयामि तदाहमेवैभिर्हन्तव्येति चिन्ताक्षण एव द्वयोः सैन्ययोर्युद्धमभूदेकामिषाभियुक्तयोर्गृध्रयोरिव । ततः प्रवृत्तप्रतिशरासारदुर्दिनहृतदिनकरकिरणे, रथकर्मविशारद[11]द्विरदकरदूरोत्क्षिप्तखड्गधरसुभटश्लिष्यमाणविद्याधरविभ्रमे, समरदर्शनसञ्चरदनेक[12]नभश्चरचारणचक्र[13]वाले, वेतालसमाक्रान्तस्कन्धकबन्धचक्रक्रियमाणचारुप्रचारे, चारभटखड्गखण्डितद्विरदपादसमासपिशाचीकर्णोलूखलाभरणकौतुके, [14]समुत्फुल्लफलकिनि, नदन्नान्दीके,

---

१ H ०पटकुटीकं ।

२ H and K omit तमहम...यम् ।

३ K ममाकर्षणाय ।

४ H व्यूहः समायातः ।

५ H आर्यपुत्रस्य । K आर्यपुत्रव्यूहः ।

६ H इति विचारयन्तीं मां । K इति चिन्तयन्तीं मां ।

७ H, K चारकथितवार्तः ।

८ K धावति स्म ।

९ ततोऽन्यः किरातसेनापतिस्तादृश एव तथाभूतया सेनयान्वितो मृगयां गतः सोऽपि तच्छ्रुत्वा धावति स्म ।

१० Instead of अनन्तरं चिन्तितं मया......गृध्रयोरिव K reads अथैकामिषलुब्धयोर्गृध्रयोरिव तयोर्युद्धमासीत् ।

११ H द्विरददन्तद्वयो० । K द्विरददूरोत्क्षिप्त० ।

१२ H ०नभश्चरचारण० ।

१३ K ०चक्रवाले चरचारुभट......भरणकौतुके ।

१४ H समुत्पतदतिनिनदनान्दीके । K कौतुकाकृष्टजनकृतवदननान्दीके ।

कान्दिशीकभीरुणि रणखले, सृगालीप्रार्थनीयेष्वामिषपिण्डेष्विव वत्सदन्तक्षतेषु तृणेष्विव, जिह्मगदष्टेष्विव शरीरेष्वनास्थां कलयन्तः समं द्विषां धनुषां च जीवाकर्षणं चक्रुः ।

§ ५७) त्यागिन इव दानवन्तो मार्गणसन्तापमसहन्तः महामृगाः उत्कुपिता इव क्षमां मुञ्चन्तस्तुरगा रेजुः । कर्णाभ्यां परपरिवादश्रवणकुतूहलिभ्यां, नेत्राभ्यामालोकितसाधुविपत्तिभ्यां, मूर्ध्ना चास्थाने प्रणमता त्यक्तोऽहमिति हर्षादेव ननर्त चिरं कबन्धः ।

§ ५८) ततः परिहासेनेव चक्षुषी पिदधता परापवादश्रवणारुणेव श्रोत्रवृत्तिं स्थगयता, सोन्मादेनेव वायुवेगविक्षिप्तेन, पलितङ्करणेनेव सुरयोषितां, अन्धङ्करणेनेव योधानां, तिमिरेणेव समरप्रदोषस्य, पतितेनेव विमुक्तगोत्रेण, मीमांसकदर्शनेनेव तिरस्कृतदिगम्बरदर्शनेन, सत्पुरुषेणेव विष्णुपदावलम्बिना समरजेन रजसा जजृम्भे ।

---

१ K प्रस्कन्नक्लीवजने, रणोद्यतजितकाशिनि रणखले, सृगालिकासृगालप्रार्थनीये० ।

२ H, K omit वत्सदन्तक्षतेषु तृणेष्विव ।

३ K श्वित्रदुर्भगेष्विव शरीरेषु ।

४ H जीवाकृष्टिं योधाश्चक्रुः । K जीवाकर्षणं योधाश्चक्रुः ।

५ H, K मार्गणसम्पातमसहन्तः । समृद्धविलासिन इव शृङ्गारशोभिताः सहेमकक्षाश्च (K सहेमकक्ष्याश्च) सदारामा इव कदलीराजिताः । निशा (K निशानिवहा) इव नक्षत्रमालोपशोभिता दिवसा (K शरद्दिवसा) इव उल्लसत्पुष्करा (K समुल्लसत्पद्मा) महामृगाः बभुः । उत्कुपिता (उत्क्षिप्ता H) पयोधय इवावर्तशोभिनः सोर्मयश्च, उद्यानोद्देशा इव समल्लिकाक्षाः कुलालगृहा इव अभिनवभाण्डहारिणः रत्नाकरा इव सदेवमणयो लेखा इव सेन्द्रधृतयः (सेन्द्रायुधवृद्धयः क्षीवा इव पानभूषिताः – K) ।

६ H श्रुतपरपरिवादाभ्यां । K श्रुतपरापवादाभ्यां । H, K खलोदयसाधुक्षयसाक्षिभ्यां अक्षिभ्यां, अस्थानेऽपि नमता मूर्ध्ना ।

७ H विमुक्तोऽहमिति । K नमता मूर्ध्ना कीर्तयता चाकीर्तनीयान्यास्येन च, वियुक्तोऽहं दिष्ट्येति हर्षादिव ।

८ B, H, K ०श्रवणभीरुणा ।

९ After विमुक्तगोत्रेण K reads कुनृपतिनेव नक्षत्रपथगामिना, कलिङ्गेनेव कृतधूम्यारुचिना राजसेनेव व्यवहितसत्त्वेन, अविनीतेनेव समुद्धतेन, असज्जनेनेव पिहितसत्पथेन रणजेन रजोजातेन विजजृम्भे । Also Hc, B omit मीमांसकदर्शनेन...विष्णुपदावलम्बिना ।

१० H adds कश्चिद्राम इव रावणवधमकरोत् कश्चित्कृष्ण इव (अनन्तरं च नारायण इव कश्चित् — K) also K — नरकच्छेदमकार्षीत् । कश्चिद्बौद्धसिद्धान्त इव क्षपितश्रुतिवचनदर्शनोऽभवत् । कश्चित्क्षपणक इव कटाकृतविग्रहोऽभवत् । (कश्चित्सुरापद्विज इव पपात । — K)

तत्र समरसम्भारे कश्चिदाशङ्कितोरुभङ्गः सुयोधन इव योधः पयसि विवेश। कश्चिच्छरतल्पशायो भीष्म इव चिराय श्वसन्नासीत्। कश्चित्कर्ण इव विक्लवीभूतसर्वाङ्गः शक्तिमोक्षणमकरोत्[1]। ततो विध्वस्तध्वजपटं पतत्पताकं [2]च्युतचापचामरापीडं [3]स्खलत्खड्गधेनुकं तत्समस्तसैन्य-मन्योन्यं निधनमवाप।

§ ५९) अ[4]नन्तरं यस्याश्रमस्तेन मुनिना पुष्पादिकमादायागतेन प्रतिपन्नसर्ववृत्तान्तेन ममायमाश्रमो भग्न इति शिलामयी भवेति शप्ताहम्। अ[5]नन्तरं वराकी बहुदुःखमनुभवतीति [6]करुणयार्यपुत्रस्य स्पर्शावधि शापान्तमकरोत्।

§ ६०) ततः कन्दर्पकेतुः [7]समागतेन मकरन्देन वासवदत्तया सह स्वपुरं गत्वा [8]हृदयाभिलषितानि तानि तानि सुरतसुखान्यनुभवन्कालं निनाय ॥

[9]इति महाकविसुबन्धुविरचिता वासवदत्ता नाम कथा समाप्ता।

---

१ K adds कश्चिद्राघव इव रावणवधमकरोत्।

२ K व्यूहचारिभटकम्पितखड्गधेनुकं तत्समस्तमुभयं मिथो जगाम हननं सैन्यम्।

३ H स्खलत्खड्गं निधनमवाप सैन्यम्।

४ K ततः।

५ H, K क्षणेन।

६ H बहुदुःखमनुभवन्तीं मां विलोक्य आर्यपुत्रकरस्पर्शावधिं शापान्तमकरोत्।
K बहुदुःखमनुभवतीत्यनुग्रहादार्यपुत्रकरुणया च स मुनिर्याच्यमान आर्यपुत्रहस्तस्पर्शावधिकं शापमकरोत्।

७ K श्रुतवृत्तान्तेन समागतेन।

८ H यथाहृदयाभिलषितानि सुखान्यनुभवन् कालं निनाय।
K हृदयाभिलषितानि सुरलोकदुर्लभानि सुखानि ताभ्यां सहानुभवन् कालमनेकं निनाय।

प्रत्यक्षरश्लेषमयप्रपञ्चविन्यासवैदग्ध्यनिधिं प्रबन्धम्।
सरस्वतीदत्तवरप्रसादश्चक्रे सुबन्धुः सुजनैकबन्धुः॥

९ K इति वासवदत्ता समाप्ता। H इति महाकविसुबन्धुविरचिता वासवदत्ता समाप्ता। Hd इति श्रीवररुचिभागिनेयमहाकविसुबन्धुविरचिता०। Hall's all mss. read आख्यायिका instead of कथा.

Appendix 1

Subandhu and Bāṇa

(N. B. : — The references to Harṣacharita are from the Nirṇaya Sāgar, Bombay, edition 1946 and those to Kādambari are from Peterson's edition, 1885.)

V. P. l. — Vasavadattā, page, line ; H. P. l. — Harṣacharita, page, line ; K. P. l. — Kādambarī, page, line.

1 भूतिमलिनो......दर्पणमिव तं कुरुते तथा तथा निर्मलच्छायम् । V. P. 2. l. 6	दग्धभूत्या परुषीकृतान् राजवल्लभानुपसर्पतः । H. P. 222. l. 17
2 अभूदभूतपूर्वः......'क्षमानुगतोऽपि सुधर्माश्रितो'......राजा चिन्तामणिर्नाम । V. P. 3. l. 10	क्षमाभाजः आश्रितनन्दनाः । H. P. 40. l. 2
3 पृथुरपि गोत्रसमुत्सारणाद्विस्तारितभूमण्डलः । V. P. 4. l. 6	पृथुरिव पृथिवीपरिशोधनावधानसङ्कलितसकलमहीभृत्समुत्सारणः । H, P. 208. l. 15
4 यस्य च रिपुवर्गः सदा पार्थोऽपि न महाभारतरणयोग्यः । V. P. 5. l. 3.	धनञ्जयान्महाभारतरणयोग्यम् । H. P. 76. l. 4
5 मधुरिव नानारामानन्दकरः । V. P. 5. l. 14	तत्र चैवंविधे नानारामाभिरामकुसुमगन्धपरिमलसुभगो यौवनारम्भ इव भुवनस्य । H. P. 97. l. 1
6 तस्य च पारिजात इवाश्रितनन्दनः ...... । V. P. 5. l. 12.	क्षमाभाजः आश्रितनन्दनाः । H. P. 40. l. 2
7 a यस्य च ...... वनलता इवोत्कलिकासहस्रसङ्कुलाः ... तरुण्यः स्पृहयाञ्चक्रुः । V. P. 6. l. 13	उह्यमान इवोत्कलिकाबहुलेन ...... रतिसरसेन । H. P. 37. l. 12
b वसन्तवनराजिष्विवोत्कलिकाबहुलासु । V. P. 8. l. 14.	
8 यस्य च ... करतलताडनभीतैरिव मुक्ताहारैः पयोधरपरिसरो मुक्तः । V. P. 6. l. 19.	निर्दयकरतलताडनभियेव क्वापि गते हृदये । H. P. 182. l. 13

9 जघनमदननगरतोरणेन ।
V. P. 9. l. 3

धर्म (मदन V. L.) नगरतोरणस्तम्भविभ्रमं बिभ्राणा जङ्घाद्वितयम् ।
H P. 8. l. 11

10 विधातुरतिपीडयतः हस्तपरामर्शजनितपरिक्लेशेनेव क्षीणतरतामुपगतेन मध्यभागेनालङ्कृताम् ।
V. P. 9. l. 10

मन्ये च मातङ्गजातिस्पर्शदोषभयादस्पृशतेयमुत्पादिता प्रजापतिना अन्यथा कथमियमक्लिष्टता लावण्यस्य । न हि करतलस्पर्शक्लेशितानामवयवानामीदृशी भवति कान्तिः ।
K. P. 11. l. 22 – K. P. 12. l. 2

11 हारलतामृणाललोभनीयचक्रवाकाभ्यां ...... उद्भासमानां स्तनाभ्याम् ।
V. P. 10. l. 5

कान्तोच्चकुचचक्रवाकयुगलविपुलपुलिनेनारःस्थलेन ।
H. P. 22. l. 18

12 दशनरत्नतुलादण्डेन नयनसेतुसमुद्धतबन्धेन यौवनमन्मथवारणवरण्डकेनेव नासावंशेन परिष्कृताम् ।
V. P. 10. l. 16

आयतनयननदीसीमान्तसेतुबन्धेन ललाटतटशशिमणिशिलातलगलितेन कान्तिसलिलस्रोतसेव द्राघीयसा नासावंशेन शोभमानम् । H. P. 22. l. 6

13 स्तम्भनचूर्णमिवेन्द्रियाणां .... कन्यकामपश्यत्स्वप्ने ।
V. P. 11. l. 9

वशीकरणमन्त्रमिव मनसः, स्वस्थावेशचूर्णमिवेन्द्रियाणाम् ।
H. P. 23. l. 18

14 अथ तां प्रीतिविस्फारितेन पिबन्निव चक्षुषा ।
V, P. 11. l. 14

अथ सरस्वती प्रीतिविस्फारितेन चक्षुषा प्रत्यवादीत् ।
H. P. 36. l. 11

15 रतकील इव जघन्यकर्मलग्नोऽपि ह्रेपयति साधून् ।
V. P. 12. l. 21

जघन्यकर्मलग्नमात्मानं ताडयतः ।
H. P. 222 l. 14

16 तदधुना यदि त्वं सहपांसुक्रीडितसमदुःखसुखोऽसि तदा मामनुगच्छेत्युक्त्वा ...... पुरान्निर्जगाम ।
V. P. 13. l. 16

सहपांशुक्रीडापरिचयपेशलः प्रेयान्सखीजनः । H. P. 17. l. 10

17 a अकुलीनोऽपि सद्वंशभूषितः ।
V. P. 14. l. 18

दिव्ययोषितमिवाकुलीनाम् ।
K. P. 11. l. 15

b अम्लानजातिविभूषितामपि विरुद्धवंशाम् ।
V. P. 40. l. 18

c द्विजकुलभूषितामप्यकुलीन-
वंशाम् । V. P. 41. 1 2

18 a यायजूकेनेव सुरतार्थिना ।
V. P. 18. l. 12
b मानुषमिवाभिनन्दितसुरतम् ।
V. P. 36. l. 6

असुरश्रीरिव सततनिन्दितसुरता ।
K P. 12. l. 3

19 जातिहीनता दुष्कुलेषु न पुष्प-
मालासु । V. P. 20. l. 19

मधुमासकुसुमसमृद्धिमिव विजातिम् । K. P. 11. l. 17

20 पुलोमतनयेवानन्दितसहस्रनेत्रा
वासवदत्ता नाम तनया बभूव ।
V. P. 21. l. 14

सहस्रनेत्रदर्शनयोग्यां-दुहितरम् ।
H. P. 135. l. 2

21 अथैकदा तु विजृम्भमाणसहकार-
कोरकनिकुरुम्बनिपतितमधुकरमा-
लामदहुङ्कारजनितपथिकसंज्वरः ।
V. P. 21. l. 18

टङ्कारक्रियमाणसंज्वरे ।
H. P. 209. l. 4

22 कैवर्त इव बद्धराजीवोत्पलमालः ।
V. P. 22 l. 12

अवर्धतानेहसा च तत्रैवायमानन्दितज्ञातिवर्गो बालस्तारकराज इव राजीवलोचनो राजगृहे । H. P. 26. l. 16

23 केचित्पाण्डुपुत्रा इवाक्षहृदयाज्ञान-
हृतक्षमाः । V. P. 24. l. 13.

वलं अवशाक्षहृदयं कलिरभिभूतवान् । H P. 89. l. 1

24 a यौवनसागरतरङ्गपरम्परापरि-
गतेव । V. P. 26 l. 6

तरन्तमिव यौवनोदधिम् ।
H. P. 139. l. 3

b अहो प्रजापते रूपनिर्माणकौश-
शलमिदम् । V. P. 25. l. 10

अहो विधातुरस्थाने रूपनिष्पादनप्रयत्नः । K. P. 11. l. 20

25 द्विजकुलमिव श्रुतिप्रणयी तदीक्षण-
युगलम् । V. P. 27. l 9

श्रुतिप्रणयिभिः प्रणवैरिव कर्णावतंसकुसुममधुकरकुलैरुपास्यमाना ।
H. P. 9. l. 6

26 धन्यानि तानि स्थानानि ते च
जनपदाः, पुण्यनामाक्षराणि च
तानि सुकृतभाञ्जि ।
V. P. 27. l. 13

पुण्यभाञ्जि भजन्ति अभिख्यामक्षराणि ।
H. P. 25. l. 19

27 अत्रान्तरे भगवानपि मरीचिमाली
एवं वृत्तान्तमिव कथयितुं मध्यमं
लोकमवातरत् । V. P. 28. l. 7

अत्रान्तरे सरस्वत्यवतरणवार्तामिव कथयितुं मध्यमं लोकं अवततारांशुमालिः । H. P. 14. l. 3

28 अथ वासरताम्रचूडचक्राकारः चक्रवाकचक्रसङ्क्रमितसन्तापतयेव मन्दिमानमुद्वहन्मन्दारस्तवकसुन्दरः ।
V. P. 28. l. 9

पाटलितवपुष्युदयाचलचूडामणौ जरत्कृकवाकुचूडारुणपुरःसरे ।
H. P. 18. l. 2

29 a मधुपूर्णकपाल इव कालकपालिनः ।
V. P. 28. l. 14

रुद्रभिक्षादानशौण्डपुरमथनमुक्तमुण्डशिरानाडिरुधिरपूरणशोणितकपिलः कपालकर्पर इव पैतामहः ।
H. P. 257. l. 15

b नायमुपदेशकालः । पचयन्त इवाङ्गानि क्वथयन्त इवेन्द्रियाणि ।
V. P. 13. l. 14

दूरातीतः खलूपदेशकालः ।...... पचयन्त इव मेऽङ्गानि । उत्क्वथ्यत इव हृदयम् ।
K. P. 156. l. 6.

30 क्रमेण च रजोलुठितोत्थितकुलायाथिकलहविकलकलविङ्ककुलकलकलवाचालितशिखरेषु शिखरिषु, वसतिसाकाङ्क्षेषु ध्वाङ्क्षेषु, अनवरतदह्यमानकालागुरुधूपपरिमलोद्गारेषु वासागारेषु, दूर्वान्विततटिनीवद्धगोष्ठीकविदग्धजनप्रस्तूयमानकथाश्रवणोत्सुकशिशुजनकलकलनिवारणकुपितश्रद्धेषु वृद्धेषु, आलोलिकातरलरसनाभिः कथितकथाभिर्जरतीभिरतिलघुकरताडनजनितसुखे, शिशयिषमाणशिशुजने, विरचितकन्दर्पमुद्रासु क्षुद्रासु, कामुकजनानुबध्यमानदासीजनविविधाश्लीलवचनश्रुतिविरसीकृतसन्ध्यावन्दनोपविष्टेषु शिष्टेषु, रोमन्थमन्थरकुरङ्गकुटुम्बकाध्यास्यमानम्रदिष्ठगोष्ठीनपृष्ठास्वरण्यस्थलीषु, निद्राविनिद्राणद्रोणकुलकलितकुलायेष्वारामतरुषु, निर्जिगमिषति जरत्तरुकोटरकुटीरकुटुम्बिनि कौशिककुले तिमिरतर्जननिर्गतासु दहनप्रविष्टदिनकरकिरणासु इव स्फुरन्तीषु दीपलेखासु, मुखरितधनुषि वर्षति शरनि-

वाणोऽपि निर्गत्य धौतारकूटकोमलातपत्विषि निर्वाति वासरे, अस्ताचलकूटकिरीटे निचुलमञ्जरीभासि तेजांसि मुञ्चति वियन्मुचि मरीचिमालिनि, अतिरोमन्थमन्थरकुरङ्गकुटुम्बकाध्यास्यमानम्रदिष्ठगोष्ठीनपृष्ठास्वरण्यस्थलीषु, शोकाकुलकोककामिनीकूजितकरुणासु तरङ्गिणीतटीषु, वासविटपोपविष्टवाचाटचटकचक्रवालेष्वालवालावर्जितसेकजलकुटेषु निष्कुटेषु, दिवसविहृतिप्रत्यागतं प्रस्नुतस्तनं स्तनन्धये धयति धेनुवर्गमुद्गतक्षीरं क्षुधिततर्णकव्राते, क्रमेण चास्तधराधरधातुधुनीपूरप्लावित इव लोहितायमानमहसि मज्जति सन्ध्यासिन्धुपानपात्रे पात्तङ्गे मण्डले, कमण्डलुजलशुचिशयचरणेषु चैत्यप्रणतिपरेषु पाराशरिषु, यज्ञपात्रपवित्रपाणौ प्रकीर्णबर्हिष्युत्तेजसि जातवेदसि, हवींषि वषट्कुर्वति यायजूकजने, निद्राविद्राणद्रोणकुलकलिलकुलायेषु कापेयविकलकपिकुलेष्वारामतरुषु निर्जिगमिषति जरत्तरुकोटरकुटीरकुटुम्बिनि कौशिककुले मुनिकरसहस्रप्रकीर्णसन्ध्यावन्दनोदबिन्दुनिकर

करमनवरतमशेषसंसारशेमुषीमुषि-मकरध्वजे सुरतारम्भाकल्पशोभिनि, शम्भलीभाषितभाजि भजति भूषां भुजिष्यजने, सैरन्ध्रीबध्यमानरशनाजालजल्पाकजघनासु जनीषु, विश्रान्तकथानुबन्धतया प्रवर्तमानकथकजनगमनत्वरेषु चत्वरेषु, समावासितकुक्कुटेषु निष्कुटेषु, कृतयष्टिसमारोहणेषु बर्हिणेषु विहितसन्ध्यासमयव्यवस्थितेषु गृहस्थेषु, सङ्कोचोदञ्चदुच्चकेसरकोटिसङ्कटकुशेशयकोशकोटरकुटीरशायिनि षट्चरणचक्रे, अथानेन प्रवर्तता [वर्त्मना] भगवता भानुना [आ] गन्तव्यमिति सर्वपट्टमयैर्वसनैरिव मणिकुट्टिमाभिर्विरचितवरुणेन, भगवता कालेन कृत्तस्य दिवसमहिषस्य रुधिरधारेव, विद्रुमलतेवाम्बरमहार्णवस्य, रक्तकमलिनीव गगनतडाकस्य, काञ्चनसेतुरिव कन्दर्पस्य, मञ्जिष्ठारागारुणपताकेव गगनहर्म्यतलस्य, लक्ष्मीरिव स्वयंवरगृहीतपीताम्बरस्य, भिक्षुकीव तारानुरागरक्ता, रक्ताम्बरधारिणीव भगवती सन्ध्या समदृश्यत। (V. P. 28. l. 20 —V. P. 30 l. 2.)

इव दन्तुरयति तारापथस्थलीं स्थवीयसि तारकानिकुरुम्बे अम्बराश्रयिणि शर्वरीशबरीशिखण्डे, खण्डपरशुकण्ठकाले कवलयति बाले ज्योतिःशेषं सान्ध्यमन्धकारावतारे, तिमिरतर्जननिर्गतासु दहनप्रविष्टदिनकरकरशाखास्विव स्फुरन्तीषु दीपलेखासु, अररसम्पुटसङ्क्रीडनकथितावृत्तिष्विव गोपुरेषु, शयनोपजोषजुषि जरतीकथितकथे शिशयिषमाणे शिशुजने जरन्महिषमषीमलीमसतमसि जनितपुण्यजनप्रजागरे विजृम्भमाणे भीषणतमे तमीमुखे मुखरितविततज्यधनुषि वर्षति शरनिकरमनवरतमशेषसंसारशेमुषीमुषि मकरध्वजे रताकल्पारम्भशोभिनी शम्भलीसुभाषितभाजि भजति भूषां भुजिष्याजने सैरन्ध्रीबध्यमानरशनाजालजल्पाकजघनासु जनीषु......।

(H. P. 80. l. 8 – H P. 81. l. 11)

अत्रान्तरे सरस्वत्यवतरणवार्तामिव कथयितुं मध्यमं लोकमवततारांशुमाली। क्रमेण च मन्दायमाने......वासरे...... सायन्तने तनीयसि निशानिःश्वासनिभे नभस्वति सङ्कोचोदञ्चदुच्चकेसरकोटीसङ्कटकुशेशयकोशकोटरकुटीशायिनि षट्चरणचक्रे......सावित्री............ सरस्वतीमवादीत्। (H. P. 14. l. 3 – H. P. 16. l. 10.)

31 क्षणेन च सन्ध्याताण्डवडम्बरोच्छलितमहानटजटाजूटकूटकुटिलविवरवर्तिजह्नुकन्यावारिधाराबिन्दव इव विकीर्णाः ।

V. P. 31. l. 8.

नृत्योद्धूतधूर्जटिजटाटवीकुटजकुड्मलनिकरनिभे.........तारागणे ।

H. P. 15. l. 10.

32 अनन्तरं......बालपुलिनमिव निशायमुनायाः......ग्रहपतिरुज्जगाम

V. P. 33. l. 5.

प्रतनुतुहिनकिरणकिरणलावण्यालोकपाण्डुन्याश्यानीलवीरमुक्तकालिन्दीकूलबालपुलिनायमाने शातकतवे कशयति तिमिरमाशामुखे ।

H. P. 15. l. 14.

33 क्रमेण च......सुरतभरखिन्नपुलिन्दसुन्दरीस्वेदजलकणिकापहारिणी प्रतिवाति सायन्तने तनीयसि निशानिःश्वासनिभे नभस्वति ।

V. P. 35. l. 8.

वनदेवता कुचांशुकापहरणपरिहासस्वेदिनेव सावश्यायशीकरे...वनानिले ।

H. P. 117. l. 1.

सिद्धपुरपुरन्ध्रिधम्मिलमल्लिकागन्धग्राहिणि सायन्तने तनीयसि निशानिःश्वासनिभे नभस्वति ।

H. P. 15. l. 8.

34 तारामिव गुरुकलत्रोपशोभितां वासवदत्तां ददर्श ।

V. P. 38. l. 16.

पृथुकलत्रश्रियो यत्र च............ ....प्रौढाश्च प्रमदाः ।

H. P. 98. l. 3.

35 तारातण्डुलशबलं नभोऽङ्गणं स्फुरदरुणतरुणचूडाचारुवदने वासरकृकवाकौ चरितुमवतरति ।

V. P. 41. l. 15.

जरत्कृकवाकुचूडारुणारुणपुरःसरे विरोचने ।

H. P. 18. l. 3.

36 अनन्तरं कतिपयनल्वशतमध्वानं गत्वागस्त्यवचनसमाहृतब्रह्माण्डगतशिखरसहस्रः, कन्दरान्तरलतागृहसुखप्रसुप्तविद्याधरमिथुनगीताकर्णनसुखितचमरीगणमारणोत्सुकितशबरशतसम्बाधकक्षतटः, कटककरिकराकृष्टभग्नस्यन्दमानहरिचन्दना-

अस्ति पूर्वापरजलनिधिवेलावनलग्ना मध्यदेशालङ्कारभूता मेखलेव भुवो वनकरिकुलमदजलसेकसंवर्धितैरतिविकचधवलकुसुमनिकरमत्युच्चतया तारागणमिव शिखरदेशलग्नमुद्वहद्भिः पादपैरुपशोभिता मदकलकुररकुलदृश्यमानमरिचपल्लवा करिकलभकलमृदिततमा-

मोदवाहिगन्धवाहसुरभितशिलातलः, सुदूरपतनभग्नतालफलरसार्द्रकरतलास्वादसोत्सुकशाखामृगकदम्बकः, प्रलम्बमाननिर्झरवरसविधोपविष्टजीवञ्जीवकमिथुनलिह्यमानविविधफलरसामोदसुरभितपरिसरः, सरभसकेसरिसहस्रखरनखरधाराविदारितमत्तमातङ्गकुम्भस्थलगलितमुक्ताफलशबलशिखरतया शिरोलग्नं तारागणमिवोद्वहन्, सुग्रीवऋक्षगवयशरभकेसरिकुमुदसेव्यमानपादच्छायः, पशुपतिरिव नागनिःश्वाससमुत्क्षिप्तभूतिः, जनार्दन इव विचित्रवनमालः, सहस्रकिरण इव सप्तपत्रस्यन्दनोपेतः, विरूपाक्ष इव सन्निहितगुहः शिवानुगतश्च, कामीव कान्तारोपरसानुगतः समदनश्च, श्रीपर्वत इव सन्निहितमल्लिकार्जुनः, नरवाहनदत्त इव प्रियङ्गुश्यामासनाथः, शिशुरिव कृतधात्रीधृतिः, वासरारम्भ इवारुणप्रभापाटलितपत्रवनराजिः, कृष्णपक्ष इव बहुलतागहनः, कर्ण इवानुभूतशतकोटीदानः, भीष्म इव शिखण्डीमुक्तैरर्धचन्द्रैराचितः, कामसूत्रविन्यास इव मल्लनागघटितकान्तारसामोदितः, हिरण्यकशिपुरिव शम्बरकुलाश्रयः, गैरिकरागव्याजादुपरिरविरथमार्गमार्गणार्थमिवारुणेनोपास्यमानः, शिखरगतसूर्याचन्द्रमस्तया विस्तारितविलोचनोऽगस्त्यमार्गमिवोद्वीक्षमाणः, स्रस्तान्त्रनाल इव जरदजगरभोगैः, कुम्भकर्ण इव दन्तान्तरालंगतवानरव्यूहः, पिण्डालक्तकाङ्कितपदपङ्क्तिसूचितसञ्चरितशचीपतिवारविलासिनीसङ्केतकेतकीमण्डपः, अकुलीनोऽपि सद्वंशभूषितो, दर्शि-

लकिसलयामोदिनी मधुमदोपरक्तकेरलीकपोलकोमलच्छविना सञ्चरद्वनदेवताचरणालक्तकरञ्जितेनेव पल्लवप्रचयेन सञ्छादिता शुककुलदलितदाडिमीफलद्रवार्द्रीकृततलैरतिचपलकपिकम्पितकङ्कोलच्युतपल्लवफलशबलैरनवरतनिपतितकुसुमरेणुपांसुलैः पथिकजनरचितलवङ्गपल्लवस्रस्तरैरतिकठोरनारिकेलकेतकीकरीरकेसरपरिगतप्रान्तैस्ताम्बूलीलतावनद्धपूगखण्डमण्डितैर्वनलक्ष्मीवासभवनैर्विराजिता लतामण्डपैरुन्मदमातङ्गकपोलस्थलगलितमदसलिलसिक्तेनेव निरन्तरमेलालतावनेन मदगन्धिनान्धकारिता नखमुखलग्नेभकुम्भमुक्ताफललुब्धैः शबरसेनापतिभिरभिहन्यमानकेसरिशता प्रेताधिपनगरीव सदासंनिहितमृत्युभीषणा महिषाधिष्ठिता च समरोद्यतपताकिनीव बाणासनारोपितशिलीमुखा विमुक्तसिंहनादा च कात्यायनीव प्रचलितखड्गभीषणा रक्तचन्दनालङ्कृता च कर्णीसुतकथेव संनिहितविपुलाचला शशोपगता च कल्पान्तप्रदोषसन्ध्येव प्रनृत्तनीलकण्ठा पल्लवारुणा चामृतमथनवेलेव श्रीद्रुमोपशोभिता वारुणीपरिगता च प्रावृडिव घनश्यामलानेकशतह्रदालङ्कृता च चन्द्रमूर्तिरिव सततमृक्षसार्थानुगता हरिणाध्यासिता च राज्यस्थितिरिव चमरमृगवालव्यजनोपशोभिता समदगजघटापरिपालिता च गिरितनयेव स्थाणुसङ्गता मृगपतिसेविता च जानकीव प्रसूतकुशलवा निशाचरपरिगृहीता च कामिनीव चन्दनमृगमदपरिमलवाहिनी रुचिरागुरुतिलकभूषिता च सोत्कण्ठेव विविधपल्लवानिलवीजिता समदना च बालग्रीवेव व्याघ्रनखपङ्क्तिमण्डिता गण्डकाभरणा च पानभूमिरिव प्रकटितमधुकोशकशता प्रकीर्णविविध-

ताभयोऽपि मृत्युफलदायी, सप्रस्थोऽप्यपरिमाणः, सनदोऽपि निःशब्दः, भीमोऽपि कीचकसुहृत, पिहिताम्बरोऽप्युल्लसदंशुको विन्ध्यो नाम महागिरिरदृश्यत ।
(V P. 13. l. 18–V. P. 14. l. 21.)

क्रमेण च जाङ्गलकवलाभिलाषमिलितनिःशङ्कशकुनिकुलसङ्कुलेन अर्धदग्धचिताचक्रसिमिसिमायमानविकटकटतृष्णाचटुलकटपूतनोत्तालवेतालरवभीषणेन, शूलशिखरारोपितशङ्कितवर्णकर्णनासिकाच्छेदरुधिरपटलपतितभाङ्कारिभम्भरालीसम्भारभरितभूमिभागबीभत्सेन, कटाग्निदह्यमानपटुचटत्कृकरोटिटङ्कारभैरवरवेण, शूलपाणिनेव कपालबलिभस्मशिवावह्निभूतिभुजगावरुद्धदेहेन, पुरुषातिशयेनेवानेकमण्डलकृतसेवेन श्मशानवाटेन गत्वा निमेषमात्रादिवानेकशतयोजनं, प्रलयकालवेलामिव समुदितार्कसमूहां, नागराज्यस्थितिमिवानन्तमूलां, सुधर्मामिव स्वच्छन्दस्थितकौशिकां, सत्पुरुषसेवामिव श्रीफलाढ्यां, भारतसमरभूमिमिव दूरप्ररूढार्जुनां, पुलोमकुलस्थितिमिव सहस्रनेत्रोचितेन्द्राणिकां, शूरपालचित्तवृत्तिमिव कलितगणिकारिकां, सज्जनसम्पदमिव विकसिताशोकसरलपुन्नागां, शिशुजनलीलामिव कृतधात्रीधृतिं क्वचिद्राघवचित्तवृत्तिमिव वैदेहीमयीं, क्वचित्क्षीरसमुद्रमथनवेलामिवोज्जृम्भमाणामृतां, क्वचिन्नारायणशक्तिमिव स्वच्छन्दापराजितां, क्वचिद्वाकुसुमा च क्वचित्प्रलयवेलेव महावराहदंष्ट्रासमुत्खातधरणिमण्डला क्वचिद्दशमुखनगरीव चटुलवानरवृन्दभज्यमानतुङ्गशालाकुला क्वचिदचिरनिर्वृत्तविवाहभूमिरिव हरितकुशसमित्कुसुमशमीपलाशशोभिता क्वचिदुद्वृत्तमृगपतिनादभीतेव कण्टकिता क्वचिन्मत्तेव कोकिलकुलप्रलापिनी क्वचिदुन्मत्तेव वायुवेगकृततालशब्दा क्वचिद्विधवेवोन्मुक्ततालपत्रा क्वचित्समरभूमिरिव शरशतनिचिता क्वचिदमरपतितनुरिव नेत्रसहस्रसङ्कुला क्वचित्पार्थरथपताकेव वानराक्रान्ता क्वचिदवनिपतिद्वारभूमिरिव नेत्रलताशतदुष्प्रवेशा क्वचिदस्वरश्रीरिव व्याधानुगम्यमानतरलतारकमृगा क्वचिद्गृहीतव्रतेव दर्भचीरजटावल्कलधारिण्यपरिमितबहुलपत्रसंचयापि सप्तपर्णभूषिता क्रूरसत्त्वापि मुनिजनसेविता पुष्पवत्यपि पवित्रा विन्ध्याटवी नाम ।
(K. P. 19. l 1–K P. 20 l. 15)

ल्मीकिसरस्वतीमिव दर्शितेक्ष्वाकुवंशां, लङ्कामिव बहुपलाशशोभितां, धार्तराष्ट्रसेनामिवार्जुनशरनिकरपरिवारितां, नारायणमूर्तिमिव बहुरूपां, सुग्रीवसेनामिव पनसचन्दननलकुमुदसेवितां, क्वचिद् विधवामिव सिन्दूरतिलकभूषितां प्रवालाभरणां च, क्वचित्कुरुसेनामिवोलूकद्रोणशकुनिसनाथां धार्तराष्ट्रान्वितां च, अम्लानजातिविभूषितामपि विरुद्धवंशां, दर्शिताभयामपि भीषणां, सततहितपथ्यामपि प्रवृद्धगुल्मां, षट्पदव्याप्तामपि द्विपदानाकुलां, द्विजकुलभूषितामपि अकुलीनवंशां विन्ध्याटवीं विवेश ।

(V. P. 39. l. 17–V. P. 41. l. 2.)

37 किं न कृतः शरणेच्छुरभय इति बहुविधं विलपन्दक्षिणेन काननं निर्गत्य नव्यनलनलदनलिनीनिचुलपिचुलविड्डदबहुलेन, प्रचुरचिरिबिल्वबिल्वोटजकुटजरुद्धोपकण्ठेन, सोत्कण्ठभृङ्गराजरसितसुन्दरसुन्दरीवनेन, विततवेत्रव्रततिव्रातावरणतरुणवरुणतरुस्कन्धसमुन्नद्धभृङ्गगोलकेन, गोलाङ्गूलभग्नगलन्मधुपटलरसासारसिक्ततरुतलेन, तालहिन्तालपूगपुन्नागनागकेसरघनेन, घनसारमल्लिकाकेतककोविदारमन्दारबीजपूरकजम्बीरजम्बूगुल्मगहनेन, प्रत्यूहदात्यूहव्यूहकुहरितभरितनदीनलनिकुञ्जेन, पुञ्जिताकुण्ठकण्ठकलकण्ठाध्यासितोद्दामसहकारपल्लवेन, चपलकुलायकुक्कुटकुटुम्बसंवाहितोत्कटविकटेन, कोरकनिकुरुम्बरोमाञ्चितकुरबकराजिना, रक्ताशोकपल्लवलावण्यविलिप्यमानदशदिशा,

अथ क्रमेण गच्छत एव तस्य अनवकेशिनः कुड्मलितकर्णिकाराः प्रचुरचम्पकाः स्फीतफलेग्रहयः फलभरभरितनमेरवः नीलदलनलदनारिकेलनिकराः हरिकेसरसरलपरिकराः कोरकनिकुरुम्बरोमाञ्चितकुरबकराजयः रक्ताशोकपल्लवलावण्यलिप्यमानदशदिशः, प्रविकसितकेसररजोविसरबध्यमानचारुधूसरिमाणः स्वरजःसिकतिलतिलकतालाः, प्रविचलितहिङ्गवः, प्रचूरपूगफलाः, प्रसवपूगपिङ्गलप्रियङ्गवः परागपिञ्जरितमञ्जरीपुञ्जायमानमधुपमञ्जुशिञ्जाजनितजनमुदः, मदमलमेचकितमुचुकुन्दस्कन्धकाण्डकष्यमाननिःशङ्ककरिकरटकण्डूतयः, उड्डीयमाननिःशङ्कचटुलकृष्णसारशावसकलशाद्वलसुभगभूमयः, तमःकालतमतमालमालामीलितातपाः, स्तबकदन्तुरितदेवदारवः, तरलताम्बूलीस्त-

प्रविकसितकेसररजोविसरवर्धमानवासरधूसरिमभारेण, परागपिञ्जरमञ्जरीयुज्यमानमधुपमञ्जुशिञ्जितजनितजनमुदा, मदजलमेचकितमुचुकुन्दस्कन्धकाण्डमथ्यमाननिःशङ्ककरिकटकण्डूतिना, कतिपयदिवसप्रसूतकुक्कुटीकृतकुटजकोटरेण, चटकसञ्चार्यमाणचतुरवाचाटचाटकैरक्रियमाणचाटुना, सहचरीचारणचञ्चुरचकोरचुञ्चुना, शैलेयसुकुमारशिलातलसुखशयितशशशिशुना, शेफालिकाशिफाविवरविस्रब्धवर्तमानगौधेरराशिना निरातङ्करङ्कुणा, निराकुलनकुलकेलिना, कलकोकिलकुलकवलितसहकारकलिकोद्गमेन, सहकारारामरोमन्थायमानचमरयूथेन, श्रवणहारिसनीडगिरिनितम्बनिर्झरनिनादनिद्रानन्दमन्दायमानकरिकुलकर्णतालदुन्दुभिना, समासन्नकिन्नरीगीतरवरममाणरुरुविसरेण, क्षतहरितहरिद्राद्रवरज्यमानवराहपोतपोत्रपालिना, गुञ्जापुञ्जगुञ्जज्जाहकजातेन दशनकुपितकपिपोतपुटकपाटितपाटलकीटपुटसङ्कटेन, कुलिशशिखरखरनखरप्रचयप्रचण्डचपेटपाटितमत्तमातङ्गरक्तच्छटाच्छुरितचारुकेसरभासुरकेसरीकदम्बकेन महासागरकच्छप्रान्तेन कतिपयदूरं गत्वा...... ।

(V. P. 43. l. 20–V. P. 45. l 5)

स्ववजालकितजम्बूजम्बीरवीथयः, कुसुमरजोधवलधूलीकदम्बचक्रचुम्बितव्योमानः, बहलमधुमोक्षोक्षितक्षितयः, परिमलघटितघनघ्राणतृप्तयः, कतिपयदिवससूतकुक्कुटीकुटीकृतकुटजकोटराः, चटकासञ्चार्यमाणवाचाटचाटकैरक्रियमाणचाटवः, सहचरीचारणचञ्चुरचकोरचञ्चवः, निर्भयभूरिभुरुण्डभुज्यमानपाककपिलपीलवः, सदाफलकट्फलफलविशसननिःशूकशुकशकुन्तशातितशलाटवः, शैलेयसुकुमारशिलातलसुखशयितशशशिशवः, शेफालिकाशिफाविवरविस्रब्धवर्तमानगौधेरराशयः, निरातङ्करङ्कवः, निराकुलनकुलकुलकेलयः, कलकोकिलकुलकवलितकलिकोद्गमाः, सहकारारामरोमन्थायमानचमरयूथाः, यथासुखनिषण्णनीलाण्डजमण्डलाः, निर्विकारवृकविलोक्यमानपोतपीतगवयधेनवः, श्रवणहारिसनीडगिरिनितम्बनिर्झरनिनादनिद्रानन्दमन्दायमानकरिकुलकर्णतालदुन्दुभयः, समासन्नकिन्नरीगीतरवरसमानरुरवः, प्रमुदिततरतरक्षवः, क्षतहरितहरिद्राद्रवरज्यमाननववराहपोतपोत्रवलयः, गुञ्जाकुञ्जगुञ्जज्जाहकाः, जातीफलकसुप्तशालिजातकवलयः, दशनकुपितकपिपोतपेटकपाटितपाटलमुखकीटपुटकाः, ...पुरस्ताद्दर्शनपथमवतेरुस्तरवः ।

(H. P. 234. l. 1–H. P. 235. l. 13)

38 तथाहि । गुरुदारहरणं द्विजराजोऽकरोत् । पुरूरवा ब्राह्मणधनतृष्णया विननाश । नहुषः परकलत्रदोहदी महाभुजग आसीत् । ययातिराहितपाणिग्रहणः पपात । सुद्युम्नः स्त्रीमय इवाभवत् । सोमस्य प्रख्याता जन्तुवधनिर्घृणता । पुरुकुत्सः कुत्सित इवासीत् । कुवलायाश्वो नाश्वतरकन्यामपि परिजहार । नृगः कृकलासतामगमत् । नलं कलिरभिभूतवान् । संवरणो मित्रदुहितरि विक्लवतामगात् । दशरथ इष्टरामोन्मादेन मृत्युमवाप । कार्तवीर्यो गोब्राह्मणपीडया पञ्चत्वमयासीत् । मनुः सुवर्णव्यसनी ननाश । शन्तनुरतिव्यसनाद्विपिने विललाप । युधिष्ठिरः समरशिरसि सत्यमुत्ससर्ज । नास्त्यकलङ्कः कोऽपि प्रायः ।

(V. P. 46. l. 14–V. P. 47. l. 4)

'तात बाण द्विजानां राजा गुरुदारग्रहणमकार्षीत् । पुरूरवा ब्राह्मणधनतृष्णया दयितेनायुषा व्ययुज्यत । नहुषः परकलत्राभिलाषी महाभुजङ्ग आसीत् । ययातिराहितब्राह्मणीपाणिग्रहणः पपात । सुद्युम्नः स्त्रीमय एवाभवत् । सोमकस्य प्रख्याता जगति जन्तुवधनिर्घृणता । मान्धाता मार्गणव्यसनेन सपुत्रपौत्रो रसातलमगात् । पुरुकुत्सः कुत्सितं कर्म तपस्यन्नपि मेकलकन्यकायामकरोत् । कुवलयाश्वो भुजङ्गलोकपरिग्रहादश्वतरकन्यामपि न परिजहार । पृथुः प्रथमपुरुषकः परिभूतवान्पृथिवीम् । नृगस्य कृकलासभावेऽपि वर्णसंकरः समदृश्यत । सौदासेन नरक्षिता पर्याकुलीकृता क्षितिः । नलमवशाक्षहृदयं कलिरभिभूतवान् । संवरणो मित्रदुहितरि विक्लवतामगात् । दशरथ इष्टरामोन्मादेन मृत्युमवाप । कार्तवीर्यो गोब्राह्मणातिपीडनेन निधनमयासीत् । मरुत्तः इष्टबहुसुवर्णकोऽपि देवद्विजबहुमतो न बभूव । शन्तनुरतिव्यसनादेकाकी वियुक्तो वाहिन्या विपिने विललाप । पाण्डुर्वनमध्यगतो मत्स्य इव मदनरसाविष्टः प्राणान्मुमोच । युधिष्ठिरो गुरुभयविषण्णहृदयः समरशिरसि सत्यमुत्सृष्टवान् । इत्थं नास्ति राजत्वमपकलङ्कमृते देवदेवादमुतः सर्वद्वीपभुजो हर्षात् ।

(H. P. 87 l. 9–H. P. 90. l. 5)

39 सुनृपमिव सज्ञनक्रमकरं...जलनिधिमपश्यत् ।

V. P. 46. l. 6

क्लेशबहुलमपि तपःकरणमिव क्रमकारिणं कल्याणानां...कटकं जगाम ।

H. P. 213. l. 11

40 आपीतहरितैः कृष्णासु केदारिकाकोष्ठिकासु समुत्फलद्भिर्जातुशबलैरिव दर्दुरैर्वियुता समं चिक्रीड वर्षाकालः ।

V. P. 48. l. 17

कृतकालसंनिधानामिवान्धकारितललाटपट्टाष्टापदाम् ।

H. P. 9. l. 13

41 आर्य कन्दर्पकेतो पुनरपि तव प्रियया सङ्गमो भविष्यतीत्यचिरेण । तद्विरम मरणव्यवसायादिति ।

V. P. 47. l. 20

वत्से महाश्वेते न परित्याज्यास्त्वया प्राणाः । पुनरपि तवानेन सह भविष्यति समागमः । K. P. 170. l. 11

अनन्तरं चान्तरिक्षे क्षरन्तीवामृतमशरीरिणी वागश्रूयत । वत्से महाश्वेते पुनरपि त्वं मयैव समाश्वासितव्या वर्तसे ।

K. P. 317. l. 16

42 त्यागिन इव दानवन्तो मार्गणसन्तापमसहन्तः महामृगाः उत्कुपिता इव क्ष्मां मुञ्चन्तस्तुरगा रेजुः ।

V. P. 52. l. 4

पार्थिवोऽपि गुणमयः करिणामिव दानवतामुपरि स्थितः H. P. 197. l. 8

43 शरतल्पशयो भीष्म इव चिराय श्वसन्नासीत् । V. P. 53. l. 2

बहुशरशयनसुप्तोत्थितोऽपि हसन्निव शान्तनवम् । H. P. 211. l. 4

44 अनन्तरमखञ्जखञ्जरीटे अकुञ्चितक्रौञ्चसञ्चारे, निर्भरभरद्वाजद्विजवाचाटविटपे, पात्रभ्रान्तशुककलमकेदारे प्रवेशितावेशिकराजहंसे, कंसारिदेहद्युतिद्युतले, हंसतूलतुलितराजजलमुचि, सान्द्रीकृतेन्दुमहाकामुकमुदि, मधुरमधुतृणवीरुधि सरससारसरसितसारकासारे कशेरुकन्दलुब्धपोत्रिपोतपौत्रोत्खाततटतडागसञ्चरन्माषपुत्रिकापत्रीपटलमधुरसाध्वनिविहितमुदि कदर्थितकदम्बे कम्बुद्विषि प्रसृतविसप्रसूने, चकितचातके, विरलवारिदे, तारतरतारके,

अथ कदाचिद्विरलितबलाहके, चातकातङ्ककारिणि क्वणत्कादम्बे, दर्दुरद्विषि, मयूरमदमुषि, हंसपथिकसार्थसर्वातिथौ, धौतासिनिभनभसि, भास्वरभास्वति, शुचिशशिनि, तरुणतारागणे, गलत्सुनासीरशरासने, सीदत्सौदामिनीदाम्नि, दामोदरनिद्राद्रुहि, द्रुतवदूर्यवर्णार्णसि, घूर्णमानमिहिकालघुमेघमोघमघवति, निमीलन्नीपे, निष्कुसुमकुटजे, निर्मुकुलकन्दले, कोमलकमले, मधुस्यन्दीन्दीवरे, कह्लाराह्लादिनि, शेफालिकाशीतलीकृतनिशे, यूथिकामोदिनि, मोदमानकुमुदावदातदशदिशि, सप्तच्छदधूलिधूसरित-

वारुणीचारुचन्द्रमसि, स्वादुरससलिले, स्फुरितशफरतकुबकोटे, घूकमण्डूकमण्डले सङ्कोचितकञ्चुकिनि, काञ्चनच्छेदगौरशालिनि, क्रोशदुत्क्रोशे सुरभिगन्धिसौगन्धिकगन्धहारिहरिणाश्वे, कुमुदामोदिनि, कौमुदीकृतमुदि, निबर्हबर्हिणि, कूजत्कोयष्टिके, धृतधार्तराष्ट्रे, हृष्टकलमगोपिकागीतसुखितमृगयूथे, कथाकृतकिंशुके, स्लापितमालतीलतामुकुले, बन्धूकबान्धवे, सञ्जातकमुञ्जानके, विसूत्रितसौत्रामणधनुषि स्मेरकाश्मीररजःपिञ्जरितदिशि, विकस्वरसरे, शरत्समयारम्भे, कन्दर्पकेतुः...पुत्रिकां...हस्तेन पस्पर्श ।

V. P. 49. l. 8–V. P. 50 l. 7

समीरे, स्तवकितबन्धुरबन्धूकाबध्यमानाकाण्डसन्ध्ये, नीराजितवाजिनि, उद्दामदन्तिनि, दर्पक्षीबौक्षके, क्षीयमाणपङ्कचक्रवाले, बालपुलिनपल्लवितसिन्धुरोधसि, परिणामश्यानश्यामाके, जनितप्रियङ्गुमञ्जरीरजसि, कठोरितत्रपुसत्वचि, कुसुमस्मेरशरे शरत्समयारम्भे...बाणः...अगात् ।

H. P. 83. l. 5—H. P. 84. l 4

Appendix II

Index of Verses

Sanskrit Index

[The nos. refer to page and line in Vāsavadattā]

Corrections

(Nos. refer to page and line in Vāsavadattā)

	Incorrect	Correct
9 5	गगनचन्द्रमण्डल...	जघनचन्द्रमण्डल......
11.12	त्रिभुवनविलोचनसृष्टिमिव	त्रिभुवनविलोभनसृष्टिमिव
17.12	निष्यन्दकरणग्रामः	निष्पन्दकरणग्रामः
18.4	मर्मभेदिनापि	अमर्मभेदिनापि
22.11	इवाबद्धतुहीनः	इवाबद्धतुहिनः
23.6	पाटलिपुष्पमदश्यत ।	पाटलिपुष्पमदृश्यत ।
27.21	पत्रिकामुपानयत ।	पत्रिकामुपानयत् ।
27.22	स्वयमवाचयत ।	स्वयमवाचयत् ।
29.15	समावासितकुक्कटेषु	समावासितकुक्कुटेषु
29.16	सङ्कोचो......कुठीरशायिनि	सङ्कोचो......कुटीरशायिनि